हिन्दी का भौगोलिक विस्तार

(Geographical Spread of Hindi)

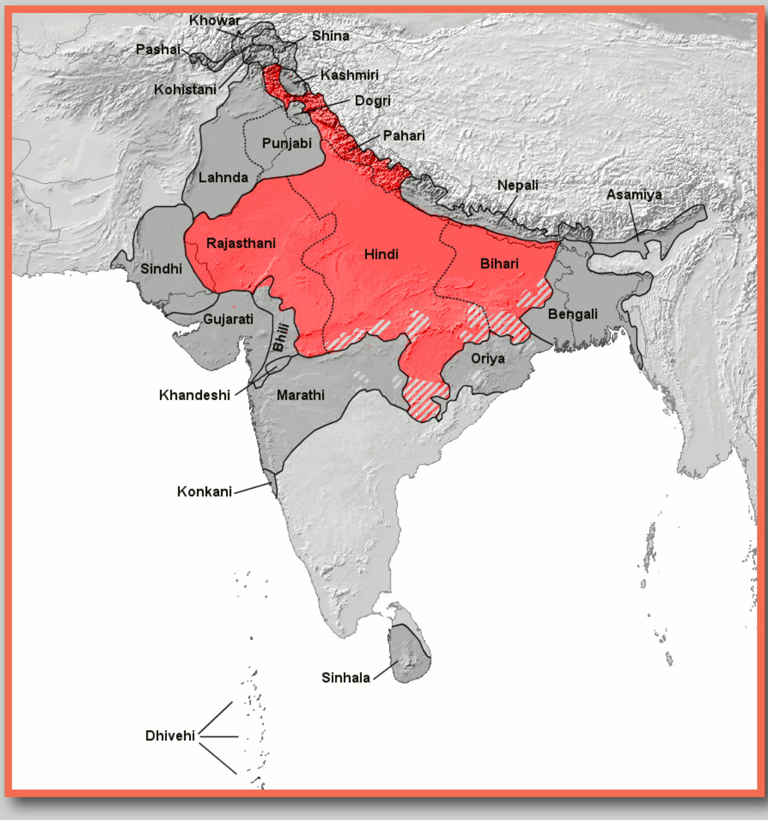

सुनंदा पाल

हिन्दी का भौगोलिक विस्तार

हिन्दी का भौगोलिक विस्तार
(Geographical Spread of Hindi)

सुनंदा पाल

भाषा प्रकाशन
नई दिल्ली – 110002

© प्रकाशक

I.S.B.N. : 978-81-323-5581-6

प्रथम संस्करण : 2021

भाषा प्रकाशन

22, प्रकाशदीप बिल्डिंग, अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली - 110002

द्वारा वर्ल्ड टेक्नोलॉजीज नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित

प्रस्तावना

विश्वभाषा बनने के सभी गुण हिन्दी में विद्यमान हैं। बीसवीं शती के अंतिम दो दशकों में हिन्दी का अंतर्राष्ट्रीय विकास बहुत तेजी से हुआ है। हिंदी एशिया के व्यापारिक जगत् में धीरे-धीरे अपना स्वरूप बिंबित कर भविष्य की अग्रणी भाषा के रूप में स्वयं को स्थापित कर रही है। वेब, विज्ञापन, संगीत, सिनेमा और बाजार के क्षेत्र में हिन्दी की मांग जिस तेजी से बढ़ी है, वैसी किसी और भाषा में नहीं। विश्व के लगभग 150 विश्वविद्यालयों तथा सैकड़ों छोटे-बड़े केंद्रों में विश्वविद्यालय स्तर से लेकर शोध स्तर तक हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था हुई है। विदेशों में 25 से अधिक पत्र-पत्रिकाएं लगभग नियमित रूप से हिन्दी में प्रकाशित हो रही हैं। यूएई के 'हम एफ-एम' सहित अनेक देश हिन्दी कार्यक्रम प्रसारित कर रहे हैं, जिनमें बीबीसी, जर्मनी के डॉयचे वेले, जापान के एनएचके वर्ल्ड और चीन के चाइना रेडियो इंटरनेशनल की हिन्दी सेवा विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

दिसम्बर 2016 में विश्व आर्थिक मंच ने 10 सर्वाधिक शक्तिशाली भाषाओं की जो सूची जारी की है, उसमें हिन्दी भी एक है। इसी प्रकार 'कोर लैंग्वेजेज' नामक साइट ने 'दस सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भाषाओं' में हिन्दी को स्थान दिया था। के-इण्टरनेशनल ने वर्ष 2017 के लिये सीखने योग्य सर्वाधिक उपयुक्त नौ भाषाओं में हिन्दी को स्थान दिया।

हिन्दी को एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्थापित करने और विश्व हिन्दी सम्मेलनों के आयोजन को संस्थागत व्यवस्था प्रदान करने के उद्देश्य से 11 फरवरी 2008 को विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना की गयी थी। संयुक्त राष्ट्र रेडियो ने अपना प्रसारण हिन्दी में भी करना आरम्भ किया है। हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा बनाये जाने के लिए भारत सरकार प्रयत्नशील है। अगस्त 2018 से संयुक्त राष्ट्र ने साप्ताहिक हिन्दी समाचार बुलेटिन आरम्भ किया है।

पुस्तक लेखन में कई लिखित व अलिखित स्रोतों से मदद ली गई है, मैं उन सभी विज्ञ लेखकों के प्रति अपना आभार प्रकट करती हूँ। आशा करती हूँ कि पुस्तक पाठकों के लिए उपयोगी होगी।

–लेखिका

अनुक्रम

	प्रस्तावना	*v*
1.	**हिन्दी**	**1**
	लिपि	2
	'हिंदी' शब्द की व्युत्पत्ति	2
	हिन्दी एवं उर्दू	3
	हिन्दी की बोलियाँ	6
	ध्यातव्य	8
	विदेशी ध्वनियाँ	9
	राष्ट्रभाषा	11
	हिन्दी और कम्प्यूटर	11
	हिन्दी और जनसंचार	12
	हिन्दी का वैश्विक प्रसार	13
	हिन्दी साहित्य का इतिहास	14
	हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन का इतिहास	15
	भक्तिकाल (1375 से 1700 ई.)	18
	रीतिकाल (1700 से 1900 ई.)	19
	आधुनिक काल (1900 से अब तक)	20
	बीसवीं शताब्दी	22

हिन्दी भाषा–क्षेत्र, स्वरूप तथा विकास 25
भाषा-क्षेत्र के सम्भावित भेद–प्रभेदों 31
मैथिली 38
छत्तीसगढ़ी एवं भोजपुरी 38
राजस्थानी 40
हिन्दी भाषा–क्षेत्र एवं मंदारिन भाषा–क्षेत्र 46
हिन्दी भाषा का स्वरूप एवं विकास: दशा और दिशा 47
भारतीय संस्कृति का स्वरूप एवं भाषा–प्रयोग 48
प्रजातंत्र एवं लोकतंत्र में हिन्दी भाषा का स्वरूप 49
संस्कृत भाषा तथा हिन्दी भाषा 52
अंग्रेजी में भारतीय भाषाओं के शब्दों का प्रयोग 59
हिन्दी भाषा की प्रकृति के अनुरूप वाक्य रचना 60
केन्द्रीय हिन्दी संस्थान एवं हिन्दी सूचना एवं प्रौद्योगिकी 63
फॉन्ट 65
ऑपरेटिंग सिस्टम में हिन्दी 65
2. हिन्दी का वैश्विक स्वरूप 71
3. हिन्दी व्याकरण 74
वर्ण विचार 74
शब्द 81
सर्वनाम 82
सर्वनाम के भेद 82
पुरुषवाचक सर्वनाम 83
निश्चयवाचक सर्वनाम 83
अनिश्चयवाचक सर्वनाम 84
सर्वनाम शब्दों के विशेष प्रयोग 85
समुच्चय बोधक 87
विस्मयादि बोधक 87
अठारहवीं शताब्दी के हिन्दी व्याकरण 92
बीसवीं शताब्दी के हिन्दी व्याकरण 95
तुलनात्मक व्याकरण 97
भाषा शास्त्रीय अध्ययन 98

4.	**हिन्दी दिवस**	**100**
	इतिहास	100
	हिन्दी दिवस की शुरुआत (1949 से 1950)	101
	भारत की राजभाषा नीति (1950 से 1965)	102
	अंग्रेजी का विरोध (1965 से 1967)	103
	वर्ष 1990 व उसके बाद	103
	राष्ट्रभाषा सप्ताह	105
5.	**विश्व हिन्दी सम्मेलन**	**108**
	इतिहास	109
	प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन	112
6.	**भारत की राजभाषा के रूप में हिन्दी**	**119**
	अनुच्छेद 343 संघ की राजभाषा	120
	अनुच्छेद 351 हिंदी भाषा के विकास के लिए निर्देश	121
	राजभाषा संकल्प, 1968	121
	नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति	123
	राजभाषा हिन्दी की विकास-यात्रा	124
	स्वतंत्रता के बाद	125
7.	**हिन्दी की विभिन्न बोलियाँ और उनका साहित्य**	**135**
	पश्चिमी और पूर्वी हिन्दी	136
	पश्चिमी हिन्दी	136
	पूर्वी हिन्दी	136
	प्रयोग-क्षेत्र के अनुसार वर्गीकरण	138
	हिन्दी प्रदेशों की हिन्दी बोलियाँ	139
8.	**हिन्दी-प्रसार आन्दोलन**	**141**
	प्रमुख व्यक्तियों के योगदान	142
	महात्मा गांधी	144
	राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन	145
	काका कालेलकर	147
	सेठ गोविन्ददास	147
	प्रमुख संस्थाओं का योगदान	148

धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाएँ 148
आर्य समाज 150
सनातन धर्म सभा 151
थियोसोफिकल सोसाइटी 152
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास 155
9. अमेरिका में हिंदी प्रचार 157
10. हिंदी भाषा की उत्पत्ति / पूर्ववर्ती काल 162
आदिम आर्यों का स्थान 164
मीडिक भाषा 167

1

हिन्दी

हिन्दी विश्व की एक प्रमुख भाषा है यह हिंदुस्तानी भाषा की एक मानकीकृत रूप है, जिसमें संस्कृत के तत्सम तथा तद्भव शब्दों का प्रयोग अधिक है और अरबी-फारसी शब्द कम हैं। हिंदी संवैधानिक रूप से भारत की राजभाषा और भारत की सबसे अधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा है। हालांकि, हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा नहीं है, क्योंकि भारत के संविधान में किसी भी भाषा को ऐसा दर्जा नहीं दिया गया था। चीनी के बाद यह विश्व में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा भी है। किन्तु एथनॉलोग के अनुसार हिन्दी विश्व की तीसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। विश्व आर्थिक मंच की गणना के अनुसार यह विश्व की दस शक्तिशाली भाषाओं में से एक है।

हिन्दी और इसकी बोलियाँ सम्पूर्ण भारत के विविध राज्यों में बोली जाती हैं। भारत और अन्य देशों में भी लोग हिंदी बोलते, पढ़ते और लिखते हैं। फिजी, मॉरिशस, गयाना, सूरीनाम, नेपाल और संयुक्त अरब अमीरात की जनता भी हिन्दी बोलती है। फरवरी 2019 में अबू धाबी में हिन्दी को न्यायालय की तीसरी भाषा के रूप में मान्यता मिली।

2001 की भारतीय जनगणना में भारत में 42 करोड़ 20 लाख लोगों ने हिन्दी को अपनी मूल भाषा बताया। भारत के बाहर, हिंदी बोलने वाले संयुक्त राज्य अमेरिका में 8, 63, 077, मॉरीशस में 6, 85, 170, दक्षिण अफ्रीका में 8, 90, 292, यमन में 2, 32, 760, युगांडा में 1, 47, 000, सिंगापुर में 5,

000, नेपाल में 8 लाख, जर्मनी में 30, 000 हैं। न्यूजीलैंड में हिंदी चौथी सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा है।

इसके अलावा भारत, पाकिस्तान और अन्य देशों में 14 करोड़ 10 लाख लोगों द्वारा बोली जाने वाली उर्दू, मौखिक रूप से हिन्दी के काफी समान है। एक विशाल संख्या में लोग हिंदी और उर्दू दोनों को ही समझते हैं। भारत में हिन्दी, विभिन्न भारतीय राज्यों की 14 आधिकारिक भाषाओं और क्षेत्र की बोलियों का उपयोग करने वाले लगभग 1 अरब लोगों में से अधिकांश की दूसरी भाषा है।

हिन्दी भारत में सम्पर्क भाषा का कार्य करती है और कुछ हद तक पूरे भारत में आमतौर पर एक सरल रूप में समझी जानेवाली भाषा है। हिन्दी का कभी-कभी नौ भारतीय राज्यों के संदर्भ में भी उपयोग किया जाता है, जिनकी आधिकारिक भाषा हिंदी है और हिन्दी भाषी बहुमत है, अर्थात् बिहार, छत्तीसगढ़, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली का।

'देशी', 'भाखा' (भाषा), 'देशना वचन' (विद्यापति), 'हिंदवी', 'दक्खिनी', 'रेखता', 'आर्यभाषा' (दयानन्द सरस्वती), 'हिंदुस्तानी', 'खड़ी बोली', 'भारती' आदि हिंदी के अन्य नाम हैं, जो विभिन्न ऐतिहासिक कालखण्डों में एवं विभिन्न संदर्भों में प्रयुक्त हुए हैं।

लिपि

हिन्दी को देवनागरी लिपि में लिखा जाता है। इसे नागरी नाम से भी पुकारा जाता है। देवनागरी में 11 स्वर और 33 व्यंजन हैं और अनुस्वार, अनुनासिक एवं विसर्ग होता है तथा इसे बायें से दाईं ओर लिखा जाता है।

'हिंदी' शब्द की व्युत्पत्ति

हिन्दी शब्द का सम्बंध संस्कृत शब्द सिंधु से माना जाता है। 'सिंधु' सिंध नदी को कहते थे और उसी आधार पर उसके आस-पास की भूमि को सिन्धु कहने लगे। यह सिंधु शब्द ईरानी में जाकर 'हिंदू', हिंदी और फिर 'हिंद' हो गया। बाद में ईरानी धीरे-धीरे भारत के अधिक भागों से परिचित होते गए और इस शब्द के अर्थ में विस्तार होता गया तथा हिंद शब्द पूरे भारत का वाचक हो गया। इसी में ईरानी का ईक प्रत्यय लगने से (हिन्द्ईक) 'हिंदीक' बना जिसका

अर्थ है 'हिन्द का'। यूनानी शब्द 'इन्दिका' या अंग्रेजी शब्द 'इंडिया' आदि इस 'हिंदीक' के ही विकसित रूप हैं। हिंदी भाषा के लिए इस शब्द का प्राचीनतम प्रयोग शरफुद्दीन यज्दी के 'जफरनामा'(1424) में मिलता है।

प्रोफेसर **महावीर सरन जैन** ने अपने ' हिंदी एवं उर्दू का अद्वैत ' शीर्षक आलेख में हिंदी की व्युत्पत्ति पर विचार करते हुए कहा है कि ईरान की प्राचीन भाषा अवेस्ता में 'स' ध्वनि नहीं बोली जाती थी। 'स' को 'ह' रूप में बोला जाता था। जैसे संस्कृत के 'असुर' शब्द को वहाँ 'अहुर' कहा जाता था। अफगानिस्तान के बाद सिंधु नदी के इस पार हिंदुस्तान के पूरे इलाके को प्राचीन फारसी साहित्य में भी 'हिंद', 'हिंदुश' के नामों से पुकारा गया है तथा यहाँ की किसी भी वस्तु, भाषा, विचार को 'एडजेक्टिव' के रूप में 'हिन्दीक' कहा गया है, जिसका मतलब है 'हिन्द का'। यही 'हिन्दीक' शब्द अरबी से होता हुआ ग्रीक में 'इन्दिके', 'इन्दिका', लैटिन में 'इन्दिया' तथा अंग्रेजी में 'इण्डिया' बन गया। अरबी एवं फारसी साहित्य में भारत (हिंद) में बोली जाने वाली भाषाओं के लिए 'जबान-ए-हिन्दी', पद का उपयोग हुआ है। भारत आने के बाद अरबी-फारसी बोलने वालों ने 'जबान-ए-हिंदी', 'हिंदी जबान' अथवा 'हिंदी' का प्रयोग दिल्ली-आगरा के चारों ओर बोली जाने वाली भाषा के अर्थ में किया। भारत के गैर-मुस्लिम लोग तो इस क्षेत्र में बोले जाने वाले भाषा-रूप को 'भाखा' नाम से पुकारते थे, 'हिंदी' नाम से नहीं।

हिन्दी एवं उर्दू

भाषाविद् हिन्दी एवं उर्दू को एक ही भाषा समझते है। हिन्दी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है और शब्दावली के स्तर पर अधिकांशत: संस्कृत के शब्दों का प्रयोग करती है। उर्दू, फारसी लिपि में लिखी जाती है और शब्दावली के स्तर पर उस पर फारसी और अरबी भाषाओं का प्रभाव अधिक है। व्याकरणिक रूप से उर्दू और हिन्दी में लगभग कुछ प्रतिशत समानता है। केवल कुछ विशेष क्षेत्रों में शब्दावली के स्रोत में अंतर होता है। कुछ विशेष ध्वनियाँ उर्दू में अरबी और फारसी से ली गयी हैं और इसी प्रकार फारसी और अरबी की कुछ विशेष व्याकरणिक संरचना भी प्रयोग की जाती है। उर्दू और हिन्दी को खड़ी बोली की दो शैलियाँ कहा जा सकता है। हम हिन्दी ंऔर उर्दू को माँ और मौसी कहते हैं।

परिवार

हिन्दी यूरोपीय भाषा-परिवार परिवार के अन्दर आती है। ये हिन्द ईरानी शाखा की हिन्द आर्य उपशाखा के अन्तर्गत वर्गीकृत है। हिन्द-आर्य भाषाएँ वो भाषाएँ हैं, जो संस्कृत से उत्पन्न हुई हैं। उर्दू, कश्मीरी, बंगाली, उड़िया, पंजाबी, रोमानी, मराठी नेपाली जैसी भाषाएँ भी हिन्द-आर्य भाषाएँ हैं।

इतिहास क्रम

हिन्दी भाषा का इतिहास लगभग एक हजार वर्ष पुराना माना गया है। हिन्दी भाषा व साहित्य के जानकार अपभ्रंश की अंतिम अवस्था 'अवहट्ठ' से हिन्दी का उद्भव स्वीकार करते हैं। **चंद्रधर शर्मा गुलेरी** ने इसी अवहट्ठ को 'पुरानी हिन्दी' नाम दिया।

अपभ्रंश की समाप्ति और आधुनिक भारतीय भाषाओं के जन्मकाल के समय को संक्रांतिकाल कहा जा सकता है। हिन्दी का स्वरूप शौरसेनी और अर्धमागधी अपभ्रंशों से विकसित हुआ है। 1000 ई. के आसपास इसकी स्वतंत्र सत्ता का परिचय मिलने लगा था, जब अपभ्रंश भाषाएँ साहित्यिक संदर्भों में प्रयोग में आ रही थीं। यही भाषाएँ बाद में विकसित होकर आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के रूप में अभिहित हुईं। अपभ्रंश का जो भी कथ्य रूप था - वही आधुनिक बोलियों में विकसित हुआ।

अपभ्रंश के सम्बंध में 'देशी' शब्द की भी बहुधा चर्चा की जाती है। वास्तव में 'देशी' से देशी शब्द एवं देशी भाषा दोनों का बोध होता है। प्रश्न यह कि देशीय शब्द किस भाषा के थे ? **भरत मुनि** ने नाट्यशास्त्र में उन शब्दों को 'देशी' कहा है जो संस्कृत के तत्सम एवं तद्भव रूपों से भिन्न है। ये 'देशी' शब्द जनभाषा के प्रचलित शब्द थे, जो स्वभावतः अपभ्रंश में भी चले आए थे। जनभाषा व्याकरण के नियमों का अनुसरण नहीं करती, परंतु व्याकरण को जनभाषा की प्रवृत्तियों का विश्लेषण करना पड़ता है, प्राकृत-व्याकरणों ने संस्कृत के ढाँचे पर व्याकरण लिखे और संस्कृत को ही प्राकृत आदि की प्रकृति माना। अतः जो शब्द उनके नियमों की पकड़ में न आ सके, उनको देशी संज्ञा दी गई।

हिन्दी का मानकीकरण

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से हिन्दी और देवनागरी के मानकीकरण की दिशा में निम्नलिखित क्षेत्रों में प्रयास हुये हैं –

हिन्दी व्याकरण का मानकीकरण,

वर्तनी का मानकीकरण,

शिक्षा मंत्रालय के निर्देश पर केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा देवनागरी का मानकीकरण,

वैज्ञानिक ढंग से देवनागरी लिखने के लिये एकरूपता के प्रयास,

यूनिकोड का विकास।

हिन्दी की शैलियाँ

भाषाविदों के अनुसार हिन्दी के चार प्रमुख रूप या शैलियाँ हैं–

(1) उच्च हिन्दी–हिन्दी का मानकीकृत रूप, जिसकी लिपि देवनागरी है। इसमें संस्कृत भाषा के कई शब्द है, जिन्होंने फारसी और अरबी के कई शब्दों की जगह ले ली है। इसे शुद्ध हिन्दी भी कहते हैं। आजकल इसमें अंग्रेजी के भी कई शब्द आ गये हैं (खास तौर पर बोलचाल की भाषा में)। यह खड़ीबोली पर आधारित है, जो दिल्ली और उसके आस-पास के क्षेत्रों में बोली जाती थी।

(2) दक्खिनी–उर्दू-हिन्दी का वह रूप जो हैदराबाद और उसके आसपास की जगहों में बोला जाता है। इसमें फारसी-अरबी के शब्द उर्दू की अपेक्षा कम होते हैं।

(3) रेख्ता–उर्दू का वह रूप जो शायरी में प्रयुक्त होता था।

(4) उर्दू–हिन्दवी का वह रूप जो देवनागरी लिपि के बजाय फारसी-अरबी लिपि में लिखा जाता है। इसमें संस्कृत के शब्द कम होते हैं, और फारसी-अरबी के शब्द अधिक। यह भी खड़ीबोली पर ही आधारित है।

हिन्दी और उर्दू दोनों को मिलाकर हिन्दुस्तानी भाषा कहा जाता है। हिन्दुस्तानी मानकीकृत हिन्दी और मानकीकृत उर्दू के बोलचाल की भाषा है। इसमें शुद्ध संस्कृत और शुद्ध फारसी-अरबी दोनों के शब्द कम होते हैं और तद्भव शब्द अधिक। उच्च हिन्दी भारतीय संघ की राजभाषा है (अनुच्छेद 343, भारतीय संविधान)। यह इन भारतीय राज्यों की भी राजभाषा है–उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, मध्य प्रदेश, उत्तरांचल, हिमाचल प्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान, हरियाणा और दिल्ली। इन राज्यों के अतिरिक्त महाराष्ट्र, गुजरात, पश्चिम बंगाल, पंजाब और हिन्दी भाषी राज्यों से लगते अन्य राज्यों में भी हिन्दी बोलने वालों की अच्छी संख्या है। उर्दू पाकिस्तान की और भारतीय राज्य जम्मू और कश्मीर की राजभाषा है, इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश, बिहार, तेलंगाना और दिल्ली में

द्वितीय राजभाषा है। यह लगभग सभी ऐसे राज्यों की सह–राजभाषा है, जिनकी मुख्य राजभाषा हिन्दी है।

हिन्दी की बोलियाँ

हिन्दी का क्षेत्र विशाल है तथा हिन्दी की अनेक बोलियाँ (उप–भाषाएँ) हैं। इनमें से कुछ में अत्यंत उच्च श्रेणी के साहित्य की रचना भी हुई है। ऐसी बोलियों में ब्रजभाषा और अवधी प्रमुख हैं। ये बोलियाँ हिन्दी की विविधता हैं और उसकी शक्ति भी। वे हिन्दी की जड़ों को गहरा बनाती हैं। हिन्दी की बोलियाँ और उन बोलियों की उपबोलियाँ हैं, जो न केवल अपने में एक बड़ी परंपरा, इतिहास, सभ्यता को समेटे हुए हैं वरन् स्वतंत्रता संग्राम, जनसंघर्ष, वर्तमान के बाजारवाद के खिलाफ भी उनका रचना संसार सचेत है।

हिन्दी की बोलियों में प्रमुख हैं– अवधी, ब्रजभाषा, कन्नौजी, बुंदेली, बघेली, भोजपुरी, हरियाणवी, राजस्थानी, छत्तीसगढ़ी, मालवी, नागपुरी, खोरठा, पंचपरगनिया, कुमाउँनी, मगही आदि। किन्तु हिन्दी के मुख्य दो भेद हैं – पश्चिमी हिन्दी तथा पूर्वी हिन्दी।

शब्दावली

हिन्दी शब्दावली में मुख्यतः दो वर्ग हैं–

प्रथम वर्ग

तत्सम शब्द– ये वे शब्द हैं, जिनको संस्कृत से बिना कोई रूप बदले ले लिया गया है। जैसे अग्नि, दुग्ध, दन्त, मुख। (परन्तु हिन्दी में आने पर ऐसे शब्दों से विसर्ग का लोप हो जाता है, जैसे संस्कृत 'नामः' हिन्दी में केवल 'नाम' हो जाता है।)।

तद्‌भव शब्द– ये वे शब्द हैं, जिनका जन्म संस्कृत या प्राकृत में हुआ था, लेकिन उनमें काफी ऐतिहासिक बदलाव आया है। जैसे— आग, दूध, दाँत, मुँह।

द्वितीय वर्ग

देशज शब्द– देशज का अर्थ है – 'जो देश में ही उपजा या बना हो'। तो देशज शब्द का अर्थ हुआ जो न तो विदेशी भाषा का हो और न किसी दूसरी भाषा के शब्द से बना हो। ऐसा शब्द जो न संस्कृत का हो, न संस्कृत–शब्द का

अपभ्रंश हो। ऐसा शब्द किसी प्रदेश (क्षेत्र) के लोगों द्वारा बोल–चाल में यों ही बना लिया जाता है। जैसे- खटिया, लुटिया

विदेशी शब्द- इसके अलावा हिन्दी में कई शब्द अरबी, फारसी, तुर्की, अंग्रेजी आदि से भी आये हैं। इन्हें विदेशी शब्द कहते हैं।

जिस हिन्दी में अरबी, फारसी और अंग्रेजी के शब्द लगभग पूरी तरह से हटा कर तत्सम शब्दों को ही प्रयोग में लाया जाता है, उसे 'शुद्ध हिन्दी' या 'मानकीकृत हिन्दी' कहते हैं।

हिन्दी स्वनविज्ञान

देवनागरी लिपि में हिन्दी की ध्वनियाँ इस प्रकार हैं–

स्वर

ये स्वर आधुनिक हिन्दी (खड़ीबोली) के लिये दिये गये हैं।

वर्णाक्षर	"प" के साथ मात्रा	आईपीए उच्चारण	"प्" के साथ उच्चारण	IAST समतुल्य	अंग्रेज़ी समतुल्य	हिन्दी में वर्णन
अ	प	/ ə /	/ pə /	a	बीच का मध्य प्रसृत स्वर	
आ	पा	/ ɑː /	/ pɑː /	ā	दीर्घ विवृत पश्व प्रसृत स्वर	
इ	पि	/ i /	/ pi /	i	ह्रस्व संवृत अग्र प्रसृत स्वर	
ई	पी	/ iː /	/ piː /	ī	दीर्घ संवृत अग्र प्रसृत स्वर	
उ	पु	/ u /	/ pu /	u	ह्रस्व संवृत पश्व वर्तुल स्वर	
ऊ	पू	/ uː /	/ puː /	ū	दीर्घ संवृत पश्व वर्तुल स्वर	
ए	पे	/ eː /	/ peː /	e	दीर्घ अर्धसंवृत अग्र प्रसृत स्वर	
ऐ	पै	/ æː /	/ pæː /	ai	दीर्घ लगभग-विवृत अग्र प्रसृत स्वर	
ओ	पो	/ oː /	/ poː /	o	दीर्घ अर्धसंवृत पश्व वर्तुल स्वर	
औ	पौ	/ ɔː /	/ pɔː /	au	दीर्घ अर्धविवृत पश्व वर्तुल स्वर	
<none>	<none>	/ ɛ /	/ pɛ /	<none>	ह्रस्व अर्धविवृत अग्र प्रसृत स्वर	

इसके अलावा हिन्दी और संस्कृत में ये वर्णाक्षर भी स्वर माने जाते हैं–

ऋ – इसका उच्चारण रि और रु के बीच का होगा, परंतु आधुनिक हिंदी में इसका उच्चारण 'रि' की तरह किया जाता है।

अं – पंचम वर्ण – ङ्, ञ्, ण्, न्, म् का नासिकीकरण करने के लिए (अनुस्वार)

अँ – स्वर का अनुनासिकीकरण करने के लिए (चन्द्रबिन्दु)

अः – अघोष 'ह' (निःश्वास) के लिए (विसर्ग)

व्यंजन

जब किसी स्वर प्रयोग नहीं हो, तो वहाँ पर 'अ' माना जाता है। स्वर के न होने को हलन्त् अथवा विराम से दर्शाया जाता है। जैसे क् ख् ग् घ्।

स्पर्श (Plosives)

	अल्पप्राण अघोष	महाप्राण अघोष	अल्पप्राण घोष	महाप्राण घोष	नासिक्य
कण्ठ्य	**क** / kə /	**ख** / k^{h}ə /	**ग** / gə /	**घ** / $g^{ɦ}$ə /	**ङ** / ŋə /
तालव्य	**च** / cə / *या* / tʃə /	**छ** / c^{h}ə / *या* /$tʃ^{h}$ə/	**ज** / ɟə / *या* / dʒə /	**झ** / $ɟ^{ɦ}$ə / *या* / $dʒ^{ɦ}$ə /	**ञ** / ɲə /
मूर्धन्य	**ट** / ʈə /	**ठ** / $ʈ^{h}$ə /	**ड** / ɖə /	**ढ** / $ɖ^{ɦ}$ə /	**ण** / ɳə /
दन्त्य	**त** / t̪ə /	**थ** / $t̪^{h}$ə /	**द** / d̪ə /	**ध** / $d̪^{ɦ}$ə /	**न** / nə /
ओष्ठ्य	**प** / pə /	**फ** / p^{h}ə /	**ब** / bə /	**भ** / $b^{ɦ}$ə /	**म** / mə /

स्पर्शरहित (Non-Plosives)

	तालव्य	मूर्धन्य	दन्त्य/ वर्त्स्य	कण्ठोष्ठ्य/ काकल्य
अन्तस्थ	**य** / jə /	**र** / rə /	**ल** / lə /	**व** / ʋə /
ऊष्म/ संघर्षी	**श** / ʃə /	**ष** / ʂə /	**स** / sə /	**ह** / ɦə / या / hə /

ध्यातव्य

इनमें से ळ (मूर्धन्य पार्विक अन्तस्थ) एक अतिरिक्त व्यंजन है, जिसका प्रयोग हिन्दी में नहीं होता है। मराठी और वैदिक संस्कृत में सभी का प्रयोग किया जाता है।

संस्कृत में ष का उच्चारण ऐसे होता था—जीभ की नोक को मूर्धा (मुँह की छत) की ओर उठाकर श जैसी आवाज करना। शुक्ल यजुर्वेद की माध्यंदिनि शाखा में कुछ वाक्यात में ष का उच्चारण ख की तरह करना मान्य था। आधुनिक हिन्दी में ष का उच्चारण पूरी तरह श की तरह होता है।

हिन्दी में ण का उच्चारण कभी-कभी ड़ की तरह होता है, यानी कि जीभ मुँह की छत को एक जोरदार ठोकर मारती है। परन्तु इसका शुद्ध उच्चारण जिह्वा को मूर्धा (मुँह की छत. जहाँ से 'ट' का उच्चार करते हैं) पर लगा कर न की तरह का अनुनासिक स्वर निकालकर होता है।

विदेशी ध्वनियाँ

ये ध्वनियाँ मुख्यत: अरबी और फारसी भाषाओं से लिये गये शब्दों के मूल उच्चारण में होती हैं। इनका स्रोत संस्कृत नहीं है। देवनागरी लिपि में ये सबसे करीबी देवनागरी वर्ण के नीचे बिन्दु (नुक्ता) लगाकर लिखे जाते हैं, किन्तु हिन्दी की मानक वर्तनी में विदेशी शब्दों को बिना नुक्ते के ही उनके देसीकृत रूप में लिखने की अनुशंसा की गयी है। इसलिये आजकल हिन्दी में नुक्ता लगाने की प्रथा को लोग अनावश्यक मानने लगे हैं और ऐसा माना जाने लगा है कि नुक्ते का प्रयोग केवल तब किया जाय जब अरबी/उर्दू/फारसी वाले अपनी भाषा को देवनागरी में लिखना चाहते हों।

वर्णाक्षर (आईपीए उच्चारण)	उदाहरण	वर्णन	देशी उच्चारण
क़ (/ q /)	क़त्ल	अघोष अलिजिह्वीय स्पर्श	**क** (/ k /)
ख़ (/ x या χ /)	ख़ास	अघोष अलिजिह्वीय या कण्ठ्य संघर्षी	**ख** (/ $k^{ɦ}$ /)
ग़ (/ □या □ /)	ग़ैर	घोष अलिजिह्वीय या कण्ठ्य संघर्षी	**ग** (/ g /)
फ़ (/ f /)	फ़र्क	अघोष दन्त्यौष्ठ्य संघर्षी	**फ** (/ $p^{ɦ}$ /)
ज़ (/ z /)	ज़ालिम	घोष वत्स्र्य संघर्षी	**ज** (/ dʒ /)
ड़ (/ □/)	पेड़	अल्पप्राण मूर्धन्य उत्क्षिप्त	**ड** (/ ɖ /)
ढ़ (/ □□/)	पढ़ना	महाप्राण मूर्धन्य उत्क्षिप्त	**ढ** (/ $ɖ^{ɦ}$ /)

हिन्दी में ड़ और ढ़ व्यंजन फारसी या अरबी से नहीं लिये गये हैं, न ही ये संस्कृत में पाये जाये हैं। वास्तव में ये संस्कृत के साधारण ड, 'ळ' और ढ के बदले हुए रूप हैं।

व्याकरण

अन्य सभी भारतीय भाषाओं की तरह हिन्दी में भी कर्ता-कर्म-क्रिया वाला वाक्यविन्यास है। हिन्दी में दो लिंग होते हैं - पुल्लिंग और स्त्रीलिंग। नपुंसक वस्तुओं का लिंग भाषा-परम्परा के अनुसार पुलिंग या स्त्रीलिंग होता है। क्रिया का रूप, कर्ता के लिंग पर भी निर्भर करता है। हिन्दी में दो वचन होते हैं- एकवचन और बहुवचन। क्रिया, वचन से भी प्रभावित होती है। विशेषण, विशेष्य के पहले लगता है। ने, को, से, के लिए, का, की, के, में, पर, आदि कारक चिह्न प्रयोग किए जाते हैं।

हिन्दी भाषा के विविध रूप

1. बोलचाल की भाषा,
2. मानक भाषा,
3. सम्पर्क भाषा।

भिन्न-भिन्न भाषा-भाषियों के मध्य परस्पर विचार-विनिमय का माध्यम बनने वाली भाषा को सम्पर्क भाषा कहा जाता है। अपने राष्ट्रीय स्वरूप में ही हिन्दी पूरे भारत की सम्पर्क भाषा बनी हुई है। अपने सीमित रूप में, प्रशासनिक भाषा के रूप में, हिन्दी के व्यवहार में भिन्न भाषाभाषियों के बीच परस्पर सम्प्रेषण का माध्यम बनी हुई है। सम्पूर्ण भारतवर्ष में बोली और समझी जाने वाली राष्ट्रभाषा हिन्दी है, वह सरकार की राजभाषा भी है तथा सारे देश को एक सूत्र में पिरोने वाली सम्पर्क भाषा भी है। इस तरह अपने तीनों रूपों-राष्ट्रभाषा, राजभाषा और सम्पर्क भाषा - में हिन्दी भाषा अपना दायित्व सहजता से निभा रही है क्योंकि इन तीनों में अन्त:सम्बन्ध हैं।

'राष्ट्रभाषा सम्पूर्ण राष्ट्र में स्वीकृत भाषा होती है, जबकि प्रशासनिक कार्यों के व्यवहारों में प्रयुक्त होने वाली 'राजभाषा' घोषित की जाती है तथा सम्पर्क भाषा का विकास प्राकृतिक और स्वैच्छिक आधार पर होता है, जो सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। सम्पर्क भाषा ही सर्व-स्वीकृत होकर राष्ट्रभाषा बनती है। समृद्ध देशों में राष्ट्रभाषा, राजभाषा और सम्पर्क भाषा के रूप में एक

ही भाषा का प्रयोग होता है, जैसे जापान, अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, रूस आदि देश। इस दृष्टि से भारत भी समृद्ध देश है, जहाँ हिन्दी ही अपने तीनों रूपों में प्रयुक्त होती है। विश्व के अनेक देशों में हिन्दी का प्रचार-प्रसार हो रहा है।

राष्ट्रभाषा

यद्यपि राष्ट्रभाषा के विषय में भारतीय संविधान में कुछ भी नहीं कहा गया है, किन्तु राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा कहा था। उन्होंने 29 मार्च 1918 को इंदौर में आठवें हिन्दी साहित्य सम्मेलन की अध्यक्षता की थी। उस समय उन्होंने अपने सार्वजनिक उद्‌बोधन में पहली बार आह्वान किया था कि हिन्दी को ही भारत की राष्ट्रभाषा का दर्जा मिलना चाहिये। उन्होंने यह भी कहा था कि राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूँगा है। उन्होंने तो यहाँ तक कहा था कि हिन्दी भाषा का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है।

आजाद हिन्द फौज का राष्ट्रगान 'शुभ सुख चैन' हिन्दी में था। उनका अभियान गीत 'कदम कदम बढ़ाए जा' भी हिन्दी में था।

हिन्दी और कम्प्यूटर

कम्प्यूटर और इन्टरनेट ने पिछले वर्षों में विश्व में सूचना क्रांति ला दी है। आज कोई भी भाषा कम्प्यूटर (तथा कम्प्यूटर सदृश अन्य उपकरणों) से दूर रहकर लोगों से जुड़ी नहीं रह सकती। कम्प्यूटर के विकास के आरम्भिक काल में अंग्रेजी को छोड़कर विश्व की अन्य भाषाओं के कम्प्यूटर पर प्रयोग की दिशा में बहुत कम ध्यान दिया गया, जिसके कारण सामान्य लोगों में यह गलत धारणा फैल गयी कि कम्प्यूटर अंग्रेजी के सिवा किसी दूसरी भाषा (लिपि) में काम ही नहीं कर सकता। किन्तु यूनिकोड (Unicode) के पदार्पण के बाद स्थिति बहुत तेजी से बदल गयी। 19 अगस्त 2009 में गूगल ने कहा की हर 5 वर्षों में हिन्दी की सामग्री में 94 प्रतिशत बढ़ोत्तरी हो रही है।

हिन्दी की इंटरनेट पर अच्छी उपस्थिति है। गूगल जैसे सर्च इंजन हिन्दी को प्राथमिक भारतीय भाषा के रूप में पहचानते हैं। इसके साथ ही अब अन्य भाषा के शब्दों का भी अनुवाद हिन्दी में किया जा सकता है। फरवरी 2018 में एक सर्वेक्षण के हवाले से खबर आयी कि इंटरनेट की दुनिया में हिंदी ने भारतीय उपभोक्ताओं के बीच अंग्रेजी को पछाड़ दिया है।

इस समय हिन्दी में सजाल (websites), चिट्ठे (Blogs), विपत्र (email), गपशप (chat), खोज (web-search), सरल मोबाइल सन्देश (SMS) तथा अन्य हिन्दी सामग्री उपलब्ध हैं। इस समय अन्तरजाल पर हिन्दी में संगणन के संसाधनों की भी भरमार है और नित नये कम्प्यूटिंग उपकरण आते जा रहे हैं। लोगों में इनके बारे में जानकारी देकर जागरूकता पैदा करने की जरूरत है ताकि अधिकाधिक लोग कम्प्यूटर पर हिन्दी का प्रयोग करते हुए अपना, हिन्दी का और पूरे हिन्दी समाज का विकास करें।

हिन्दी और जनसंचार

हिन्दी सिनेमा का उल्लेख किये बिना हिन्दी का कोई भी लेख अधूरा होगा। मुम्बई में स्थित 'बॉलीवुड' हिन्दी फिल्म उद्योग पर भारत के करोड़ो लोगों की धड़कनें टिकी रहती हैं। हर चलचित्र में कई गाने होते हैं। हिन्दी और उर्दू (खड़ीबोली) के साथ-साथ अवधी, बम्बइया हिन्दी, भोजपुरी, राजस्थानी जैसी बोलियाँ भी संवाद और गानों में उपयुक्त होती हैं। प्यार, देशभक्ति, परिवार, अपराध, भय, इत्यादि मुख्य विषय होते हैं। अधिकतर गाने उर्दू शायरी पर आधारित होते हैं।

अब मोबाइल कंपनियां ऐसे हैंडसेट बना रही हैं, जो हिंदी और भारतीय भाषाओं को सपोर्ट करते हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियां हिंदी जानने वाले कर्मचारियों को वरीयता दे रही हैं। हॉलीवुड की फिल्में हिंदी में डब हो रही हैं और हिंदी फिल्में देश के बाहर देश से अधिक कमाई कर रही हैं। हिंदी, विज्ञापन उद्योग की पसंदीदा भाषा बनती जा रही है। गूगल, ट्रांसलेशन, ट्रांस्लिटरेशन, फोनेटिक टूल्स, गूगल असिस्टैन्ट आदि के क्षेत्र में नई-नई रिसर्च कर अपनी सेवाओं को बेहतर कर रहा है। हिंदी और भारतीय भाषाओं की पुस्तकों का डिजिटलीकरण जारी है।

फेसबुक और व्हाट्सएप हिंदी और भारतीय भाषाओं के साथ तालमेल बिठा रहे हैं। सोशल मीडिया ने हिंदी में लेखन और पत्रकारिता के नए युग का सूत्रपात किया है और कई जनान्दोलनों को जन्म देने और चुनाव जिताने-हराने में उल्लेखनीय और हैरान करने वाली भूमिका निभाई है। सितम्बर 2018 में प्रकाशित हुई एक अमेरिकी रपट के अनुसार हिन्दी में ट्वीट करना अत्यन्त लोकप्रिय हो रहा है। रपट में कहा गया है कि पिछले वर्ष सबसे अधिक पुनः ट्वीट किए गये 15 सन्देशों में से 11 हिन्दी के थे। हिन्दी और अन्य भारतीय

भाषाओं का बाजार इतना बड़ा है कि अनेक कम्पनियाँ अपने उत्पाद और वेबसाइटें हिन्दी और स्थानीय भाषाओं में ला रहीं हैं।

हिन्दी का वैश्विक प्रसार

सन् 1998 के पूर्व, मातृभाषियों की संख्या की दृष्टि से विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं के जो आँकड़े मिलते थे, उनमें हिन्दी को तीसरा स्थान दिया जाता था। सन् 1997 में 'सैन्सस ऑफ इंडिया' का भारतीय भाषाओं के विश्लेषण का ग्रन्थ प्रकाशित होने तथा संसार की भाषाओं की रिपोर्ट तैयार करने के लिए यूनेस्को द्वारा सन् 1998 में भेजी गई यूनेस्को प्रश्नावली के आधार पर उन्हें भारत सरकार के केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के तत्कालीन निदेशक प्रोफेसर महावीर सरन जैन द्वारा भेजी गई विस्तृत रिपोर्ट के बाद अब विश्व स्तर पर यह स्वीकृत है कि मातृभाषियों की संख्या की दृष्टि से संसार की भाषाओं में चीनी भाषा के बाद हिन्दी का दूसरा स्थान है। चीनी भाषा के बोलने वालों की संख्या हिन्दी भाषा से अधिक है, किन्तु चीनी भाषा का प्रयोग क्षेत्र हिन्दी की अपेक्षा सीमित है। अंग्रेजी भाषा का प्रयोग क्षेत्र हिन्दी की अपेक्षा अधिक है, किन्तु मातृभाषियों की संख्या अंग्रेजी भाषियों से अधिक है।

विश्वभाषा बनने के सभी गुण हिन्दी में विद्यमान हैं। बीसवीं शती के अंतिम दो दशकों में हिन्दी का अंतर्राष्ट्रीय विकास बहुत तेजी से हुआ है। हिंदी एशिया के व्यापारिक जगत् में धीरे-धीरे अपना स्वरूप बिंबित कर भविष्य की अग्रणी भाषा के रूप में स्वयं को स्थापित कर रही है। वेब, विज्ञापन, संगीत, सिनेमा और बाजार के क्षेत्र में हिन्दी की मांग जिस तेजी से बढ़ी है वैसी किसी और भाषा में नहीं। विश्व के लगभग 150 विश्वविद्यालयों तथा सैकड़ों छोटे-बड़े केंद्रों में विश्वविद्यालय स्तर से लेकर शोध स्तर तक हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था हुई है। विदेशों में 25 से अधिक पत्र-पत्रिकाएं लगभग नियमित रूप से हिन्दी में प्रकाशित हो रही हैं। यूएई के 'हम एफ-एम' सहित अनेक देश हिन्दी कार्यक्रम प्रसारित कर रहे हैं, जिनमें बीबीसी, जर्मनी के डॉयचे वेले, जापान के एनएचके वर्ल्ड और चीन के चाइना रेडियो इंटरनेशनल की हिन्दी सेवा विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

दिसम्बर 2016 में विश्व आर्थिक मंच ने 10 सर्वाधिक शक्तिशाली भाषाओं की जो सूची जारी की है उसमें हिन्दी भी एक है। इसी प्रकार 'कोर लैंग्वेजेज' नामक साइट ने 'दस सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भाषाओं' में हिन्दी को स्थान

दिया था। के-इण्टरनेशनल ने वर्ष 2017 के लिये सीखने योग्य सर्वाधिक उपयुक्त नौ भाषाओं में हिन्दी को स्थान दिया है।

हिन्दी को एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्थापित करने और विश्व हिन्दी सम्मेलनों के आयोजन को संस्थागत व्यवस्था प्रदान करने के उद्देश्य से 11 फरवरी 2008 को विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना की गयी थी। संयुक्त राष्ट्र रेडियो ने अपना प्रसारण हिन्दी में भी करना आरम्भ किया है। हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा बनाये जाने के लिए भारत सरकार प्रयत्नशील है। अगस्त 2018 से संयुक्त राष्ट्र ने साप्ताहिक हिन्दी समाचार बुलेटिन आरम्भ किया है।

हिन्दी साहित्य का इतिहास

हिन्दी साहित्य पर अगर समुचित परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाए तो स्पष्ट होता है कि हिन्दी साहित्य का इतिहास अत्यंत विस्तृत व प्राचीन है। सुप्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक **डॉ. हरदेव बाहरी** के शब्दों में, हिन्दी साहित्य का इतिहास वस्तुतः वैदिक काल से आरम्भ होता है। यह कहना ही ठीक होगा कि वैदिक भाषा ही हिन्दी है। इस भाषा का दुर्भाग्य रहा है कि युग-युग में इसका नाम परिवर्तित होता रहा है। कभी 'वैदिक', कभी 'संस्कृत', कभी 'प्राकृत', कभी 'अपभ्रंश' और अब - हिन्दी। आलोचक कह सकते हैं कि 'वैदिक संस्कृत' और 'हिन्दी' में तो जमीन-आसमान का अन्तर है। पर ध्यान देने योग्य है कि हिब्रु, रूसी, चीनी, जर्मन और तमिल आदि जिन भाषाओं को 'बहुत पुरानी' बताया जाता है, उनके भी प्राचीन और वर्तमान रूपों में जमीन-आसमान का अन्तर है, पर लोगों ने उन भाषाओं के नाम नहीं बदले और उनके परिवर्तित स्वरूपों को 'प्राचीन', 'मध्यकालीन', 'आधुनिक' आदि कहा गया, जबकि 'हिन्दी' के सन्दर्भ में प्रत्येक युग की भाषा का नया नाम रखा जाता रहा।

हिन्दी भाषा के उद्‌भव और विकास के सम्बन्ध में प्रचलित धारणाओं पर विचार करते समय हमारे सामने हिन्दी भाषा की उत्पत्ति का प्रश्न दसवीं शताब्दी के आसपास की प्राकृत भाषा तथा अपभ्रंश भाषाओं की ओर जाता है। अपभ्रंश शब्द की व्युत्पत्ति और जैन रचनाकारों की अपभ्रंश कृतियों का हिन्दी से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए जो तर्क और प्रमाण हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में प्रस्तुत किये गये हैं उन पर विचार करना भी आवश्यक है। सामान्यतः प्राकृत की अन्तिम अपभ्रंश-अवस्था से ही हिन्दी साहित्य का आविर्भाव स्वीकार किया

जाता है। उस समय अपभ्रंश के कई रूप थे और उनमें सातवीं-आठवीं शताब्दी से ही पद्य-रचना प्रारम्भ हो गयी थी।

साहित्य की दृष्टि से पद्यबद्ध जो रचनाएँ मिलती हैं वे दोहा रूप में ही हैं और उनके विषय, धर्म, नीति, उपदेश आदि प्रमुख हैं। राजाश्रित कवि और चारण नीति, श्रृंगार, शौर्य, पराक्रम आदि के वर्णन से अपनी साहित्य-रुचि का परिचय दिया करते थे। यह रचना-परम्परा आगे चलकर शौरसेनी अपभ्रंश या 'प्राकृताभास हिन्दी' में कई वर्षों तक चलती रही। पुरानी अपभ्रंश भाषा और बोलचाल की देशी भाषा का प्रयोग निरन्तर बढ़ता गया। इस भाषा को विद्यापति ने देशी भाषा कहा है, किन्तु यह निर्णय करना सरल नहीं है कि हिन्दी शब्द का प्रयोग इस भाषा के लिए कब और किस देश में प्रारम्भ हुआ।

हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन का इतिहास

आरंभिक काल से लेकर आधुनिक व आज की भाषा में आधुनिकोत्तर काल तक साहित्य इतिहास लेखकों के शताधिक नाम गिनाये जा सकते हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहास शब्दबद्ध करने का प्रश्न अधिक महत्त्वपूर्ण था।

हिन्दी साहित्य के मुख्य इतिहासकार और उनके ग्रन्थ निम्नानुसार हैं -

1. गार्सा द तासी–इस्तवार द ला लितेरात्यूर ऐंदुई ऐंदुस्तानी (फ्रेंच भाषा में, फ्रेंच विद्वान, हिन्दी साहित्य के पहले इतिहासकार), (1839)
2. मौलवी करीमुद्दीन–तजकिरा-ऐ-शुअराई, (1848)
3. शिवसिंह सेंगर–शिव सिंह सरोज, (1883)
4. जार्ज ग्रियर्सन–द मॉडर्न वर्नेक्यूलर लिट्रैचर ऑफ हिंदोस्तान, (1888)
5. मिश्र बंधु–मिश्र बंधु विनोद (चार भागों में) भाग 1, 2 और 3-(1913 में) भाग 4 (1934 में)
6. एडविन ग्रीव्स–ए स्कैच ऑफ हिंदी लिटरेचर, (1917)
7. एफ. ई. के. महोदय–ए हिस्ट्री ऑफ हिंदी लिटरेचर (1920)
8. रामचंद्र शुक्ल–हिन्दी साहित्य का इतिहास (1929)
9. हजारी प्रसाद द्विवेदी–हिन्दी साहित्य की भूमिका (1940), हिन्दी साहित्य का आदिकाल(1952), हिन्दी साहित्यः उद्भव और विकास(1955)
10. रामकुमार वर्मा–हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास(1938)
11. डॉ. धीरेन्द्र वर्मा–हिन्दी साहित्य (तीन खण्डों में)

12. हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास (सोलह खण्डों में) - 1957 से 1984 ई. तक।
13. डॉ. नगेन्द्र–हिन्दी साहित्य का इतिहास (1973), हिन्दी वाग्मंय 20वीं शती
14. रामस्वरूप चतुर्वेदी–हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1986
15. बच्चन सिंह–हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली(1996)
16. डॉ. मोहन अवस्थी–हिन्दी साहित्य का अद्यतन इतिहास
17. बाबू गुलाब राय–हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास

हिन्दी साहित्य के विकास के विभिन्न काल

हिन्दी साहित्य का आरंभ आठवीं शताब्दी से माना जाता है। यह वह समय है, जब सम्राट् हर्ष की मृत्यु के बाद देश में अनेक छोटे–छोटे शासनकेन्द्र स्थापित हो गए थे जो परस्पर संघर्षरत रहा करते थे। विदेशी मुसलमानों से भी इनकी टक्कर होती रहती थी। धार्मिक क्षेत्र अस्तव्यस्त थे। इन दिनों उत्तर भारत के अनेक भागों में बौद्ध धर्म का प्रचार था। बौद्ध धर्म का विकास कई रूपों में हुआ जिनमें से एक वज्रयान कहलाया। वज्रयानी तांत्रिक थे और सिद्ध कहलाते थे। इन्होंने जनता के बीच उस समय की लोकभाषा में अपने मत का प्रचार किया। हिन्दी का प्राचीनतम साहित्य इन्हीं वज्रयानी सिद्धों द्वारा तत्कलीन लोकभाषा पुरानी हिन्दी में लिखा गया। इसके बाद नाथपंथी साधुओं का समय आता है। इन्होंने बौद्ध, शांकर, तंत्र, योग और शैव मतों के मिश्रण से अपना नया पंथ चलाया जिसमें सभी वर्गों और वर्णों के लिए धर्म का एक सामान्य मत प्रतिपादित किया गया था। लोकप्रचलित पुरानी हिन्दी में लिखी इनकी अनेक धार्मिक रचनाएँ उपलब्ध हैं। इसके बाद जैनियों की रचनाएँ मिलती हैं। स्वयंभू का 'पउमचरिउ' अथवा रामायण आठवीं शताब्दी की रचना है। बौद्धों और नाथपंथियों की रचनाएँ मुक्तक और केवल धार्मिक हैं पर जैनियों की अनेक रचनाएँ जीवन की सामान्य अनुभूतियों से भी संबद्ध हैं। इनमें से कई प्रबंधकाव्य हैं। इसी काल में अब्दुर्रहमान का काव्य 'संदेशरासक' भी लिखा गया जिसमें परवर्ती बोलचाल के निकट की भाषा मिलती है। इस प्रकार ग्यारहवीं शताब्दी तक पुरानी हिन्दी का रूप निर्मित और विकसित होता रहा।

आदिकाल (650ई. से 1375ई.)

ग्यारहवीं सदी के लगभग देशभाषा हिन्दी का रूप अधिक स्फुट होने लगा। उस समय पश्चिमी हिन्दी प्रदेश में अनेक छोटे–छोटे राजपूत राज्य स्थापित हो गए थे। ये परस्पर अथवा विदेशी आक्रमणकारियों से प्रायः युद्धरत रहा करते थे। इन्हीं राजाओं के संरक्षण में रहनेवाले चारणों और भाटों का राजप्रशस्तिमूलक काव्य वीरगाथा के नाम से अभिहित किया गया। इन वीरगाथाओं को रासो कहा जाता है। इनमें आश्रयदाता राजाओं के शौर्य और पराक्रम का ओजस्वी वर्णन करने के साथ ही उनके प्रेमप्रसंगों का भी उल्लेख है। रासो ग्रन्थों में संघर्ष का कारण प्रायः प्रेम दिखाया गया है। इन रचनाओं में इतिहास और कल्पना का मिश्रण है। रासो वीरगीत (बीसलदेवरासो और आल्हा आदि) और प्रबंधकाव्य (पृथ्वीराजरासो, खुमानरासो आदि) - इन दो रूपों में लिखे गये। इन रासो ग्रन्थों में से अनेक की उपलब्ध प्रतियाँ चाहे ऐतिहासिक दृष्टि से संदिग्ध हों पर इन वीरगाथाओं की मौखिक परंपरा अंसदिग्ध है। इनमें शौर्य और प्रेम की ओजस्वी और सरस अभिव्यक्ति हुई है।

इसी कालावधि में मैथिल कोकिल विद्यापति हुए जिनकी पदावली में मानवीय सौंदर्य ओर प्रेम की अनुपम व्यंजना मिलती है। कीर्तिलता और कीर्तिपताका इनके दो अन्य प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। अमीर खुसरो का भी यही समय है। इन्होंने ठेठ खड़ी बोली में अनेक पहेलियाँ, मुकरियाँ और दो सखुन रचे हैं। इनके गीतों, दोहों की भाषा ब्रजभाषा है।

आदिकाल के प्रमुख कवि और उनकी रचनाएँ–1. अब्दुर्रहमान–संदेश रासक 2. नरपति नाल्ह–बीसलदेव रासो (अपभ्रंश हिंदी) 3. चंदबरदायी–पृथ्वीराज रासो (डिंगल-पिंगल हिंदी) 4. दलपति विजय–खुमान रासो (राजस्थानी हिंदी) 5. जगनिक–परमाल रासो 6. शार्गंधर–हम्मीर रासो 7. नल्ह सिंह–विजयपाल रासो 8. जल्ह कवि–बुद्धि रासो 9. माधवदास चारण–राम रासो 10. देल्हण–गद्य सुकुमाल रासो 11. श्रीधर–रणमल छंद , पीरीछत रायसा 12. जिनधर्मसूरि–स्थूलिभद्र रास 13. गुलाब कवि–करहिया कौ रायसो 14. शालिभद्रसूरि–भरतेश्वर बाहुअलिरास 15. जोइन्दु–परमात्म प्रकाश 16. केदार–जयचंद प्रकाश 17. मधुकर कवि–जसमयंक चंद्रिका 18. स्वयंभू–पउम चरिउ 19. योगसार रूसानयधम्म दोहा 20. हरप्रसाद शास्त्री–बौद्धगान और दोहा 21. धनपाल–भवियत्त कहा 22. लक्ष्मीधर–प्राकृत पैंगलम 23. अमीर खुसरो–किस्सा चाहा दरवेश, खालिक बारी 24. विद्यापति–कीर्तिलता, कीर्तिपताका, विद्यापति पदावली (मैथिली)।

भक्तिकाल (1375 से 1700 ई.)

तेरहवीं सदी तक धर्म के क्षेत्र में बड़ी अस्तव्यस्तता आ गई। जनता में सिद्धों और योगियों आदि द्वारा प्रचलित अंधविश्वास फैल रहे थे, शास्त्रज्ञानसंपन्न वर्ग में भी रूढ़ियों और आडंबर की प्रधानता हो चली थी। मायावाद के प्रभाव से लोकविमुखता और निष्क्रियता के भाव समाज में पनपने लगे थे। ऐसे समय में भक्तिआंदोलन के रूप में ऐसा भारतव्यापी विशाल सांस्कृतिक आंदोलन उठा, जिसने समाज में उत्कर्ष विधायक सामाजिक और वैयक्तिक मूल्यों की प्रतिष्ठा की।

भक्ति आंदोलन का आरंभ दक्षिण के आलवार सन्तों द्वारा दसवीं सदी के लगभग हुआ। वहाँ शंकराचार्य के अद्वैतमत और मायावाद के विरोध में चार वैष्णव संप्रदाय खड़े हुए। इन चारों संप्रदायों ने उत्तर भारत में विष्णु के अवतारों का प्रचार-प्रसार किया। इनमें से एक के प्रवर्तक रामानुजाचार्य थे, जिनकी शिष्यपरंपरा में आनेवाले रामानंद ने (पंद्रहवीं सदी) उत्तर भारत में रामभक्ति का प्रचार किया। रामानंद के राम ब्रह्म के स्थानापन्न थे जो राक्षसों का विनाश और अपनी लीला का विस्तार करने के लिए संसार में अवतीर्ण होते हैं। भक्ति के क्षेत्र में रामानंद ने ऊँचनीच का भेदभाव मिटाने पर विशेष बल दिया। राम के सगुण और निर्गुण दो रूपों को माननेवाले दो भक्तों - कबीर और तुलसी को इन्होंने प्रभावित किया। विष्णुस्वामी के शुद्धाद्वैत मत का आधार लेकर इसी समय वल्लभाचार्य ने अपना पुष्टिमार्ग चलाया। बारहवीं से सोलहवीं सदी तक पूरे देश में पुराणसम्मत कृष्णचरित्र के आधार पर कई संप्रदाय प्रतिष्ठित हुए, जिनमें सबसे ज्यादा प्रभावशाली वल्लभ का पुष्टिमार्ग था। उन्होंने शांकर मत के विरुद्ध ब्रह्म के सगुण रूप को ही वास्तविक कहा। उनके मत से यह संसार मिथ्या या माया का प्रसार नहीं है बल्कि ब्रह्म का ही प्रसार है, अतः सत्य है। उन्होंने कृष्ण को ब्रह्म का अवतार माना और उसकी प्राप्ति के लिए भक्त का पूर्ण आत्मसमर्पण आवश्यक बतलाया। भगवान् के अनुग्रह या पुष्टि के द्वारा ही भक्ति सुलभ हो सकती है। इस संप्रदाय में उपासना के लिए गोपीजनवल्लभ, लीलापुरुषोत्तम कृष्ण का मधुर रूप स्वीकृत हुआ। इस प्रकार उत्तर भारत में विष्णु के राम और कृष्ण अवतारों की प्रतिष्ठा हुई।

इस प्रकार इन विभिन्न मतों का आधार लेकर हिन्दी में निर्गुण और सगुण के नाम से भक्तिकाव्य की दो शाखाएँ साथ-साथ चलीं। निर्गुणमत के दो उपविभाग हुए - ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी। पहले के प्रतिनिधि कबीर और दूसरे

के जायसी हैं। सगुणमत भी दो उपधाराओं में प्रवाहित हुआ – रामभक्ति और कृष्णभक्ति। पहले के प्रतिनिधि तुलसी हैं और दूसरे के सूरदास।

ज्ञानश्रयी शाखा के प्रमुख कवि कबीर पर तात्कालिक विभिन्न धार्मिक प्रवृत्तियों और दार्शनिक मतों का सम्मिलित प्रभाव है। उनकी रचनाओं में धर्मसुधारक और समाजसुधारक का रूप विशेष प्रखर है। उन्होंने आचरण की शुद्धता पर बल दिया। बाह्याडंबर, रूढ़ियों और अंधविश्वासों पर उन्होंने तीव्र कशाघात किया। मनुष्य की क्षमता का उद्घोष कर उन्होंने निम्नश्रेणी की जनता में आत्मगौरव का भाव जगाया। इस शाखा के अन्य कवि रैदास, दादू हैं।

प्रेमाश्रयी धारा के सर्वप्रमुख कवि **जायसी** हैं, जिनका 'पदमावत' अपनी मार्मिक प्रेमव्यंजना, कथारस और सहज कलाविन्यास के कारण विशेष प्रशंसित हुआ है। इनकी अन्य रचनाओं में 'अखरावट' और 'आखिरी कलाम' आदि हैं, जिनमें सूफी संप्रदायसंगत बातें हैं। इस धारा के अन्य कवि हैं **कुतुबन, मंझन, उसमान, शेख नबी** और **नूर मुहम्मद** आदि।

आज की दृष्टि से इस संपूर्ण भक्तिकाव्य का महत्त्व उसकी धार्मिकता से अधिक लोकजीवनगत मानवीय अनुभूतियों और भावों के कारण है। इसी विचार से भक्तिकाल को हिन्दी काव्य का स्वर्ण युग कहा जा सकता है।

रीतिकाल (1700 से 1900 ई.)

1700 ई. के आस-पास हिन्दी कविता में एक नया मोड़ आया। इसे विशेषत: तात्कालिक दरबारी संस्कृति और संस्कृत साहित्य से उत्तेजना मिली। संस्कृत साहित्यशास्त्र के कतिपय अंशों ने उसे शास्त्रीय अनुशासन की ओर प्रवृत्त किया। हिन्दी में 'रीति' या 'काव्यरीति' शब्द का प्रयोग काव्यशास्त्र के लिए हुआ था। इसलिए काव्यशास्त्रबद्ध सामान्य सृजन प्रवृत्ति और रस, अलंकार आदि के निरूपक बहुसंख्यक लक्षणग्रन्थों को ध्यान में रखते हुए इस समय के काव्य को 'रीतिकाव्य' कहा गया। इस काव्य की शृंगारी प्रवृत्तियों की पुरानी परंपरा के स्पष्ट संकेत संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, फारसी और हिन्दी के आदिकाव्य तथा कृष्णकाव्य की शृंगारी प्रवृत्तियों में मिलते हैं।

रीतिकाव्य रचना का आरंभ एक संस्कृतज्ञ ने किया। ये थे आचार्य **केशवदास**, जिनकी सर्वप्रसिद्ध रचनाएँ कविप्रिया, रसिकप्रिया और रामचंद्रिका हैं। केशव के कई दशक बाद चिन्तामणि से लेकर अठारहवीं सदी तक हिन्दी में रीतिकाव्य का अजस्र स्रोत प्रवाहित हुआ, जिसमें नर-नारी-जीवन के रमणीय

पक्षों और तत्संबंधी सरस संवेदनाओं की अत्यंत कलात्मक अभिव्यक्ति व्यापक रूप में हुई।

रीतिकाल के कवि राजाओं और रईसों के आश्रय में रहते थे। वहाँ मनोरंजन और कलाविलास का वातावरण स्वाभाविक था। बौद्धिक आनंद का मुख्य साधन वहाँ उक्तिवैचित्र्य समझा जाता था। ऐसे वातावरण में लिखा गया साहित्य अधिकतर श्रृंगारमूलक और कलावैचित्र्य से युक्त था। पर इसी समय प्रेम के स्वच्छंद गायक भी हुए जिन्होंने प्रेम की गहराइयों का स्पर्श किया है। मात्रा और काव्यगुण दोनों ही दृष्टियों से इस समय का नर–नारी–प्रेम और सौंदर्य की मार्मिक व्यंजना करनेवाला काव्यसाहित्य महत्त्वपूर्ण है।

रीतिकाव्य मुख्यतः मांसल श्रृंगार का काव्य है। इसमें नर–नारीजीवन के स्मरणीय पक्षों का सुंदर उद्घाटन हुआ है। अधिक काव्य मुक्तक शैली में है, पर प्रबंधकाव्य भी हैं। इन दो सौ वर्षों में श्रृंगारकाव्य का अपूर्व उत्कर्ष हुआ। पर धीरे–धीरे रीति की जकड़ बढ़ती गई और हिन्दी काव्य का भावक्षेत्र संकीर्ण होता गया। आधुनिक युग तक आते–आते इन दोनों कमियों की ओर साहित्यकारों का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट हुआ।

आधुनिक काल (1900 से अब तक)

उन्नीसवीं शताब्दी

यह आधुनिक युग का आरंभ काल है, जब भारतीयों का यूरोपीय संस्कृति से संपर्क हुआ। भारत में अपनी जड़ें जमाने के काम में अँगरेजी शासन ने भारतीय जीवन को विभिन्न स्तरों पर प्रभावित और आंदोलित किया। नई परिस्थितियों के धक्के से स्थितिशील जीवनविधि का ढाँचा टूटने लगा। एक नए युग की चेतना का आरंभ हुआ। संघर्ष और सामंजस्य के नए आयाम सामने आए।

नये युग के साहित्यसृजन की सर्वोच्च संभावनाएँ खड़ी बोली गद्य में निहित थीं, इसलिए इसे गद्य–युग भी कहा गया है। हिन्दी का प्राचीन गद्य राजस्थानी, मैथिली और ब्रजभाषा में मिलता है पर वह साहित्य का व्यापक माध्यम बनने में अशक्त था। खड़ीबोली की परंपरा प्राचीन है। अमीर खुसरो से लेकर मध्यकालीन भूषण तक के काव्य में इसके उदाहरण बिखरे पड़े हैं। खड़ी बोली गद्य के भी पुराने नमूने मिले हैं। इस तरह का बहुत–सा गद्य फारसी और गुरुमुखी लिपि में लिखा गया है। दक्षिण की मुसलमान रियासतों में 'दक्खिनी'

के नाम से इसका विकास हुआ। अठारहवीं सदी में लिखा गया **रामप्रसाद निरंजनी** और दौलतराम का गद्य उपलब्ध है। पर नयी युगचेतना के संवाहक रूप में हिन्दी के खड़ी बोली गद्य का व्यापक प्रसार उन्नीसवीं सदी से ही हुआ। कलकत्ते के फोर्ट विलियम कालेज में, नवागत अँगरेज अफसरों के उपयोग के लिए, **लल्लू लाल** तथा **सदल मिश्र** ने गद्य की पुस्तकें लिखकर हिन्दी के खड़ी बोली गद्य की पूर्वपरंपरा के विकास में कुछ सहायता दी। **मुंशी सदासुखलाल** और **इंशा अल्ला खाँ** की गद्य रचनाएँ इसी समय लिखी गई। आगे चलकर प्रेस, पत्रपत्रिकाओं, ईसाई धर्मप्रचारकों तथा नवीन शिक्षा संस्थाओं से हिन्दी गद्य के विकास में सहायता मिली। बंगाल, पंजाब, गुजरात आदि विभिन्न प्रान्तों के निवासियों ने भी इसकी उन्नति और प्रसार में योग दिया। हिन्दी का पहला समाचारपत्र 'उदंत मार्तण्ड' 1826 ई. में कलकत्ता से प्रकाशित हुआ। **राजा शिवप्रसाद** और **राजा लक्ष्मण सिंह** हिन्दी गद्य के निर्माण और प्रसार में अपने-अपने ढंग से सहायक हुए। आर्यसमाज और अन्य सांस्कृतिक आंदोलनों ने भी आधुनिक गद्य को आगे बढ़ाया।

गद्यसाहित्य की विकासमान परंपरा उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध से अग्रसर हुई। इसके प्रवर्तक आधुनिक युग के प्रवर्तक और पथप्रदर्शक **भारतेंदु हरिश्चंद्र** थे जिन्होंने साहित्य का समकालीन जीवन से घनिष्ठ संबंध स्थापित किया। यह संक्रांति और नवजागरण का युग था। अँगरेजों की कूटनीतिक चालों और आर्थिक शोषण से जनता संत्रस्त और क्षुब्ध थी। समाज का एक वर्ग पाश्चात्य संस्कारों से आक्रांत हो रहा था तो दूसरा वर्ग रूढ़ियों में जकड़ा हुआ था। इसी समय नई शिक्षा का आरंभ हुआ और सामाजिक सुधार के आंदोलन चले। नवीन ज्ञान विज्ञान के प्रभाव से नवशिक्षितों में जीवन के प्रति एक नया दृष्टिकोण विकसित हुआ जो अतीत की अपेक्षा वर्तमान और भविष्य की ओर विशेष उन्मुख था। सामाजिक विकास में उत्पन्न आस्था और जाग्रत समुदायचेतना ने भारतीयों में जीवन के प्रति नया उत्साह उत्पन्न किया। भारतेंदु के समकालीन साहित्य में विशेषत: गद्यसाहित्य में तत्कालीन वैचारिक और भौतिक परिवेश की विभिन्न अवस्थाओं की स्पष्ट और जीवन्त अभिव्यक्ति हुई। इस युग की नवीन रचनाएँ देशभक्ति और समाजसुधार की भावना से परिपूर्ण हैं। अनेक नई परिस्थितियों की टकराहट से राजनीतिक और सामाजिक व्यंग्य की प्रवृत्ति भी उद्‌बुद्ध हुई। इस समय के गद्य में बोलचाल की सजीवता है। लेखकों के व्यक्तितत्त्व से संपृक्त होने के कारण उसमें पर्याप्त रोचकता आ गई है। सबसे अधिक निबंध लिखे गए जो

व्यक्तिप्रधान और विचारप्रधान तथा वर्णनात्मक भी थे। अनेक शैलियों में कथासाहित्य भी लिखा गया, अधिकतर शिक्षाप्रधान, पर यथार्थवादी दृष्टि और नए शिल्प की विशिष्टता **श्रीनिवास दास** के 'परीक्षागुरु' में ही है। **देवकीनन्दन खत्री** का तिलस्मी उपन्यास 'चंद्रकांता' इसी समय प्रकाशित हुआ। पर्याप्त परिमाण में नाटकों और सामाजिक प्रहसनों की रचना हुई। **भारतेंदु, प्रतापनारायण मिश्र, श्रीनिवास दास,** आदि प्रमुख नाटककार हैं। साथ ही भक्ति और शृंगार की बहुत–सी सरस कविताएँ भी निर्मित हुई। पर जिन कविताओं में सामाजिक भावों की अभिव्यक्ति हुई वे ही नये युग की सृजनशीलता का आरंभिक आभास देती हैं। खड़ी बोली के छिटफुट प्रयोगों को छोड़ शेष कविताएँ ब्रजभाषा में लिखी गयीं। वास्तव में नया युग इस समय के गद्य में ही अधिक प्रतिफलित हो सका।

बीसवीं शताब्दी

इस कालावधि की सबसे महत्त्वपूर्ण घटनाएँ दो हैं – एक तो सामान्य काव्यभाषा के रूप में खड़ी बोली की स्वीकृति और दूसरे हिन्दी गद्य का नियमन और परिमार्जन। इस कार्य में सर्वाधिक सशक्त योग सरस्वती संपादक **महावीरप्रसाद द्विवेदी** का था। द्विवेदी जी और उनके सहकर्मियों ने हिन्दी गद्य की अभिव्यक्तिक्षमता को विकसित किया। निबंध के क्षेत्र में द्विवेदी जी के अतिरिक्त **बालमुकुंद, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, पूर्णसिंह, पद्मसिंह शर्मा** जैसे एक से एक सावधान, सशक्त और जीवंत गद्यशैलीकार सामने आए। उपन्यास अनेक लिखे गए पर उसकी यथार्थवादी परंपरा का उल्लेखनीय विकास न हो सका। यथार्थपरक आधुनिक कहानियाँ इसी काल में जन्मीं और विकासमान हुईं। गुलेरी, कौशिक आदि के अतिरिक्त **प्रेमचंद** और **प्रसाद** की भी आरंभिक कहानियाँ इसी समय प्रकाश में आई। नाटक का क्षेत्र अवश्य सूना सा रहा। इस समय के सबसे प्रभावशाली समीक्षक द्विवेदी जी थे जिनकी संशोधनवादी और मर्यादानिष्ठ आलोचना ने अनेक समकालीन साहित्य को पर्याप्त प्रभावित किया। मिश्रबंधु, कृष्णबिहारी मिश्र और पद्मसिंह शर्मा इस समय के अन्य समीक्षक हैं पर कुल मिलाकर इस समय की समीक्षा बाह्यपक्षप्रधान ही रही।

सुधारवादी आदर्शों से प्रेरित अयोध्यासिंह उपाध्याय ने अपने 'प्रियप्रवास' में राधा का लोकसेविका रूप प्रस्तुत किया और खड़ीबोली के विभिन्न रूपों के प्रयोग में निपुणता भी प्रदर्शित की। **मैथिलीशरण गुप्त** ने 'भारत भारती' में

राष्ट्रीयता और समाज सुधार का स्वर ऊँचा किया और 'साकेत' में उर्मिला की प्रतिष्ठा की। इस समय के अन्य कवि द्विवेदी जी, **श्रीधर पाठक, बालमुकुंद गुप्त, नाथूराम शर्मा** 'शंकर', **गया प्रसाद शुक्ल** 'सनेही' आदि हैं। ब्रजभाषा काव्यपरंपरा के प्रतिनिधि **रत्नाकर** और **सत्यनारायण कविरत्न** हैं। इस समय खड़ी बोली काव्यभाषा के परिमार्जन और सामयिक परिवेश के अनुरूप रचना का कार्य संपन्न हुआ। नए काव्य का अधिकांश विचारपरक और वर्णनात्मक है।

सन् 1920-40 के दो दशकों में आधुनिक साहित्य के अंतर्गत वैचारिक और कलात्मक प्रवृत्तियों का अनेक रूप उत्कर्ष दिखाई पड़ा। सर्वाधिक लोकप्रियता उपन्यास और कहानी को मिली। कथासाहित्य में घटनावैचित्र्य की जगह जीते-जागते स्मरणीय चरित्रों की सृष्टि हुई। निम्न और मध्यवर्गीय समाज के यथार्थपरक चित्र व्यापक रूप में प्रस्तुत किए गए। वर्णन की सजीव शैलियों का विकास हुआ। इस समय के सर्वप्रमुख कथाकार **प्रेमचंद** हैं। **वृंदावनलाल वर्मा** के ऐतिहासिक उपन्यास भी उल्लेख्य है। हिन्दी नाटक इस समय जयशंकर प्रसाद के साथ सृजन के नवीन स्तर पर आरोहण करता है। उनके रोमांटिक ऐतिहासिक नाटक अपनी जीवंत चारित्र्यसृष्टि, नाटकीय संघर्षों की योजना और संवेदनीयता के कारण विशेष महत्त्व के अधिकारी हुए। कई अन्य नाटककार भी सक्रिय दिखाई पड़े। हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में रामचंद्र शुक्ल ने सूर, तुलसी और जायसी की सूक्ष्म भावस्थितियों और कलात्मक विशेषताओं का मार्मिक उद्‍घाटन किया और साहित्य के सामाजिक मूल्यों पर बल दिया। अन्य आलोचक है **श्री नंददुलारे वाजपेयी, डॉ. नगेंद्र तथा डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी**।

काव्य के क्षेत्र में यह छायावाद के विकास का युग है। पूर्ववर्ती काव्य वस्तुनिष्ठ था, छायावादी काव्य भावनिष्ठ है। इसमें व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का प्राधान्य है। स्थूल वर्णन विवरण के स्थान पर छायावादी काव्य में व्यक्ति की स्वच्छंद भावनाओं की कलात्मक अभिव्यक्ति हुई। स्थूल तथ्य और वस्तु की अपेक्षा बिंब विधायक कल्पना छायावादियों को अधिक प्रिय है। उनकी सौंदर्यचेतना विशेष विकसित है। प्रकृति सौंदर्य ने उन्हें विशेष आकृष्ट किया। वैयक्तिक संवेगों की प्रमुखता के कारण छायावादी काव्य मूलतः प्रगीतात्मक है। इस समय खड़ी बोली काव्यभाषा की अभिव्यक्ति क्षमता का अपूर्व विकास हुआ। **जयशंकर प्रसाद, माखनलाल, सुमित्रनंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', महादेवी, नवीन** और **दिनकर** छायावाद के उत्कृष्ट कवि हैं।

सन् 1940 के बाद छायावाद की संवेगनिष्ठ, सौंदर्यमूलक और कल्पनाप्रिय व्यक्तिवाद प्रवृत्तियों के विरोध में प्रगतिवाद का संघबद्ध आंदोलन चला जिसकी दृष्टि समाजबद्ध, यथार्थवादी और उपयोगितावादी है। सामाजिक वैषम्य और वर्गसंघर्ष का भाव इसमें विशेष मुखर हुआ। इसने साहित्य को सामाजिक क्रांति के अस्त्र के रूप में ग्रहण किया। अपनी उपयोगितावादी दृष्टि की सीमाओं के कारण प्रगतिवादी साहित्य, विशेषत: कविता में कलात्मक उत्कर्ष की संभावनाएँ अधिक नहीं थीं, फिर भी उसने साहित्य के सामाजिक पक्ष पर बल देकर एक नई चेतना जाग्रत की।

प्रगतिवादी आंदोलन के आरंभ के कुछ ही बाद नए मनोविज्ञान या मनोविश्लेषणशास्त्र से प्रभावित एक और व्यक्तिवादी प्रवृत्ति साहित्य के क्षेत्र में सक्रिय हुई थी जिसे सन् 1943 के बाद प्रयोगवाद नाम दिया गया। इसी का संशोधित रूप वर्तमानकालीन नई कविता और नई कहानियाँ हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि द्वितीय महायुद्ध और उसके उत्तरकालीन साहित्य में जीवन की विभीषिका, कुरूपता और असंगतियों के प्रति अंसतोष तथा क्षोभ ने कुछ आगे पीछे दो प्रकार की प्रवृत्तियों को जन्म दिया। एक का नाम प्रगतिवाद है, जो मार्क्स के भौतिकवादी जीवनदर्शन से प्रेरणा लेकर चलाय दूसरा प्रयोगवाद है, जिसने परंपरागत आदर्शों और संस्थाओं के प्रति अपने अंसतोष की तीव्र प्रतिक्रियाओं को साहित्य के नवीन रूपगत प्रयोगों के माध्यम से व्यक्त किया। इस पर नए मनोविज्ञान का गहरा प्रभाव पड़ा।

प्रगतिवाद से प्रभावित कथाकारों में **यशपाल**, **उपेंद्रनाथ अश्क**, **अमृतलाल नागर** और **नागार्जुन** आदि विशिष्ट हैं। आलोचकों में **रामविलास शर्मा**, **नामवर सिंह**, **विजयदेव नारायण** साही प्रमुख हैं। कवियों में केदारनाथ अग्रवाल, **नागार्जुन**, **रांगेय राघव, शिवमंगल सिंह** 'सुमन' आदि के नाम प्रसिद्ध हैं। निबन्ध विधा में इस दौर में **आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, विद्या निवास मिश्र और कुबेरनाथ राय** ने विशेष ख्याति अर्जित की।

नए मनोविज्ञान से प्रभावित प्रयोगों के लिए सचेष्ट कथाकारों में अज्ञेय प्रमुख हैं। मनोविज्ञान से गंभीर रूप में प्रभावित **इलाचंद्र जोशी** और **जैनेंद्र** हैं। इन लेखकों ने व्यक्तिमन के अवचेतन का उद्घाटन कर नया नैतिक बोध जगाने का प्रयत्न किया। जैनेंद्र और अज्ञेय ने कथा के परंपरागत ढाँचे को तोड़कर शैलीशिल्प संबंधी नए प्रयोग किए। परवर्ती लेखकों और कवियों में वैयक्तिक प्रतिक्रियाएँ अधिक प्रखर हुईं। समकालीन परिवेश से वे पूर्णत: संसक्त हैं। उन्होंने

समाज और साहित्य की मान्यताओं पर गहरा प्रश्नचिह्न लगा दिया है। व्यक्तिजीवन की लाचारी, कुंठा, आक्रोश आदि व्यक्त करने के साथ ही वे वैयक्तिक स्तर पर नए जीवनमूल्यों के अन्वेषण में लगे हुए हैं। उनकी रचनाओं में एक ओर सार्वभौम संत्रास और विभीषिका की छटपटाहट है तो दूसरी ओर व्यक्ति के अस्तित्त्व की अनिवार्यता और जीवन की संभावनाओं को रेखांकित करने का उपक्रम भी। हमारा समकालीन साहित्य आत्यंतिक व्यक्तिवाद से ग्रस्त है और यह उसकी सीमा है। पर उसका सबसे बड़ा बल उसकी जीवनमयता है, जिसमें भविष्य की सशक्त संभावनाएँ निहित हैं।

हिन्दी भाषा–क्षेत्र, स्वरूप तथा विकास

प्रत्येक भाषा के अनेक भेद होते हैं। किसी भी भाषा–क्षेत्र में एक ओर भाषा–क्षेत्र की क्षेत्रगत भिन्नताओं के आधार पर अनेक भेद होते हैं (यथा – बोली और भाषा) तो दूसरी ओर सामाजिक भिन्नताओं के आधार पर भाषा की वर्गगत बोलियाँ होती हैं। भाषा–व्यवहार अथवा भाषा–प्रकार्य की दृष्टि से भी भाषा के अनेक भेद होते हैं। (यथा– मानक भाषा, उपमानक भाषा अथवा शिष्टेतर भाषा, अपभाषा, विशिष्ट वाग्व्यवहार की शैलियाँ, साहित्यिक भाषा आदि)। विशिष्ट प्रयोजनों की सिद्धि के लिए प्रयोजनमूलक भाषा के अनेक रूप होते हैं।

जब भिन्न भाषाओं के बोलने वाले एक ही क्षेत्र में निवास करने लगते हैं तो भाषाओं के संसर्ग से विशिष्ट भाषा प्रकार विकसित हो जाते हैं। (यथा –पिजिन, क्रिओल)। भाषा के असामान्य रूपों के उदाहरण गुप्त भाषा एवं कृत्रिम भाषा आदि हैं।

यहाँ यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि इस सम्बंध में न केवल सामान्य व्यक्ति के मन में अनेक भ्रामक धारणाएँ बनी हुई हैं प्रत्युत हिन्दी भाषा के कतिपय अध्येताओं, विद्वानों तथा प्रतिष्ठित आलोचकों का मन भी तत्सम्बंधित भ्रांतियों से मुक्त नहीं है। हिन्दी कभी अपने भाषा–क्षेत्र की सीमाओं में नहीं सिमटी। यह हिमालय से लेकर कन्याकुमारी और द्वारका से लेकर कटक तक भारतीय लोक चेतना की संवाहिका रही। सम्पर्क भाषा हिन्दी की एक अन्य विशिष्टता यह रही कि यह किसी बँधे–बँधाए मानक रूप की सीमाओं में नहीं जकड़ी। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि केवल बोलचाल की भाषा में ही यह प्रवृत्ति नहीं है, साहित्य में प्रयुक्त हिन्दी में भी यह प्रवृत्ति मिलती है।

हिन्दी साहित्य की समावेशी एवं संश्लिष्ट परम्परा रही है और हिन्दी साहित्य के इतिहास अध्ययन और अध्यापन की भी समावेशी एवं संश्लिष्ट परम्परा रही है। हिन्दी की इस समावेशी एवं संश्लिष्ट परम्परा को जानना बहुत जरूरी है तथा इसे आत्मसात् करना भी बहुत जरूरी है तभी हिन्दी क्षेत्र की अवधारणा को जाना जा सकता है और जो ताकतें हिन्दी को उसके अपने ही घर में तोड़ने का कुचक्र रच रही हैं तथा हिन्दी की ताकत को समाप्त करने के षड्यंत्र कर रही हैं उन ताकतों के षड्यंत्रों को बेनकाब किया जा सकता है तथा उनके कुचक्रों को ध्वस्त किया जा सकता है।

वर्तमान में हम हिन्दी भाषा के इतिहास के बहुत महत्त्वपूर्ण मोड़ पर खड़े हुए हैं। आज बहुत सावधानी बरतने की जरूरत है। आज हिन्दी को उसके अपने ही घर में तोड़ने के जो प्रयत्न हो रहे हैं सबसे पहले उन्हें जानना और पहचानना जरूरी है और इसके बाद उनका प्रतिकार करने की जरूरत है। यदि आज हम इससे चूक गए तो इसके भयंकर परिणाम होंगे। मुझे सन् 1993 के एक प्रसंग का स्मरण आ रहा है। मध्य प्रदेश के तत्कालीन शिक्षा मंत्री ने भारत सरकार के मानव संसाधन मंत्री को मध्य प्रदेश में 'मालवी भाषा शोध संस्थान' खोलने तथा उसके लिए अनुदान का प्रस्ताव भेजा था। उस समय भारत सरकार के मानव संसाधन मंत्री श्री अर्जुन सिंह थे जिनके प्रस्तावक से निकट के सम्बंध थे। मंत्रालय ने उक्त प्रस्ताव केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के निदेशक होने के नाते लेखक के पास टिप्पण देने के लिए भेजा। लेखक ने सोच समझकर टिप्पण लिखा: "भारत सरकार को पहले यह सुनिश्चित करना चाहिए कि मध्य प्रदेश हिन्दी भाषी राज्य है अथवा बुन्देली, बघेली, छत्तीसगढ़ी, मालवी, निमाड़ी आदि भाषाओं का राज्य है"। मुझे पता चला कि उक्त टिप्पण के बाद प्रस्ताव को ठंढे बस्ते में डाल दिया गया।

एक ओर हिन्दीतर राज्यों के विश्वविद्यालयों और विदेशों के लगभग 176 विश्वविद्यालयों एवं संस्थाओं में हजारों की संख्या में शिक्षार्थी हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन और शोध कार्य में समर्पण-भावना तथा पूरी निष्ठा से प्रवृत्त तथा संलग्न हैं वहीं दूसरी ओर हिन्दी भाषा-क्षेत्र में ही अनेक लोग हिन्दी के विरुद्ध साजिश रच रहे हैं। सामान्य व्यक्ति ही नहीं, हिन्दी के तथाकथित विद्वान भी हिन्दी का अर्थ खड़ी बोली मानने की भूल कर रहे हैं। हिन्दी साहित्य को जिंदगी भर पढ़ाने वाले, हिन्दी की रोजी रोटी खाने वाले, हिन्दी की कक्षाओं में हिन्दी पढ़ने वाले विद्यार्थियों को विद्यापति, जायसी, तुलसीदास, सूरदास जैसे

हिन्दी के महान साहित्यकारों की रचनाओं को पढ़ाने वाले अध्यापक तथा इन पर शोध एवं अनुसंधान करने एवं कराने वाले आलोचक भी न जाने किस लालच में या आँखों पर पट्टी बाँधकर यह घोषणा कर रहे हैं कि हिन्दी का अर्थ तो केवल खड़ी बोली है। भाषा विज्ञान के भाषा–भूगोल एवं बोली विज्ञान (Linguistic Geography and Dialectology) के सिद्धांतों से अनभिज्ञ ये लोग ऐसे वक्तव्य जारी कर रहे हैं, जैसे वे इन विषयों के विशेषज्ञ हों। क्षेत्रीय भावनाओं को उभारकर एवं भड़काकर ये लोग हिन्दी की समावेशी एवं संश्लिष्ट परम्परा को नष्ट करने पर आमादा हैं।

जब लेखक जबलपुर के विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर हिन्दी एवं भाषा विज्ञान विभाग का प्रोफेसर था, उसके पास विभिन्न विश्वविद्यालयों से हिन्दी की उप–भाषाओं/बोलियों पर पी–एच. डी. एवं डी. लिट्. उपाधियों के लिए प्रस्तुत शोध प्रबंध जाँचने के लिए आते थे। लेखक ने ऐसे अनेक शोध प्रबंध देखे जिनमें एक ही पृष्ठ पर एक पैरा में विवेच्य बोली को उपबोली का दर्जा दिया दिया गया, दूसरे पैरा में उसको हिन्दी की बोली निरूपित किया गया तथा तीसरे पैरा में उसे भारत की प्रमुख भाषा के अभिधान से महिमामंडित कर दिया गया।

इससे यह स्पष्ट है कि शोध छात्रों अथवा शोध छात्राओं को तो जाने ही दीजिए उन शोध छात्रों अथवा शोध छात्राओं के निर्देशक महोदय भी भाषा–भूगोल एवं बोली विज्ञान (Linguistic Geography and Dialectology) के सिद्धांतों से अनभिज्ञ थे।

सन् 2009 में, लेखक ने नामवर सिंह का यह वक्तव्य पढ़ा:

“हिंदी समूचे देश की भाषा नहीं है वरन वह तो अब एक प्रदेश की भाषा भी नहीं है। उत्तरप्रदेश, बिहार जैसे राज्यों की भाषा भी हिंदी नहीं है। वहाँ की क्षेत्रीय भाषाएँ यथा अवधी, भोजपुरी, मैथिल आदि हैं”। इसको पढ़कर मैने नामवर सिंह के इस वक्तव्य पर असहमति के तीव्र स्वर दर्ज कराने तथा हिन्दी के विद्वानों को वस्तुस्थिति से अवगत कराने के लिए लेख लिखा। हिन्दी के प्रेमियों से लेखक का यह अनुरोध है कि इस लेख का अध्ययन करने की अनुकंपा करें जिससे हिन्दी के कथित बड़े विद्वान एवं आलोचक डॉ. नामवर सिंह जैसे लोगों के हिन्दी को उसके अपने ही घर में तोड़ डालने के मंसूबे ध्वस्त हो सकें तथा ऐसी ताकतें बेनकाब हो सकें। जो व्यक्ति मेरे इस कथन को विस्तार से समझना चाहते हैं, वे मेरे ‘क्या उत्तर प्रदेश एवं बिहार हिन्दी भाषी राज्य नहीं हैं’ शीर्षक लेख का अध्ययन कर सकते हैं।

भाषा क्षेत्र

एक भाषा का जन–समुदाय अपनी भाषा के विविध भेदों एवं रूपों के माध्यम से एक भाषिक इकाई का निर्माण करता है। विविध भाषिक भेदों के मध्य सम्भाषण की सम्भाव्यता से भाषिक एकता का निर्माण होता है। एक भाषा के समस्त भाषिक–रूप जिस क्षेत्र में प्रयुक्त होते हैं उसे उस भाषा का 'भाषा–क्षेत्र' कहते हैं। प्रत्येक 'भाषा क्षेत्र में भाषिक भिन्नताएँ प्राप्त होती हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भाषा की भिन्नताओं का आधार प्रायः वर्णगत एवं धर्मगत नहीं होता। एक वर्ण या एक धर्म के व्यक्ति यदि भिन्न भाषा क्षेत्रों में निवास करते हैं तो वे भिन्न भाषाओं का प्रयोग करते हैं। हिन्दू मुसलमान आदि सभी धर्मावलम्बी तमिलनाडु में तमिल बोलते हैं तथा केरल में मलयालम। इसके विपरीत यदि दो भिन्न वर्णों या दो धर्मों के व्यक्ति एक भाषा क्षेत्र में रहते हैं तो उनके एक ही भाषा को बोलने की सम्भावनाएँ अधिक होती हैं। हिन्दी भाषा क्षेत्र में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्व आदि सभा वर्णों के व्यक्ति हिन्दी का प्रयोग करते हैं। यह बात अवश्य है कि विशिष्ट स्थितियों में वर्ण या धर्म के आधार पर भाषा में बोलीगत अथवा शैलीगत प्रभेद हो जाते हैं। कभी–कभी ऐसी भी स्थितियाँ विकसित हो जाती हैं, जिनके कारण एक भाषा के दो रूपों को दो भिन्न भाषाएँ समझा जाने लगता है।

प्रश्न यह उपस्थित होता है कि हम यह किस प्रकार निर्धारित करें कि उच्चारण के कोई दो रूप एक ही भाषा के भिन्न रूप हैं अथवा अलग–अलग भाषाएँ हैं ? इसका एक प्रमुख कारण यह है कि भाषिक भिन्नताएँ सापेक्षिक होती हैं तथा दो भिन्न भाषा क्षेत्रों के मध्य कोई सीधी एवं सरल विभाजक रेखा नहीं खींची जा सकती। यही कारण है कि भाषिक–भूगोल पर कार्य करते समय बहुधा कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। भारत का भाषा–सर्वेक्षण करते समय इसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव ग्रियर्सन को हुआ था। उन्होंने लिखा है कि " सर्वेक्षण का कार्य करते समय यह निश्चित करने में कठिनाई पड़ी कि वास्तव में एक कथित भाषा स्वतंत्र भाषा है, अथवा अन्य किसी भाषा की बोली है, इस सम्बन्ध में इस प्रकार का निर्णय देना जिसे सब लोग स्वीकार कर लेंगे, कठिन है। भाषा और बोली में प्रायः वही सम्बन्ध है, जो पहाड़ तथा पहाड़ी में है। यह निःसंकोच रूप से कहा जा सकता है कि एवरेस्ट पहाड़ है और हालबर्न एक पहाड़ी, किन्तु इन दोनों के बीच की विभाजक रेखा को निश्चित रूप से बताना कठिन है।.... सच तो यह है कि दो बोलियों अथवा भाषाओं में भेदीकरण

केवल पारस्परिक वार्ता सम्बन्ध पर ही निर्भर नहीं करता। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इस सम्बन्ध में विचार करने के लिए अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्यों को भी दृष्टि में रखना आवश्यक है।

व्यावहारिक दृष्टि से जिस क्षेत्र में भाषा के विभिन्न भेदों में पारस्परिक बोधगम्यता होती है, वह क्षेत्र उस भाषा के विभिन्न भेदों का 'भाषा-क्षेत्र' कहलाता है। भिन्न भाषा-भाषी व्यक्ति परस्पर विचारों का आदान-प्रदान नहीं कर पाते। इस प्रकार जब एक व्यक्ति अपनी भाषा के माध्यम से दूसरे भाषा-भाषी को भाषा के स्तर पर अपने विचारों, भावनाओं, कल्पनाओं, संवेदनाओं का बोध नहीं करा पाता, तब ऐसी स्थिति में उन दो व्यक्तियों के भाषा रूपों को अलग-अलग भाषाओं के नाम से अभिहित किया जाता है। इस बात को इस तथ्य से समझा जा सकता है कि जब कोई ऐसा तमिल-भाषी व्यक्ति जो पहले से हिन्दी नहीं जानता, हिन्दी-भाषी व्यक्ति से बात करता है, तो वह हिन्दी-भाषी व्यक्ति द्वारा कही गई बात को भाषा के माध्यम से नहीं समझ पाता, भले ही वह कही गई बात का आशय संकेतों, मुख मुद्राओं, भाव-भंगिमाओं के माध्यम से समझ जाए। इसके विपरीत यदि कन्नौजी बोलने वाला व्यक्ति अवधी बोलने वाले से बातें करता है, तो दोनों को विचारों के आदान-प्रदान करने में कठिनाइयाँ तो होती हैं, किन्तु फिर भी वे किसी न किसी मात्रा में विचारों का आदान-प्रदान कर लेते हैं। भाषा रूपों की भिन्नता अथवा एकता का यह व्यावहारिक आधार है। भिन्न भाषा रूपों को एक ही भाषा के रूप में अथवा अलग-अलग भाषाओं के रूप में मान्यता दिलाने में ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक एवं उन भाषिक रूपों की संरचना एवं व्यवस्था आदि कारण एवं तथ्य अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं, तथा कभी-कभी 'पारस्परिक बोधगम्यता' अथवा 'एक तरफा बोधगम्यता' के व्यावहारिक सिद्धांत की अपेक्षा अधिक निर्णायक हो जाते हैं।

इस दृष्टि से कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं। ऐतिहासिक कारणों से वैनिशन (Venetian) तथा सिसिली (Sicily) को इटाली भाषा की बोलियाँ माना जाता है, यद्यपि इनमें पारस्परिक बोधगम्यता का प्रतिशत बहुत कम है। इसी प्रकार लैपिश (Lappish) को एक ही भाषा माना जाता है। इसके अन्तर्गत परस्पर अबोधगम्य भाषिक रूप समाहित हैं। इसके विपरीत राजनैतिक कारणों से डेनिश, नार्वेजियन एवं स्वेडिश को अलग-अलग भाषाएँ माना जाता है। इनमें पारस्परिक बोधगम्यता का प्रतिशत वैनिशन तथा सिसिली के पारस्परिक

बोधगम्यता के प्रतिशत से कम नहीं है। भारतवर्ष के संदर्भ में हिन्दी भाषा के पश्चिमी वर्ग की उप-भाषाओं तथा बिहारी वर्ग की उप-भाषाओं के मध्य बोधगम्यता का प्रतिशत कम है। 'बिहारी वर्ग' की उप-भाषाओं पर कार्य करने वाले भाषा-वैज्ञानिकों ने उनमें संरचनात्मक भिन्नताएँ भी पर्याप्त मानी हैं। इतना होने पर भी सांस्कृतिक, राष्ट्रीय एवं ऐतिहासिक कारणों से भोजपुरी एवं मगही बोलने वाले अपने को हिन्दी भाषा-भाषी मानते हैं। ये भाषिक रूप हिन्दी भाषा-क्षेत्र के अन्तर्गत समाहित हैं। इसके विपरीत यद्यपि असमिया एवं बांग्ला में पारस्परिक बोधगम्यता एवं संरचनात्मक साम्यता का प्रतिशत कम नहीं है तथापि ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक कारणों से इनके बोलने वाले इन भाषा रूपों को भिन्न भाषाएँ मानते हैं। इसी कारण कुछ विद्वानों का मत है कि भाषा-क्षेत्र उस क्षेत्र के प्रयोक्ताओं की मानसिक अवधारणा है। भाषा-क्षेत्र में बोली जाने वाली विभिन्न बोलियों के प्रयोक्ता अपने-अपने भाषिक-रूप की पहचान उस भाषा के रूप में करते हैं। विशेष रूप से जब वे किसी भिन्न भाषा-भाषी-क्षेत्र में रहते हैं तो वे अपनी अस्मिता की पहचान उस भाषा के प्रयोक्ता के रूप में करते हैं।

यदि दो भाषा-क्षेत्रों के मध्य कोई पर्वत या सागर जैसी बड़ी प्राकृतिक सीमा नहीं होती अथवा उन क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों के अलग-अलग क्षेत्रों में उनके सामाजिक सम्पर्क को बाधित करने वाली राजनैतिक सीमा नहीं होती तो उन भाषा क्षेत्रों के मध्य कोई निश्चित एवं सरल रेखा नहीं खींची जा सकती। प्रत्येक दो भाषाओं के मध्य प्राय: ऐसा 'क्षेत्र' होता है, जिसमें निवास करने वाले व्यक्ति उन दोनों भाषाओं को किसी न किसी रूप में समझ लेते हैं। ऐसे क्षेत्र को उन भाषाओं का 'संक्रमण-क्षेत्र' कहते हैं।

जिस प्रकार अपभ्रंश और हिन्दी के बीच किसी एक वर्ष की 'काल रेखा' निर्धारित नहीं की जा सकती, फिर भी एक युग 'अपभ्रंश-युग' कहलाता है और दूसरा हिन्दी, मराठी, गुजराती आदि 'नव्यतर भारतीय आर्य भाषाओं का युग' कहलाता है, उसी प्रकार यद्यपि हिन्दी और मराठी के बीच (अथवा अन्य किन्हीं दो भाषाओं के बीच) हम किलोमीटर या मील की कोई रेखा नहीं खींच सकते फिर भी एक क्षेत्र हिन्दी का कहलाता है और दूसरा मराठी का। ऐतिहासिक दृष्टि से अपभ्रंश और हिन्दी के बीच एव 'सन्धि-युग' है, जो इन दो भाषाओं के काल-निर्धारण का काम करता है। संकालिक दृष्टि से दो भाषाओं के बीच 'संक्रमण-क्षेत्र' होता है, जो उन भाषाओं के क्षेत्र को निर्धारित करता है।

प्रत्येक भाषा-क्षेत्र में भाषिक भेद होते हैं। हम किसी ऐसे भाषा क्षेत्र की कल्पना नहीं कर सकते जिसके समस्त भाषा-भाषी भाषा के एक ही रूप के माध्यम से विचारों का आदान-प्रदान करते हों। यदि हम वर्तमानकाल में किसी ऐसे भाषा-क्षेत्र का निर्माण कर भी लें, जिसकी भाषा में एक ही बोली हो तब भी कालान्तर में उस क्षेत्र में विभिन्नताएँ विकसित हो जाती हैं। इसका कारण यह है कि किसी भाषा का विकास सम्पूर्ण क्षेत्र में समरूप नहीं होता। परिवर्तन की गति क्षेत्र के अलग-अलग भागों में भिन्न होती है। विश्व के भाषा-इतिहास में ऐसा कोई भी उदाहरण प्राप्त नहीं है, जिसमें कोई भाषा अपने सम्पूर्ण क्षेत्र में समान रूप से परिवर्तित हुई हो।

भाषा और बोली के युग्म पर विचार करना सामान्य धारणा है। सामान्य व्यक्ति भाषा को विकसित और बोली को अविकसित मानता है। सामान्य व्यक्ति भाषा को शिक्षित, शिष्ट, विद्वान एवं सुजान प्रयोक्ताओं से जोड़ता है और बोली को अशिक्षित, अशिष्ट, मूर्ख एवं गँवार प्रयोक्ताओं से जोड़ता है। भाषा विज्ञान इस धारणा को अतार्किक और अवैज्ञानिक मानता है। भाषा विज्ञान भाषा को निम्न रूप से परिभाषित करता है – 'भाषा अपने भाषा-क्षेत्र में बोली जाने वाली समस्त बोलियों की समष्टि का नाम है'।

भाषा-क्षेत्र के सम्भावित भेद-प्रभेदों

व्यक्ति बोलियाँ

एक भाषा क्षेत्र में 'एकत्व' की दृष्टि से एक ही भाषा होती है, किन्तु 'भिन्नत्व' की दृष्टि से उस भाषा क्षेत्र में जितने बोलने वाले निवास करते हैं उसमें उतनी ही भिन्न व्यक्ति-बोलियाँ होती हैं। प्रत्येक व्यक्ति भाषा के द्वारा समाज के व्यक्तियों से सम्प्रेषण-व्यवहार करता है। भाषा के द्वारा अपने निजी व्यक्तिव का विकास एवं विचार की अभिव्यक्ति करता है। प्रत्येक व्यक्ति के निजी व्यक्तित्त्व का प्रभाव उसके अभिव्यक्तिकरण व्यवहार पर भी पड़ता है।

प्रत्येक व्यक्ति के अनुभवों, विचारों, आचरण पद्धतियों, जीवन व्यवहारों एवं कार्यकलापों की निजी विशेषताएँ होती हैं। समाज के सदस्यों के व्यक्तित्त्व की भेदक भिन्नताओं का प्रभाव उनके व्यक्ति-भाषा-रूपों पर पड़ता है और इस कारण प्रत्येक व्यक्ति बोली (idiolect) में निजी भिन्नताएँ अवश्य होती हैं। व्यक्ति बोली के धरातल पर एक व्यक्ति जिस प्रकार बोलता है, ठीक उसी

प्रकार दूसरा कोई व्यक्ति नहीं बोलता। यही कारण है कि हम किसी व्यक्ति को भले ही न देखें मगर मात्रा उसकी आवाज को सुनकर उसको पहचान लेते हैं।

यदि भिन्नताओं को और सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो यह बात कही जा सकती है कि स्वनिक स्तर पर कोई भी व्यक्ति एक ध्वनि को उसी प्रकार दोबारा उच्चारित नहीं कर सकता। यदि एक व्यक्ति 'प', ध्वनि का सौ बार उच्चारण करता है तो वे 'प' ध्वनि के सौ स्वन होते हैं। इन स्वनों की भिन्नताओं को हमारे कान नहीं पहचान पाते। जब भौतिक ध्वनि विज्ञान के अन्तर्गत ध्वनि-यन्त्रों की सहायता से इसका अध्ययन किया जाता है तो ध्वनि यन्त्र इनके सूक्ष्म अन्तरों को पकड़ पाने की क्षमता रखते हैं। 'स्वनिक स्तर' पर प्रत्येक ध्वनि का प्रत्येक उच्चारण एक अलग स्वन होता है।

जिस प्रकार दार्शनिक धरातल पर बौद्ध दर्शन के अनुसार इस संसार के प्रत्येक पदार्थ में प्रतिक्षण परिवर्तन होता है उसी प्रकार भाषा के प्रत्येक व्यक्ति की प्रत्येक ध्वनि का प्रत्येक उच्चार यत्किंचित भिन्नताएँ लिए होता है तथा जिस प्रकार अद्वैतवादी के अनुसार इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में एक ही परमात्म-तत्त्व की सत्ता है उसी प्रकार एक भाषा क्षेत्र में व्यवहृत होने वाले समस्त भाषिक रूपों को एक ही भाषा के नाम से पुकारा जाता है।

यदि उच्चारण की स्वनिक भिन्नताओं को छोड़ दें तो एक भाषा-क्षेत्र में उस भाषा-जन-समुदाय के जितने सदस्य होते हैं उतनी ही उसमें व्यक्ति-बोलियाँ होती हैं। उन समस्त व्यक्ति-बोलियों के समूह का नाम भाषा है।

बोली

भाषा-क्षेत्र की समस्त व्यक्ति-बोलियों एवं उस क्षेत्र की भाषा के मध्य प्रायः बोली का स्तर होता है। भाषा की क्षेत्रगत एवं वर्गगत भिन्नताओं को क्रमशः क्षेत्रगत एवं वर्गगत बोलियों के नाम से पुकारा जाता है। इसको इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि भाषा की संरचक बोलियाँ होती हैं, तथा बोली की संरचक व्यक्ति बोलियाँ।

इस प्रकार तत्त्वतः बोलियों की समष्टि का नाम भाषा है। 'भाषा क्षेत्र' की क्षेत्रगत भिन्नताओं एवं वर्गगत भिन्नताओं पर आधारित भाषा के भिन्न रूप उसकी बोलियाँ हैं। बोलियों से ही भाषा का अस्तित्त्व है। इस प्रसंग में, यह सवाल उठाया जा सकता है कि सामान्य व्यक्ति अपने भाषा-क्षेत्र में प्रयुक्त बोलियों से इतर जिस भाषिक रूप को सामान्यतः 'भाषा' समझता है वह फिर क्या है। वह

असल में उस भाषा क्षेत्र की किसी क्षेत्रीय बोली के आधार पर विकसित 'उस भाषा का मानक भाषा रूप' होता है।

इस दृष्टि के कारण ऐसे व्यक्ति 'मानक भाषा' या 'परिनिष्ठित भाषा' को मात्रा 'भाषा' नाम से पुकारते हैं तथा अपने इस दृष्टिकोण के कारण 'बोली' को भाषा का भ्रष्ट रूप, अपभ्रंश रूप तथा 'गँवारू भाषा' जैसे नामों से पुकारते हैं। वस्तुतः बोलियाँ अनौपचारिक एवं सहज अवस्था में अलग-अलग क्षेत्रों में उच्चारित होने वाले रूप हैं, जिन्हें संस्कृत में 'देश भाषा' तथा अपभ्रंश में 'देसी भाषा' कहा गया है। भाषा का 'मानक' रूप समस्त बोलियों के मध्य सम्पर्क सूत्र का काम करता है। भाषा की क्षेत्रगत एवं वर्गगत भिन्नताएँ उसे बोलियों के स्तरों में विभाजित कर देती हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि बोलियों के स्तर पर विभाजित भाषा के रूप निश्चित क्षेत्र अथवा वर्ग में व्यवहृत होते हैं, जबकि प्रकार्यात्मक धरातल पर विकसित भाषा के मानक रूप, उपमानक रूप, विशिष्ट रूप (अपभाषा, गुप्त भाषा आदि) पूरे भाषा क्षेत्र में प्रयुक्त होते हैं, भले ही इनके बोलने वालों की संख्या न्यूनाधिक हो।

प्रत्येक उच्चारित एवं व्यवहृत भाषा की बोलियाँ होती हैं। किसी भाषा में बोलियों की संख्या दो या तीन होती है तो किसी में बीस-तीस भी होती है। कुछ भाषाओं में बोलियों का अन्तर केवल कुछ विशिष्ट ध्वनियों के उच्चारण की भिन्नताओं तथा बोलने के लहजे मात्रा का होता है, जबकि कुछ भाषाओं में बोलियों की भिन्नताएँ भाषा के समस्त स्तरों पर प्राप्त हो सकती हैं। दूसरे शब्दों में, बोलियों में ध्वन्यात्मक, ध्वनिग्रामिक, रूपग्रामिक, वाक्यविन्यासीय, शब्दकोषीय एवं अर्थ सभी स्तरों पर अन्तर हो सकते हैं। कहीं-कहीं ये भिन्नताएँ इतनी अधिक होती हैं कि एक सामान्य व्यक्ति यह बता देता है कि अमुक भाषिक रूप का बोलने वाला व्यक्ति अमुक बोली क्षेत्र का है।

किसी-किसी भाषा में क्षेत्रगत भिन्नताएँ इतनी व्यापक होती हैं तथा उन भिन्न भाषिक-रूपों के क्षेत्र इतने विस्तृत होते हैं कि उन्हें सामान्यतः भाषाएँ माना जा सकता है। इसका उदाहरण चीन देश की मंदारिन भाषा है, जिसकी बोलियों के क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत हैं तथा उनमें से बहुत-सी परस्पर अबोधगम्य भी हैं। जब तक यूगोस्लाविया एक देश था तब तक क्रोएशियाई और सर्बियाई को एक भाषा की दो बोलियाँ माना जाता था। यूगोस्लाव के विघटन के बाद से इन्हें भिन्न भाषाएँ माना जाने लगा है। ये उदाहरण इस तथ्य को प्रतिपादित करते हैं कि

पारस्परिक बोधगम्यता के सिद्धांत की अपेक्षा कभी-कभी सांस्कृतिक एवं राजनैतिक कारण अधिक निर्णायक भूमिका अदा करते हैं।

हिन्दी भाषा क्षेत्र में भी 'राजस्थानी' एवं 'भोजपुरी' के क्षेत्र एवं उनके बोलने वालों की संख्या संसार की बहुत-सी भाषाओं के क्षेत्र एवं बोलने वालों की संख्या से अधिक है। 'हिन्दी भाषा-क्षेत्र' में, सामाजिक-सांस्कृतिक समन्वय के प्रतिमान के रूप में मानक अथवा व्यावहारिक हिन्दी सामाजिक जीवन में परस्पर आश्रित सहसम्बन्धों की स्थापना करती है। सम्पूर्ण हिन्दी भाषा क्षेत्र में मानक अथवा व्यावहारिक हिन्दी के उच्च प्रकार्यात्मक सामाजिक मूल्य के कारण ये भाषिक रूप 'हिन्दी भाषा' के अन्तर्गत माने जाते हैं।

भाषा-क्षेत्र की क्षेत्रगत भिन्नताओं के सम्भावित स्तर-

अभी तक हमने किसी भाषा-क्षेत्र में तीन भाषिक स्तरों की विवेचना की है–

(1) व्यक्ति-बोली

(2) बोली

(3) भाषा।

व्यक्ति-बोलियों के समूह को 'बोली' तथा बोलियों के समूह को 'भाषा' कहा गया है। जिस प्रकार किसी भाषा के व्याकरण में शब्द एवं वाक्य के बीच अनेक व्याकरणिक स्तर हो सकते हैं उसी प्रकार भाषा एवं बोली एवं व्यक्ति-बोली के बीच अनेक भाषा स्तर हो सकते हैं। इन अनेक स्तरों के निम्न में से कोई एक अथवा अनेक आधार हो सकते हैं-

I. भाषा क्षेत्र का विस्तार एवं फैलाव

II. उस भाषा क्षेत्र के विविध उपक्षेत्रों की भौगोलिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक स्थितियाँ

III. भाषा-क्षेत्र में निवास करने वाले व्यक्तियों के पारस्परिक सामाजिक और भावात्मक सम्बन्ध

उप-भाषा

यदि किसी भाषा में बोलियों की संख्या बहुत अधिक होती है तथा उस भाषा का क्षेत्र बहुत विशाल होता है तो पारस्परिक बोधगम्यता अथवा अन्य भाषेतर कारणों से बोलियों के वर्ग बन जाते हैं। इनको 'उप भाषा' के स्तर के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

उपबोली

यदि एक बोली का क्षेत्र बहुत विशाल होता है तो उसमें क्षेत्रगत अथवा वर्गगत भिन्नताएँ स्पष्ट दिखाई देती हैं। इनको बोली एवं व्यक्ति-बोली के बीच 'उपबोली' का स्तर माना जाता है। उपबोली को कुछ भाषा वैज्ञानिकों ने पेटवा, जनपदीय बोली अथवा स्थान-विशेष की बोली के नाम से पुकारना अधिक संगत माना है।

इसको इस प्रकार भी व्यक्त किया जा सकता है कि किसी भाषा क्षेत्र में भाषा की संरचक उप-भाषाएँ, उप-भाषा की संरचक बोलियाँ, बोली की संरचक उपबोलियाँ तथा उपबोली की संरचक व्यक्ति बोलियाँ हो सकती हैं। व्यक्ति-बोली से लेकर भाषा तक अनेक वर्गीकृत स्तरों का अधिक्रम हो सकता है।

हिन्दी भाषा-क्षेत्र के क्षेत्रीय भाषिक-रूप

हिन्दी भाषा के संदर्भ में विचारणीय है कि अवधी, बुन्देली, छत्तीसगढ़ी, ब्रज, कन्नौजी, खड़ी बोली को बोलियाँ माने या उप-भाषाएँ ?

यहाँ यह द्रष्टव्य है कि इनके क्षेत्र तथा इनके बोलने वालों की संख्या काफी विशाल है तथा इनमें बहुत अधिक भिन्नताएँ हैं, जिनके कारण इनको बोली की अपेक्षा उप-भाषा मानना अधिक संगत है। उदाहरण के रूप में यदि बुन्देली को उप-भाषा के रूप में स्वीकार किया जाता है तो पंवारी , लोधान्ती, खटोला, भदावरी, सहेरिया तथा 'छिन्दवाड़ा बुन्देली' आदि रूपों को बुन्देली उप-भाषा की बोलियाँ माना जा सकता है। इन बोलियों में एक या एक से अधिक बोलियों की अपनी उपबोलियाँ हैं। उदाहरण के रूप में बुन्देली उप-भाषा की 'छिन्दवाड़ा बुन्देली' बोली की पोवारी, गाओंली, राघोबंसी, किरारी आदि उपबोलियाँ है। इस प्रकार बुन्देली के संदर्भ में व्यक्तिगत बोली, उपबोली, बोली, एवं उप-भाषा रूप प्राप्त हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि जिस प्रकार बुन्देली में बोलियाँ एवं उनकी उपबोलियाँ मिलती हैं उसी प्रकार कन्नौजी की बोलियाँ एवं उनकी उपबोलियाँ अथवा हरियाणवी की बोलियाँ एवं उपबोलियाँ प्राप्त नहीं होती। किन्तु हरियाणवी एवं कन्नौजी को भी वही दर्जा देना पड़ेगा जो हम बुन्देली को देंगे। यदि हम बुन्देली को हिन्दी की एक उप-भाषा के रूप में स्वीकार करते हैं तो कन्नौजी एवं हरियाणवी भी हिन्दी की उप-भाषाएँ हैं। इस दृष्टि से हिन्दी के क्षेत्रगत रूपों के स्तर वर्गीकरण में कहीं उप-भाषा एवं बोली

के अलग-अलग स्तर हैं तथा कहीं उप-भाषा एवं बोली का एक ही स्तर है। यह बहुत कुछ इसी प्रकार है, जिस प्रकार मिश्र एवं संयुक्त वाक्यों में वाक्य एवं उपवाक्य के स्तर अलग-अलग होते हैं, किन्तु सरल वाक्य में एक ही उपवाक्य होता है।

हिन्दी भाषा के संदर्भ में विचारणीय है कि क्या उप-भाषा एवं भाषा के बीच भी कोई स्तर स्थापित किया जाना चाहिए अथवा नहीं। इसका कारण यह है कि जिन भाषा रूपों को हमने उप-भाषाएँ कहा है उन उप-भाषाओं को ग्रियर्सन ने भाषा-सर्वेक्षण में ऐतिहासिक सम्बंधों के आधार पर 05 वर्गों में बाँटा है तथा प्रत्येक वर्ग में एकाधिक उप-भाषाओं को समाहित किया है। ये पाँच वर्ग निम्नलिखित है–

(1) पश्चिमी हिन्दी
(2) पूर्वी हिन्दी
(3) राजस्थानी हिन्दी
(4) बिहारी हिन्दी
(5) पहाड़ी हिन्दी।

इस सम्बंध में लेखक का मत है कि संकालिक भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से इस प्रकार के वर्गीकरण की आवश्यकता नहीं है। जो विद्वान ग्रियर्सन के ऐतिहासिक भाषा विज्ञान की दृष्टि से इन वर्गों को कोई नाम देना ही चाहते हैं तो वे हिन्दी के सन्दर्भ में उप-भाषा एवं भाषा के बीच उप-भाषा की समूह गत इकाइयों को अन्य किसी नाम के अभाव में 'उप-भाषावर्ग' के नाम से पुकार सकते हैं।

इस प्रकार जिस भाषा का क्षेत्र अपेक्षाकृत छोटा होता है वहाँ भाषा के केवल 3 क्षेत्रगत स्तर होते हैं––

1. व्यक्ति बोली,
2. बोली,
3. भाषा।

हिन्दी जैसे विस्तृत भाषा-क्षेत्र में निम्नलिखित क्षेत्रगत स्तर हो सकते हैं–

1. व्यक्ति बोली,
2. उपबोली,
3. बोली,
4. उप-भाषा,

5. उप-भाषावर्ग,
6. भाषा।

जो विद्वान हिन्दी भाषा की कुछ उप-भाषाओं को हिन्दी भाषा से भिन्न भाषाएँ मानने के मत एवं विचार प्रस्तुत कर रहे हैं उनके निराकरण के लिए तथा जिज्ञासु पाठकों के अवलोकनार्थ एवं विचारार्थ निम्न टिप्पण प्रस्तुत हैं-

'हिन्दी भाषा क्षेत्र' के अन्तर्गत भारत के निम्नलिखित राज्य एवं केन्द्र शासित प्रदेश समाहित हैं–

1. उत्तर प्रदेश
2. उत्तराखंड
3. बिहार
4. झारखंड
5. मध्यप्रदेश
6. छत्तीसगढ़
7. राजस्थान
8. हिमाचल प्रदेश
9. हरियाणा
10. दिल्ली
11. चण्डीगढ़।

भारत के संविधान की दृष्टि से यही स्थिति है।भाषा विज्ञान का प्रत्येक विद्यार्थी जानता है कि प्रत्येक भाषा क्षेत्र में भाषिक भिन्नताएँ होती हैं। हम यह प्रतिपादित कर चुके हैं कि प्रत्येक 'भाषा क्षेत्र' में क्षेत्रगत एवं वर्गगत भिन्नताएँ होती हैं तथा बोलियों की समष्टि का नाम ही भाषा है। किसी भाषा की बोलियों से इतर व्यवहार में सामान्य व्यक्ति भाषा के जिस रूप को 'भाषा' के नाम से अभिहित करते हैं वह तत्वत: भाषा नहीं होती। भाषा का यह रूप उस भाषा क्षेत्र के किसी बोली अथवा बोलियों के आधार पर विकसित उस भाषा का 'मानक भाषा रूप', 'व्यावहारिक भाषा रूप' होता है। भाषा विज्ञान से अनभिज्ञ व्यक्ति इसी को 'भाषा' कहने लगते हैं तथा 'भाषा क्षेत्र' की बोलियों को अविकसित, हीन एवं गँवारू कहने, मानने एवं समझने लगते हैं।

हम इस संदर्भ में, इस तथ्य को रेखांकित करना चाहते हैं कि भारतीय भाषिक परम्परा इस दृष्टि से अधिक वैज्ञानिक रही है। भारतीय परम्परा ने भाषा के अलग-अलग क्षेत्रों में बोले जाने वाले भाषिक रूपों को 'देस भाखा' अथवा

'देसी भाषा' के नाम से पुकारा तथा घोषणा की कि देसी वचन सबको मीठे लगते हैं – ' देसिल बअना सब जन मिट्ठा।'

हिन्दी भाषा क्षेत्र में हिन्दी की मुख्यत: 20 बोलियाँ अथवा उप-भाषाएँ बोली जाती हैं। इन 20 बोलियों अथवा उप-भाषाओं को ऐतिहासिक परम्परा से पाँच वर्गों में विभक्त किया जाता है – पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, राजस्थानी हिन्दी, बिहारी हिन्दी और पहाड़ी हिन्दी।

पश्चिमी हिन्दी – 1. खड़ी बोली 2. ब्रजभाषा 3. हरियाणवी 4. बुन्देली 5. कन्नौजी

पूर्वी हिन्दी – 1. अवधी 2. बघेली 3. छत्तीसगढ़ी

राजस्थानी – 1. मारवाड़ी 2. मेवाती 3. जयपुरी 4.मालवी

बिहारी – 1. भोजपुरी 2. मैथिली 3. मगही 4. अंगिका 5. बज्जिका

पहाड़ी – 1. कुमाऊँनी 2. गढ़वाली 3. हिमाचल प्रदेश में बोली जाने वाली अनेक बोलियाँ जिन्हें आम बोलचाल में 'पहाड़ी' नाम से पुकारा जाता है।

मैथिली

मैथिली को अलग भाषा का दर्जा दे दिया गया है हालांकि हिन्दी साहित्य के पाठ्यक्रम में अभी भी मैथिली कवि विद्यापति पढ़ाए जाते हैं तथा जब नेपाल में मैथिली आदि भाषिक रूपों के बोलने वाले मधेसी लोगों पर दमनात्मक कार्रवाई होती है तो वे अपनी पहचान 'हिन्दी भाषी' के रूप में उसी प्रकार करते हैं, जिस प्रकार मुम्बई में रहने वाले भोजपुरी, मगही, मैथिली एवं अवधी आदि बोलने वाले अपनी पहचान 'हिन्दी भाषी' के रूप में करते हैं।

छत्तीसगढ़ी एवं भोजपुरी

जबसे मैथिली एवं छत्तीसगढ़ी को अलग भाषाओं का दर्जा मिला है तब से भोजपुरी को भी अलग भाषा का दर्जा दिए जाने की माँग प्रबल हो गई है। हिन्दी को उसके अपने ही घर में तोड़ने का सिलसिला मैथिली एवं छत्तीसगढ़ी से आरम्भ हो गया है। जब तक छत्तीसगढ़ मध्य प्रदेश का हिस्सा था तब तक छत्तीसगढ़ी को हिन्दी की बोली माना जाता था। रायपुर विश्वविद्यालय के भाषा विज्ञान के प्रोफेसर डॉ. रमेश चन्द्र महरोत्र का सन् 1976 में एक आलेख रायपुर से भाषिकी प्रकाशन से प्रकाशित हुआ, जिसमें हिन्दी की 22 बोलियों के अंतर्गत छत्तीसगढ़ी समाहित है।

लेखक भोजपुरी के सम्बंध में भी कुछ निवेदन करना चाहता है। लेखक को जबलपुर के विश्वविद्यालय में डॉ. उदय नारायण तिवारी जी के साथ काम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

डॉ. उदय नारायण तिवारी जी ने भोजपुरी का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन किया। उनके अध्ययन का वही महत्त्व है, जो सुनीति कुमार चाटुर्ज्या के बांग्ला पर सम्पन्न कार्य का है। इस विषय पर हमारे बीच अनेक बार संवाद हुए। कई बार मत भिन्नता भी हुई। जब लेखक भाषा-भूगोल एवं बोली-विज्ञान के सिद्धांतों के आलोक में हिन्दी भाषा-क्षेत्र की विवेचना करता था तो डॉ. तिवारी जी इस मत से सहमत हो जाते थे कि हिन्दी भाषा-क्षेत्र के अंतर्गत भारत के जितने राज्य एवं केन्द्र शासित प्रदेश समाहित हैं, उन समस्त क्षेत्रों में जो भाषिक रूप बोले जाते हैं, उनकी समष्टि का नाम हिन्दी है। खड़ी बोली ही हिन्दी नहीं है अपितु यह भी हिन्दी भाषा-क्षेत्र का उसी प्रकार एक क्षेत्रीय भेद है, जिस प्रकार हिन्दी भाषा-क्षेत्र के अन्य अनेक क्षेत्रीय भेद हैं। मगर कभी-कभी उनका तर्क होता था कि खड़ी बोली बोलने वाले और भोजपुरी बोलने वालों के बीच बोधगम्यता बहुत कम होती है। इस कारण भोजपुरी को यदि अलग भाषा माना जाता है तो इसमें क्या हानि है। जब लेखक कहता था कि भाषा विज्ञान का सिद्धांत है कि संसार की प्रत्येक भाषा के 'भाषा-क्षेत्र' में भाषिक भिन्नताएँ होती हैं। हम ऐसी किसी भाषा की कल्पना नहीं कर सकते जिसके भाषा-क्षेत्र में क्षेत्रगत एवं वर्गगत भिन्नताएँ न हों। इस पर डॉ. तिवारी जी असमंजस में पड़ जाते थे। अनेक वर्षों के संवाद के अनन्तर एक दिन डॉ. तिवारी जी ने मुझे अपने मन के रहस्य से अवगत कराया। उनके शब्द थे–

"जब मैं ऐतिहासिक भाषा विज्ञान के अपने अध्ययन के आधार पर विचार करता हूँ तो मुझे भोजपुरी की स्थिति हिन्दी से अलग भिन्न भाषा की लगती है मगर जब मैं संकालिक भाषा विज्ञान के सिद्धांतों की दृष्टि से सोचता हूँ तो पाता हूँ कि भोजपुरी भी हिन्दी भाषा-क्षेत्र का एक क्षेत्रीय रूप है"।

बहुत से विद्वान यह तर्क देते हैं कि डॉ. उदय नारायण तिवारी ने 'भोजपुरी भाषा और साहित्य' शीर्षक ग्रंथ में 'भोजपुरी' को भाषा माना है। इस सम्बंध में, लेखक विद्वानों को इस तथ्य से अवगत करना चाहता है कि हिन्दी में प्रकाशित उक्त ग्रंथ उनके डी. लिट्. उपाधि के लिए स्वीकृत अंग्रेजी भाषा में लिखे गए शोध-प्रबंध का हिन्दी रूपांतर है। डॉ. उदय नारायण तिवारी ने कलकत्ता में सन् 1941 ईस्वी में पहले 'तुलनात्मक भाषा विज्ञान' में एम. ए. की परीक्षा पास की

तथा सन् 1942 ईस्वी में डी. लिट्. उपाधि के लिए शोध-प्रबंध पूरा करके इलाहाबाद लौट आए तथा उसे परीक्षण के लिए इलाहाबाद विश्वविद्यालय में जमा कर दिया। आपने अपना शोध-प्रबंध अंग्रेजी भाषा में डॉ. सुनीति कुमार चाटुर्ज्या के निर्देशन में सम्पन्न किया तथा डी. लिट्. की उपाधि प्राप्त होने के बाद इसका प्रकाशन 'एशियाटिक सोसाइटी' से हुआ। इस शोध-प्रबंध का शीर्षक है - 'ए डाइलेक्ट ऑफ भोजपुरी'। डॉ. उदय नारायण तिवारी ने इस तथ्य को स्वयं अपने एक लेख अभिव्यक्त किया है।9

राजस्थानी

राजस्थानी भाषा हेतु मुख्यत: निम्न मुद्दों पर विचार करना चाहिए -

(1) ग्रियर्सन ने ऐतिहासिक दृष्टि से विचार किया है। स्वाधीनता आन्दोलन में हमारे राष्ट्रीय नेताओं के कारण हिन्दी का जितना प्रचार प्रसार हुआ उसके कारण हमें ग्रियर्सन की दृष्टि से नहीं अपितु डॉ. धीरेन्द्र वर्मा आदि भाषाविदों की दृष्टि से विचार करना चाहिए।

(2) राजस्थानी भाषा जैसी कोई स्वतंत्र भाषा नहीं है। राजस्थान में निम्न क्षेत्रीय भाषिक-रूप बोले जाते हैं-

1. मारवाड़ी
2. मेवाती
3. जयपुरी
4. मालवी (राजस्थान के साथ-साथ मध्य-प्रदेश में भी)

राजस्थानी जैसी स्वतंत्र भाषा नहीं है। इन विविध भाषिक रूपों को हिन्दी के रूप मानने में क्या आपत्ति हो सकती है।

(3) यदि आप राजस्थानी का मतलब केवल मारवाड़ी से लेंगे तो क्या मेवाती, जयपुरी, मालवी, हाड़ौती, शेखावाटी आदि अन्य भाषिक रूपों के बोलने वाले अपने-अपने भाषिक रूपों के लिए आवाज नहीं उठायेंगे।

(4) भारत की भाषिक परम्परा रही है कि एक भाषा के हजारों भूरि भेद माने गए हैं मगर अंतरक्षेत्रीय सम्पर्क के लिए एक भाषा की मान्यता रही है।

(5) हिन्दी साहित्य की संश्लिष्ट परम्परा रही है। इसी कारण हिन्दी साहित्य के अंतर्गत रास एवं रासो साहित्य की रचनाओं का भी अध्ययन किया जाता है।

(6) राजस्थान की पृष्ठभूमि पर आधारित हिन्दी कथा साहित्य एवं हिन्दी फिल्मों में जिस राजस्थानी मिश्रित हिन्दी का प्रयोग होता है उसे हिन्दी भाषा क्षेत्र के प्रत्येक भाग का रहने वाला समझ लेता है।

(7) मारवाड़ी लोग व्यापार के कारण भारत के प्रत्येक राज्य में निवास करते हैं तथा अपनी पहचान हिन्दी भाषी के रूप में करते हैं। यदि आप राजस्थानी को हिन्दी से अलग मान्यता दिलाने का प्रयास करेंगे तो राजस्थान के बाहर रहने वाले मारवाड़ी व्यापारियों के हित प्रभावित हो सकते हैं।

(8) भारतीय भाषाओं के अस्तित्त्व एवं महत्त्व को अंग्रेजी से खतरा है। संसार में अंग्रेजी भाषियों की जितनी संख्या है उससे अधिक संख्या केवल हिन्दी भाषियों की है। यदि हिन्दी के उपभाषिक रूपों को हिन्दी से अलग मान लिया जाएगा तो भारत की कोई भाषा अंग्रेजी से टक्कर नहीं ले सकेगी और धीरे-धीरे भारतीय भाषाओं के अस्तित्त्व का संकट पैदा हो जाएगा।

पहाड़ी

डॉ. सर जॉर्ज ग्रियर्सन ने 'पहाड़ी' समुदाय के अन्तर्गत बोले जाने वाले भाषिक रूपों को तीन शाखाओं में बाँटा–

(अ) पूर्वी पहाड़ी अथवा नेपाली,

(आ) मध्य या केन्द्रीय पहाड़ी,

(इ) पश्चिमी पहाड़ी।

हिन्दी भाषा के संदर्भ में वर्तमान स्थिति यह है कि हिन्दी भाषा के अन्तर्गत मध्य या केन्द्रीय पहाड़ी की उत्तराखंड में बोली जाने वाली 1. कुमाऊँनी 2. गढ़वाली तथा पश्चिमी पहाड़ी की हिमाचल प्रदेश में बोली जाने वाली हिन्दी की अनेक बोलियाँ हैं, जिन्हें आम बोलचाल में ' पहाड़ी ' नाम से पुकारा जाता है।

हिन्दी भाषा के संदर्भ में विचारणीय है कि अवधी, बुन्देली, ब्रज, भोजपुरी, मैथिली आदि को हिन्दी भाषा की बोलियाँ माना जाए अथवा उप-भाषाएँ माना जाए। सामान्य रूप से इन्हें बोलियों के नाम से अभिहित किया जाता है किन्तु लेखक ने अपने ग्रन्थ ' भाषा एवं भाषा विज्ञान' में इन्हें उप-भाषा मानने का प्रस्ताव किया है।.... क्षेत्र, बोलने वालों की संख्या तथा परस्पर भिन्नताओं के कारण इनको बोली की अपेक्षा उप-भाषा मानना अधिक संगत है।

इसी ग्रन्थ में लेखक ने पाठकों का ध्यान इस ओर भी आकर्षित किया कि हिन्दी की कुछ उप–भाषाओं के भी क्षेत्रगत भेद हैं, जिन्हें उन उप–भाषाओं की बोलियों अथवा उपबोलियों के नाम से पुकारा जा सकता है।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि इन उप–भाषाओं के बीच कोई स्पष्ट विभाजक रेखा नहीं खींची जा सकती है। प्रत्येक दो उप–भाषाओं के मध्य संक्रमण क्षेत्र विद्यमान है।

विश्व की प्रत्येक भाषा के विविध बोली अथवा उप–भाषा क्षेत्रों में से विभिन्न सांस्कृतिक कारणों से जब कोई एक क्षेत्र अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है तो उस क्षेत्र के भाषा रूप का सम्पूर्ण भाषा क्षेत्र में प्रसारण होने लगता है। इस क्षेत्र के भाषारूप के आधार पर पूरे भाषाक्षेत्र की 'मानक भाषा' का विकास होना आरम्भ हो जाता है। भाषा के प्रत्येक क्षेत्र के निवासी इस भाषारूप को 'मानक भाषा' मानने लगते हैं। इसको मानक मानने के कारण यह मानक भाषा रूप 'भाषा क्षेत्र' के लिए सांस्कृतिक मूल्यों का प्रतीक बन जाता है। मानक भाषा रूप की शब्दावली, व्याकरण एवं उच्चारण का स्वरूप अधिक निश्चित एवं स्थिर होता है एवं इसका प्रचार, प्रसार एवं विस्तार पूरे भाषा क्षेत्र में होने लगता है। कलात्मक एवं सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का माध्यम एवं शिक्षा का माध्यम यही मानक भाषा रूप हो जाता है। इस प्रकार भाषा के 'मानक भाषा रूप' का आधार उस भाषाक्षेत्र की क्षेत्रीय बोली अथवा उप–भाषा ही होती है, किन्तु मानक भाषा होने के कारण चूँकि इसका प्रसार अन्य बोली क्षेत्रों अथवा उप–भाषा क्षेत्रों में होता है इस कारण इस भाषारूप पर 'भाषा क्षेत्र' की सभी बोलियों का प्रभाव पड़ता है तथा यह भी सभी बोलियों अथवा उप–भाषाओं को प्रभावित करता है। उस भाषा क्षेत्र के शिक्षित व्यक्ति औपचारिक अवसरों पर इसका प्रयोग करते हैं। भाषा के मानक भाषा रूप को सामान्य व्यक्ति अपने भाषा क्षेत्र की 'मूल भाषा', केन्द्रक भाषा', 'मानक भाषा' के नाम से पुकारते हैं। यदि किसी भाषा का क्षेत्र हिन्दी भाषा की तरह विस्तृत होता है तथा यदि उसमें 'हिन्दी भाषा क्षेत्र' की भाँति उप–भाषाओं एवं बोलियों की अनेक परतें एवं स्तर होते हैं तो 'मानक भाषा' के द्वारा समस्त भाषा क्षेत्र में विचारों का आदान प्रदान सम्भव हो पाता है। भाषा क्षेत्र के यदि आंशिक अबोधगम्य उपभाषी अथवा बोली बोलने वाले परस्पर अपनी उप–भाषा अथवा बोली के माध्यम से विचारों का समुचित आदान प्रदान नहीं कर पाते तो इसी मानक भाषा के द्वारा संप्रेषण करते हैं। भाषा विज्ञान में इस प्रकार की बोधगम्यता को 'पारस्परिक बोधगम्यता' न

कहकर 'एकतरफा बोधगम्यता' कहते हैं। ऐसी स्थिति में अपने क्षेत्र के व्यक्ति से क्षेत्रीय बोली में बातें होती हैं किन्तु दूसरे उप-भाषा क्षेत्र अथवा बोली क्षेत्र के व्यक्ति से अथवा औपचारिक अवसरों पर मानक भाषा के द्वारा बातचीत होती हैं। इस प्रकार की भाषिक स्थिति को फर्गुसन ने बोलियों की परत पर मानक भाषा का अध्यारोपण कहा है। गम्पर्ज ने इसे 'बाइलेक्टल' के नाम से पुकारा है।

हिन्दी भाषा क्षेत्र में अनेक क्षेत्रगत भेद एवं उपभेद तो हैं हीं, प्रत्येक क्षेत्र के प्राय: प्रत्येक गाँव में सामाजिक भाषिक रूपों के विविध स्तरीकृत तथा जटिल स्तर विद्‌यमान हैं और यह हिन्दी भाषा-क्षेत्र के सामाजिक संप्रेषण का यथार्थ है, जिसको जाने बिना कोई व्यक्ति हिन्दी भाषा के क्षेत्र की विवेचना के साथ न्याय नहीं कर सकता। ये हिन्दी पट्‌टी के अन्दर सामाजिक संप्रेषण के विभिन्न नेटवर्कों के बीच संवाद के कारक हैं। इस हिन्दी भाषा क्षेत्र अथवा पट्‌टी के गावों के रहनेवालों के वाग्व्यवहारों का गहराई से अध्ययन करने पर पता चलता है कि ये भाषिक स्थितियाँ इतनी विविध, विभिन्न एवं मिश्र हैं कि भाषा व्यवहार के स्केल के एक छोर पर हमें ऐसा व्यक्ति मिलता है, जो केवल स्थानीय बोली बोलना जानता है तथा जिसकी बातचीत में स्थानीयेतर कोई प्रभाव दिखाई नहीं पड़ता वहीं दूसरे छोर पर हमें ऐसा व्यक्ति मिलता है, जो ठेठ मानक हिन्दी का प्रयोग करता है तथा जिसकी बातचीत में कोई स्थानीय भाषिक प्रभाव परिलक्षित नहीं होता। स्केल के इन दो दूरतम छोरों के बीच बोलचाल के इतने विविध रूप मिल जाते हैं कि उन सबका लेखा जोखा प्रस्तुत करना असाध्य हो जाता है। हमें ऐसे भी व्यक्ति मिल जाते हैं, जो एकाधिक भाषिक रूपों में दक्ष होते हैं, जिसका व्यवहार तथा चयन वे संदर्भ, व्यक्ति, परिस्थियों को ध्यान में रखकर करते हैं। सामान्य रूप से हम पाते हैं कि अपने घर के लोगों से तथा स्थानीय रोजाना मिलने जुलने वाले घनिष्ठ मित्रों से व्यक्ति जिस भाषा रूप में बातचीत करता है उससे भिन्न भाषा रूप का प्रयोग वह उनसे भिन्न व्यक्तियों एवं परिस्थितियों में करता है। सामाजिक संप्रेषण के अपने प्रतिमान हैं। व्यक्ति प्राय: वाग्व्यवहारों के अवसरानुकूल प्रतिमानों को ध्यान में रखकर बातचीत करता है।

हम यह कह चुके हैं कि किसी भाषा क्षेत्र की मानक भाषा का आधार कोई बोली अथवा उप-भाषा ही होती है किन्तु कालान्तर में उक्त बोली एवं मानक भाषा के स्वरूप में पर्याप्त अन्तर आ जाता है। सम्पूर्ण भाषा क्षेत्र के शिष्ट एवं शिक्षित व्यक्तियों द्वारा औपचारिक अवसरों पर मानक भाषा का प्रयोग किए जाने के कारण तथा साहित्य का माध्यम बन जाने के कारण स्वरूपगत परिवर्तन

स्वाभाविक है। प्रत्येक भाषा क्षेत्र में किसी क्षेत्र विशेष के भाषिक रूप के आधार पर उस भाषा का मानक रूप विकसित होता है, जिसका उस भाषा-क्षेत्र के सभी क्षेत्रों के पढ़े-लिखे व्यक्ति औपचारिक अवसरों पर प्रयोग करते हैं। हम पाते हैं कि इस मानक हिन्दी अथवा व्यावहारिक हिन्दी का प्रयोग सम्पूर्ण हिन्दी भाषा क्षेत्र में बढ़ रहा है तथा प्रत्येक हिन्दी भाषी व्यक्ति शिक्षित, सामाजिक दृष्टि से प्रतिष्ठित तथा स्थानीय क्षेत्र से इतर अन्य क्षेत्रों के व्यक्तियों से वार्तालाप करने के लिए इसी को आदर्श, श्रेष्ठ एवं मानक मानता है। गाँव में रहने वाला एक सामान्य एवं बिना पढ़ा लिखा व्यक्ति भले ही इसका प्रयोग करने में समर्थ तथा सक्षम न हो फिर भी वह इसके प्रकार्यात्मक मूल्य को पहचानता है तथा वह भी अपने भाषिक रूप को इसके अनुरूप ढालने की जुगाड़ करता रहता है। जो मजदूर शहर में काम करने आते हैं वे किस प्रकार अपने भाषा रूप को बदलने का प्रयास करते हैं - इसको देखा परखा जा सकता है।

सन् 1960 में लेखक ने बुलन्द शहर एवं खुर्जा तहसीलों (ब्रज एवं खड़ी बोली का संक्रमण क्षेत्र) के भाषिक रूपों का संकालिक अथवा एककालिक भाषा वैज्ञानिक अध्ययन करना आरम्भ किया। सामग्री संकलन के लिए जब लेखक गाँवों में जाता था तथा वहाँ रहने वालों से बातचीत करता था तबके उनके भाषिक रूपों एवं आज लगभग 55 वर्षों के बाद के भाषिक रूपों में बहुत अन्तर आ गया है। अब इनके भाषिक-रूपों पर मानक हिन्दी अथवा व्यावहारिक हिन्दी का प्रभाव आसानी से पहचाना जा सकता है। इनके भाषिक-रूपों में अंग्रेजी शब्दों का चलन भी बढ़ा है। यह कहना अप्रासंगिक होगा कि उनकी जिन्दगी में और व्यवहार में भी बहुत बदलाव आया है।

मानक हिन्दी अथवा व्यावहारिक हिन्दी का सम्पूर्ण हिन्दी भाषा क्षेत्र में व्यवहार होने तथा इसके प्रकार्यात्मक प्रचार-प्रसार के कारण, यह हिन्दी भाषा-क्षेत्र में प्रयुक्त समस्त भाषिक रूपों के बीच संपर्क सेतु की भूमिका का निर्वाह कर रहा है।

हिन्दी भाषा का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। इस कारण इसकी क्षेत्रगत भिन्नताएँ भी बहुत अधिक हैं।'खड़ी बोली' हिन्दी भाषा क्षेत्र का उसी प्रकार एक भेद है य जिस प्रकार हिन्दी भाषा के अन्य बहुत से क्षेत्रगत भेद हैं। हिन्दी भाषा क्षेत्र में ऐसी बहुत-सी उप-भाषाएँ हैं, जिनमें पारस्परिक बोधगम्यता का प्रतिशत बहुत कम है किन्तु ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से सम्पूर्ण भाषा क्षेत्र एक भाषिक इकाई है तथा इस भाषा-भाषी क्षेत्र के बहुमत भाषा-भाषी अपने-अपने क्षेत्रगत

भेदों को हिन्दी भाषा के रूप में मानते एवं स्वीकारते आए हैं। कुछ विद्वानों ने इस भाषा क्षेत्र को 'हिन्दी पट्टी' के नाम से पुकारा है तथा कुछ ने इस हिन्दी भाषी क्षेत्र के निवासियों के लिए 'हिन्दी जाति' का अभिधान दिया है।

वस्तु स्थिति यह है कि हिन्दी, चीनी एवं रूसी जैसी भाषाओं के क्षेत्रगत प्रभेदों की विवेचना यूरोप की भाषाओं के आधार पर विकसित पाश्चात्य भाषा विज्ञान के प्रतिमानों के आधार पर नहीं की जा सकती।

जिस प्रकार अपने 29 राज्यों एवं 07 केन्द्र शासित प्रदेशों को मिलाकर भारत देश है, उसी प्रकार भारत के जिन राज्यों एवं शासित प्रदेशों को मिलाकर हिन्दी भाषा क्षेत्र है, उस हिन्दी भाषा-क्षेत्र के अन्तर्गत जितने भाषिक रूप बोले जाते हैं उनकी समाष्टि का नाम हिन्दी भाषा है। हिन्दी भाषा क्षेत्र के प्रत्येक भाग में व्यक्ति स्थानीय स्तर पर क्षेत्रीय भाषा रूप में बात करता है। औपचारिक अवसरों पर तथा अन्तर-क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं सार्वदेशिक स्तरों पर भाषा के मानक रूप अथवा व्यावहारिक हिन्दी का प्रयोग होता है। आप विचार करें कि उत्तर प्रदेश हिन्दी भाषी राज्य है अथवा खड़ी बोली, ब्रजभाषा, कन्नौजी, अवधी, बुन्देली आदि भाषाओं का राज्य है। इसी प्रकार मध्य प्रदेश हिन्दी भाषी राज्य है अथवा बुन्देली, बघेली, मालवी, निमाड़ी आदि भाषाओं का राज्य है। जब संयुक्त राज्य अमेरिका की बात करते हैं तब संयुक्त राज्य अमेरिका के अन्तर्गत जितने राज्य हैं उन सबकी समष्टि का नाम ही तो संयुक्त राज्य अमेरिका है। विदेश सेवा में कार्यरत अधिकारी जानते हैं कि कभी देश के नाम से तथा कभी उस देश की राजधानी के नाम से देश की चर्चा होती है। वे ये भी जानते हैं कि देश की राजधानी के नाम से देश की चर्चा भले ही होती है, मगर राजधानी ही देश नहीं होता। इसी प्रकार किसी भाषा के मानक रूप के आधार पर उस भाषा की पहचान की जाती है मगर मानक भाषा, भाषा का एक रूप होता है : मानक भाषा ही भाषा नहीं होती। इसी प्रकार खड़ी बोली के आधार पर मानक हिन्दी का विकास अवश्य हुआ है किन्तु खड़ी बोली ही हिन्दी नहीं है। तत्वतः हिन्दी भाषा क्षेत्र के अन्तर्गत जितने भाषिक रूप बोले जाते हैं उन सबकी समष्टि का नाम हिन्दी है। हिन्दी को उसके अपने ही घर में तोड़ने के षड्यंत्र को विफल करने की आवश्कता है तथा इस तथ्य को बलपूर्वक रेखांकित, प्रचारित एवं प्रसारित करने की आवश्यकता है कि सन् 1991 की भारतीय जनगणना के अन्तर्गत भारतीय भाषाओं के विश्लेषण का, जो ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है उसमें मातृभाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकार करने वालों की संख्या का प्रतिशत उत्तर प्रदेश

(उत्तराखंड राज्य सहित) में 90.11, बिहार (झारखण्ड राज्य सहित) में 80.86, मध्य प्रदेश (छत्तीसगढ़ राज्य सहित) में 85.55, राजस्थान में 89.56, हिमाचल प्रदेश में 88.88, हरियाणा में 91.00, दिल्ली में 81.64, तथा चण्डीगढ़ में 61. 06 है।

हिन्दी भाषा-क्षेत्र एवं मंदारिन भाषा-क्षेत्र

जिस प्रकार चीन में मंदारिन भाषा की स्थिति है उसी प्रकार भारत में हिन्दी भाषा की स्थिति है। जिस प्रकार हिन्दी भाषा-क्षेत्र में विविध क्षेत्रीय भाषिक रूप बोले जाते हैं, वैसे ही मंदारिन भाषा-क्षेत्र में विविध क्षेत्रीय भाषिक-रूप बोले जाते हैं। हिन्दी भाषा-क्षेत्र के दो चरम छोर पर बोले जाने वाले क्षेत्रीय भाषिक रूपों के बोलने वालों के बीच पारस्परिक बोधगम्यता का प्रतिशत बहुत कम है। मगर मंदारिन भाषा के दो चरम छोर पर बोले जाने वाले क्षेत्रीय भाषिक रूपों के बोलने वालों के बीच पारस्परिक बोधगम्यता बिल्कुल नहीं है। उदाहरण के लिए मंदारिन के एक छोर पर बोली जाने वाली हार्बिन और मंदारिन के दूसरे छोर पर बोली जाने वाली शिआनीज के वक्ता एक-दूसरे से संवाद करने में सक्षम नहीं हो पाते। उनमें पारस्परिक बोधगम्यता का अभाव है। वे आपस में मंदारिन के मानक भाषा रूप के माध्यम से बातचीत कर पाते हैं। मंदारिन के इस क्षेत्रीय भाषिक रूपों को लेकर वहाँ कोई विवाद नहीं है। पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिक मंदारिन को लेकर कभी विवाद पैदा करने का साहस नहीं कर पाते। मंदारिन की अपेक्षा हिन्दी के भाषा-क्षेत्र में बोले जाने वाले भाषिक-रूपों में पारस्परिक बोधगम्यता का प्रतिशत अधिक है। यही नहीं सम्पूर्ण हिन्दी भाषा-क्षेत्र में पारस्परिक बोधगम्यता का सातत्य मिलता है। इसका अभिप्राय यह है कि यदि हम हिन्दी भाषा-क्षेत्र में एक छोर से दूसरे छोर तक यात्र करे तो निकटवर्ती क्षेत्रीय भाषिक-रूपों में बोधगम्यता का सातत्य मिलता है। हिन्दी भाषा-क्षेत्र के दो चरम छोर के क्षेत्रीय भाषिक-रूपों के वक्ताओं को अपने-अपने क्षेत्रीय भाषिक-रूपों के माध्यम से संवाद करने में कठिनाई होती है। कठिनाई तो होती है मगर इसके बावजूद वे परस्पर संवाद कर पाते हैं। यह स्थिति मंदारिन से अलग है, जिसके चरम छोर के क्षेत्रीय भाषिक-रूपों के वक्ता अपने-अपने क्षेत्रीय भाषिक-रूपों के माध्यम से कोई संवाद नहीं कर पाते। मंदारिन के एक छोर पर बोली जाने वाली हार्बिन और मंदारिन के दूसरे छोर पर बोली जाने वाली शिआनीज के वक्ता एक-दूसरे से संवाद करने में सक्षम नहीं हैं मगर हिन्दी के

एक छोर पर बोली जाने वाली भोजपुरी और मैथिली तथा दूसरे छोर पर बोली जाने वाली मारवाड़ी के वक्ता एक-दूसरे के अभिप्राय को किसी न किसी मात्रा में समझ लेते हैं।

यदि चीन में मंदारिन भाषा-क्षेत्र के समस्त क्षेत्रीय भाषिक-रूप मंदारिन भाषा के ही अंतर्गत स्वीकृत है तो उपर्युक्त विवेचन के परिप्रेक्ष्य में हिन्दी भाषा-क्षेत्र के अन्तर्गत समाविष्ट क्षेत्रीय भाषिक-रूपों को भिन्न-भिन्न भाषाएँ मानने का विचार नितान्त अतार्किक और अवैज्ञानिक है। लेखक का स्पष्ट एवं निर्भ्रांत मत है कि हिन्दी को उसके अपने ही घर में तोड़ने के षड्यंत्रों को बेनकाब करने और उनको निर्मूल करने की आवश्यकता असंदिग्ध है। हिन्दी देश को जोड़ने वाली भाषा है। उसे उसके ही घर में तोड़ने का अपराध किसी को नहीं करना चाहिए। 16

हिन्दी भाषा का स्वरूप एवं विकासः दशा और दिशा

हिन्दी भाषा को राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय भूमिकाओं के निर्वहण के लिए विकसित करने की जरूरत है। इसके लिए भाषा की प्रकृति एवं स्वरूप के परिप्रेक्ष्य में विकास के प्रतिमानों का निर्धारण जरूरी है। आधुनिक भाषा विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ये प्रतिमान निम्न हैं–

(1) भाषा के ऐतिहासिक स्वरूप की अपेक्षा एककालिक अथवा संकालिक स्तर पर उस भाषा समाज के पढ़े-लिखे लोगों के द्वारा बोली जाने वाली मानक भाषा के स्वरूप एवं प्रकृति को महत्त्व दिया जाना चाहिए। इस दृष्टि से भारतीय वैयाकरणों ने काल विशेष की भाषा के पढ़े-लिखे लोगों के द्वारा बोले जाने वाले भाषा-रूप को महत्त्व दिया। पाणिनी के समय में वैदिक भाषा का आदर होता था। उसे सम्माननीय माना जाता था। मगर पाणिनी ने अपने व्याकरण के नियमों का निर्धारण करने के लिए वैदिक भाषा को आधार नहीं बनाया। पाणिनी ने उदीच्य भाग के गुरुकुलों में उनके समय में बोली जाने वाली लौकिक संस्कृत को प्रमाण मानकर अपने ग्रंथ में संस्कृत व्याकरण के नियमों का निर्धारण किया।

(2) भाषा की प्रकृति बदलना है। "भाखा बहता नीर' है। नदी की प्रकृति गतिमान होना है। भाषा की प्रकृति प्रवाहशील होना है है। संस्कृति में परिवर्तन होता है, हमारी सोच तथा हमारी आवश्कताएँ परिवर्तित होती हैं उसी अनुपात में शब्दावली में परिवर्तन होता रहता है।

(3) कोई भी जीवंत एवं प्राणवान भाषा 'अछूत' नहीं होती। कोई भी जीवंत एवं प्राणवान भाषा अपने को शुद्ध एवं निखालिस बनाने के व्यामोह में अपने घर के दरवाजों एवं खिड़कियों को बंद नहीं करती। यदि किसी भाषा को शुद्धता की जंजीरों से जकड़ दिया जाएगा, निखालिस की लक्ष्मण रेखा से बाँध दिया जाएगा तो वह धीरे-धीरे सड़ जाएगी और फिर मर जाएगी।

(4) राजतंत्रात्मक शासन व्यवस्था में राजा-महाराजाओं द्वारा बोली जाने वाली भाषा को महत्त्व दिया जाता है। लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था में आम आदमी के द्वारा बोली जाने वाली जन-प्रचलित-भाषा को महत्त्व दिया जाना चाहिए। बोलचाल की सहज, रवानीदार एवं प्रवाहशील भाषा पाषाण खंडों में ठहरे हुए गंदले पानी की तरह नहीं होती। पाषाण खंडों के ऊपर से बहती हुई अजस्र धारा की तरह होती है।

(5) प्रत्येक भाषा की प्रकृति अलग होती है। प्रत्येक भाषा की अपनी व्यवस्था और संरचना होती है। 'भिन्नत्वं हि प्रकृतिः'। भाषा की पद रचना एवं वाक्य रचना की प्रकृति के अनुरूप भाषा का प्रयोग होना चाहिए।

भारतीय संस्कृति का स्वरूप एवं भाषा-प्रयोग

भारत में भाषाओं, प्रजातियों, धर्मों, सांस्कृतिक परम्पराओं एवं भौगोलिक स्थितियों का असाधारण एवं अद्वितीय वैविध्य विद्यमान है। मेरे दिमाग में दिनकर की पंक्तियाँ गूँजती रही हैं कि भारतीय संस्कृति समुद्र की तरह है, जिसमें अनेक धाराएँ आकर विलीन होती रही हैं। कुछ विद्वान आगत धाराओं को गंदे नालों के रूप में देखते हैं। इस सम्बंध में लेखक का विचार अलग है। उन समस्त आगत धाराओं को जिनको कुछ विद्वान गंदे नालों एवं 'मल' के रूप में देखते हैं, उनको लेखक 'ऐसे मल' की श्रेणी में नहीं रखना चाहता, जो हमारी भाषा, धर्म, एवं संस्कृति रूपी गंगा को 'गंदा नाला' बनाते हैं। आगत धाराएँ हमारी गंगा की मूल स्रोत भागीरथी में आकर मिलने वाली अलकनंदा, धौली गंगा, अलकन्दा, पिंडर और मंदाकिनी धाराओं की श्रेणी में आती हैं। भाषा के मामले में, लेखक की सोच है कि हिन्दी समाज के प्रयोक्ता जिस बोलचाल की सहज, रवानीदार एवं प्रवाहशील भाषा का प्रयोग करते हैं, उनमें प्रयुक्त होने वाले समस्त शब्दों को स्वीकार कर लेना चाहिए। इसी परिप्रेक्ष्य में लेखक का विचार है कि हम अपने रोजाना के व्यवहार में अंग्रेजी के जिन शब्दों का धड़ल्ले से प्रयोग करते हैं, उनको अपनाने पर आपत्ति नहीं होनी चाहिए। अंग्रेजी के जिन शब्दों को हिन्दी

के अखबारों एवं टी. वी. चैनलों ने अपना लिया है तथा जो जनजीवन एवं लोक में प्रचलित हो गए हैं, उनको अपना लेना चाहिए।

प्रजातंत्र एवं लोकतंत्र में हिन्दी भाषा का स्वरूप

लेखक ने अपने लेख में लिखा था कि "प्रजातंत्र में शुद्ध हिन्दी, क्लिष्ट हिन्दी, संस्कृत गर्भित हिन्दी जबरन नहीं चलाई जानी चाहिए"। एक विद्वान ने टिप्पण किया–"प्रजातंत्र में शुद्ध हिन्दी, क्लिष्ट हिन्दी, संस्कृत गर्भित हिन्दी जबरन नहीं चलाई जानी चाहिए –लेखक महोदय ने ऐसा लिखा। परन्तु क्या अशुद्ध फारसी–अरबी–अंग्रेजी गर्भित–भाषा लिखनी चाहिये– यह कौन–सी, कहाँ की और कैसी विचित्र परिभाषा है प्रजातन्त्र की"। एक–दूसरे विद्वान का टिप्पण था– " संस्कृताधारित शब्द अपना पूरा परिवार लेकर भाषामें प्रवेश करता है, अंग्रेजी अकेला आता है, उर्दू भी अकेला आता है।नया गढ़ा हुआ, संस्कृत शब्द भी प्रचलित होने पर सरल लगने लगता है। भाषा बदलती है, स्वीकार करता हूँ। पर उसे सुसंस्कृत भी की जा सकती है और विकृत भी। संस्कृत रचित शब्द सहज स्वीकृत होकर कुछ काल के पश्चात् रूढ़ हो जाएंगे। अंग्रेजी के शब्द जब हिंदी में प्रायोजित होते हैं, तो लुढ़कते लुढ़कते चलते हैं। उनमें बहाव का अनुभव नहीं होता और कौन–सा स्वीकार करना, कौन–सा नहीं, इसका क्या निकष? आज प्रदूषित हिंदी को उसी के प्रदूषित शब्दों द्वारा विचार और प्रयोग करके शुद्ध करना है। जैसे रक्त का क्षयरोग उसी रक्त को शुद्ध कर किया जाता है"। लेखक का इन विद्वानों से निवेदन है कि वे संदर्भ को ध्यान में रखकर "शुद्ध" शब्द का अभिधेयार्थ नहीं अपितु व्यंग्यार्थ ग्रहण करने की अनुकंपा करें। प्रजातंत्र में और जबरन चलाने पर विशेष ध्यान देंगे तो शब्द प्रयोग का व्यंग्यार्थ स्वतः स्पष्ट हो जाएगा।

नाम रखने अथवा नामकरण तथा जन प्रचलित शब्द के स्थान पर नया शब्द बनाने अथवा 'गढ़ने' में अन्तर

भारत सरकार के वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग के द्वारा शब्द निर्माण पर लेखक ने अपने लेख में निम्न टिप्पण किया था–

"उन्होंने जन–प्रचलित शब्दों को अपनाने के स्थान पर संस्कृत का सहारा लेकर शब्द गढ़े। शब्द बनाए नहीं जाते। गढ़े नहीं जाते। लोक के प्रचलन एवं व्यवहार से विकसित होते हैं।" इस पर एक विद्वान ने जो प्रतिक्रिया व्यक्त की वह नीचे उद्धृत है–

"प्रो. जैन जो कहते हैं, उसे दो अंशों में बाँट कर सोचते हैं। क और ख।

(क) "उन्होंने जन प्रचलित शब्दों को अपनाने के स्थान पर संस्कृत का सहारा लेकर शब्द गढ़े।

(ख) शब्द बनाए नहीं जाते। गढ़े नहीं जाते। लोक के प्रचलन एवं व्यवहार से विकसित होते हैं।"

(क) "जन प्रचलित" – यह जन कोई एक व्यक्ति नहीं है। और अनेक व्यक्ति यदि प्रचलित करते हैं, तो, क्या वे एक ही शब्द जो सर्वमान्य हो, ऐसा शब्द प्रचलित कर सकते हैं?

(क1) और प्रचलित कैसे करेंगे? जब प्रत्येक का अलग शब्द होगा, तो, अराजकता नहीं जन्मेगी? और यदि ऐसा होता है, तो वैचारिक संप्रेषण कैसे किया जाए?

(ख) शब्द बनाए नहीं जाते। गढे नहीं जाते?"।

इस लेख में, लेखक विद्वान महोदय की उपर्युक्त आपत्तियों का निराकरण करना चाहता है–

किसी व्यक्ति, स्थान, वस्तु का 'नाम रखने' अथवा 'नामकरण करने' तथा जन प्रचलित शब्द के स्थान पर नया शब्द 'बनाने' अथवा 'गढ़ने' में अन्तर है। ये भिन्न 'विचारों' के वाचक हैं, भिन्न 'संकल्पनाओं' के बोधक हैं।

नामकरण करना अथवा नाम रखना

(क) व्यक्ति का नामकरण – घर में जब किसी शिशु का जन्म होता है, वह भगवान के घर से कोई नाम लेकर पैदा नहीं होता। उसका 'नामकरण' होता है। उसका हम नाम रखते हैं। उसके लिए नाम बनाते नहीं हैं। उसके लिए नाम गढ़ते नहीं हैं। जो नाम रखते हैं, वह समाज में उस शिशु के लिए प्रचलित हो जाता है। लोक उसे उसके रखे नाम से पहचानता है। नाम व्यक्तित्त्व का अंग हो जाता है। नाम व्यक्ति से जुड़ जाता है।

(ख) नई व्यवस्था, नई वस्तु, नए आविष्कार के लिए नामकरण – भारत ने गुलामी की जंजीरों को काटकर स्वतंत्रता प्राप्त की। स्वाधीन होने के पहले से ही हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने स्वतंत्र भारत के संविधान के लिए 'संविधान सभा' का गठन कर दिया था। हमारे देश की संविधान सभा ने राजतंत्र के स्थान पर लोकतंत्र को ध्यान में रखकर संविधान बनाया। राजतंत्र में सर्वोच्च पद राजा का होता है। लोकतंत्र के लिए उन्होंने 'राष्ट्रपति' का पद बनाया। राष्ट्रपति शब्द

इस कारण प्रचलित हो गया। उसके लिए कोई दूसरा शब्द जनता में प्रचलित नहीं था। पद ही नहीं था तो उसका वाचक कैसे होता। लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था में इसी कारण बहुत से नए शब्दों का नामकरण किया। उनके लिए लोक में कोई अन्य नाम प्रचलित नहीं थे। आपने अपने टिप्पण में जो उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, उनमें से अधिकतर इसी कोटि के अन्तर्गत आते हैं। कुछ अन्य उदाहरण देखें– (1) भारत की सरकार ने जब पद्म पुरस्कारों की नई योजना बनाई तो पुरस्कारों की तीन श्रेणियाँ बनाई तथा उनके नाम रखे – (अ) पद्म विभूषण (आ) पद्म भूषण (इ) पद्म श्री। इसके लिए कोई अन्य नाम प्रचलित नहीं थे। प्रचलित नहीं थे, क्योंकि ये पुरस्कार ही नहीं थे। इस कारण रखे गए नाम चले। इनका प्रचलन हो गया। (2) भारत की सरकार ने जब पूर्वोत्तर भारत में नए राज्यों का गठन किया तो उनके लिए नाम रखे। (अ) अरुणाचल प्रदेश (आ) मणिपुर (इ) मेघालय (ई) मिजोरम (उ) नागालैण्ड आदि। इन नए गठित राज्यों के लिए पहले से कोई शब्द नहीं थे। शब्द इस कारण नहीं थे क्योंकि राज्य ही नहीं थे। इन नए राज्यों का नामकरण किया गया। इन राज्यों को सब इनके नाम से पुकारते हैं। (3) अभी हाल में 'आन्ध्र प्रदेश' को दो भागों में बाँटा गया है। एक राज्य का नामकरण किया गया – तेलंगाना। दूसरे राज्य का नामकरण किया गया – सीमान्ध्र। ये नाम चलेंगे। लोक प्रचलित हो जाएँगे। (4) भारत के अंतरिक्ष वैज्ञानिकों ने चन्द्रमा पर भेजे जाने वाले अंतरिक्ष प्रेक्षण उपग्रह का नाम 'चन्द्रयान' तथा मंगल पर भेजे जाने वाले अंतरिक्ष प्रेक्षण उपग्रह का नाम 'मंगलयान' रखा। इनका नामकरण 'चन्द्रयान' एवं 'मंगलयान' किया। ये नाम चल रहे हैं। संसार की किसी भी देश का वैज्ञानिक जब किसी भी भाषा में इनका उल्लेख करेगा तो उसे 'चन्द्रयान' एवं 'मंगलयान' शब्दों का प्रयोग करना पड़ेगा।

शब्द बनाना अथवा शब्द गढ़ना

शब्द बनाने अथवा शब्द गढ़ने को निम्न उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है। अंग्रेजों ने भारत में 'रेलवे नेटकर्क' शुरू किया। रेल की पटरियों का जाल बिछाने का काम किया। रेल से जुड़े अंग्रेजी के सैंकड़ों शब्द जन प्रचलित हो गए। उदाहरण देखें– (1) इंजन (2) रेलवे (3) एक्सप्रेस (4) केबिन (5) गॉर्ड (6) स्टेशन (7) जंक्शन (8) टाइम टेबिल (9) टिकट (10) टिकट कलेक्टर (11) डीजल इंजन (12) प्लेटफॉर्म (13) बोगी (14) बुकिंग (15) सिग्नल (16) स्टेशन (17) स्टेशन मास्टर।

इन जैसे जन प्रचलित शब्दों के स्थान पर इनके लिए नए शब्द बनाने अथवा गढ़ने वालों से लेखक सहमत नहीं हो सकता। भारतीय भाषा विज्ञान की महान परम्परा के अध्ययन के बाद लेखक को, जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसके आधार पर वह यह बात कह रहा है। आचार्य रघुवीर जी ने जो कार्य किया है वह स्तुत्य है मगर उन्होंने भी अंग्रेजी के जन प्रचलित शब्दों के स्थान पर जिन शब्दों को गढ़ा है उनसे सहमत नहीं हूँ। उदाहरण के लिए रेलगाड़ी के स्थान पर उन्होंने संस्कृत की धातुओं एवं परसर्गों एवं विभक्तियों की सहायता से शब्द बनाया, जो उपहास का कारक बना। ऐसे ही उदाहरणों के कारण 'रघुवीरी हिन्दी' हास्यास्पद हो गई। लोक में रेल ही चलता है और चलेगा। गढ़ा शब्द नहीं चलेगा। इसी संदर्भ में, लेखक का मत है कि जो शब्द जन-प्रचलित हैं उनके स्थान पर शब्द गढ़े नहीं। आप नया आविष्कार करें और उसका नामकरण करें, यह ठीक है। जो शब्द जन-प्रचलित हो गए हैं उनके स्थान पर नए शब्द बनाना अथवा गढ़ना श्रम का अपव्यय है। हमें किसी विचार शाखा से अपने को जकड़ना नहीं चाहिए। भाषा की प्रवाहशील प्रकृति को आत्मसात् करना चाहिए।

संस्कृत भाषा तथा हिन्दी भाषा

संस्कृत और आधुनिक भारतीय भाषाएँ भिन्न कालों की भाषाएँ हैं। एक काल की भाषा पर, दूसरे काल की भाषा के नियमों को नहीं थोपा जा सकता। संस्कृत और आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की व्यवस्थाओं एवं संरचनाओं के अन्तर को हमें जानना चाहिए। किसी भाषा के व्याकरण के नियमों को दूसरी किसी अन्य भाषा पर थोपना गलत है। भाषा विज्ञान का यह सार्वदेशिक एवं सार्वकालिक नियम है। लेखक ने लिखा कि 'भाषा की प्रकृति नदी की धारा की तरह होती है'। इस पर कुछ विद्वानों ने सवाल उठाया कि क्या नदी की धारा को अनियंत्रित, अमर्यादित एवं बेलगाम हो जाने दें। लेखक का उत्तर है – नदी की धारा अपने तटों के द्वारा मर्यादित रहती है। भाषा अपने व्याकरण की व्यवस्था एवं संरचना के तटों के द्वारा मर्यादित रहती है। भाषा में बदलाव एवं ठहराव दोनों साथ-साथ रहते हैं। 'शब्दावली' गतिशील एवं परिवर्तनशील है। व्याकरण भाषा को ठहराव प्रदान करता है। ऐसा नहीं है कि 'व्याकरण' कभी बदलता नहीं है। बदलता है मगर बदलाव की रफ्तार बहुत धीमी होती है। 'शब्द' आते जाते रहते हैं। हम विदेशी अथवा अन्य भाषा से शब्द तो आसानी से ले लेते हैं मगर उनको अपनी भाषा की प्रकृति के अनुरूप ढाल लेते हैं। 'शब्द' को अपनी भाषा के

व्याकरण की पद रचना के अनुरूप विभक्ति एवं परसर्ग लगाकर अपना बना लेते हैं। हम यह नहीं कहते कि मैंने चार 'फिल्म्स' देखीं, हम कहते हैं कि मैंने चार फिल्में देखीं।

संस्कृत भाषा का महत्त्व और पाणिनी तथा पतंजलि का भाषा वैज्ञानिक चिंतन

लेखक के लेख को पढ़कर जिन विद्वानों ने प्रतिक्रियाएँ व्यक्त कीं, उनमें से कुछ विद्वानों ने लेखक को संस्कृत की व्याकरण परम्परा के महत्त्व से परिचित कराना चाहा। लेखक सम्प्रति यह निवेदन करना चाहता है कि वह संस्कृत के महान वैयाकरणों एवं निरुक्तकारों के योगदान से सर्वथा अनभिज्ञ नहीं है। वह इससे अवगत है कि प्रातिशाख्यों तथा शिक्षा-ग्रंथों में भाषा विज्ञान और विशेष रूप से ध्वनि विज्ञान से सम्बंधित कितना सूक्ष्मदर्शी और गहन विचार सन्निहित है। भारतीय भाषा विज्ञान की परम्परा बड़ी समृद्ध है और उसमें न केवल वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत के भाषाविद् समाहित हैं अपितु प्राकृतों एवं अपभ्रंशों के भाषाविद् भी समाहित है। पाणिनी ने अपने काल के पूर्व के 10 आचार्यों का उल्लेख किया है। उन आचार्यों ने वेदों के काल की छान्दस् भाषा पर कार्य किया था। पाणिनी ने वैदिक काल की छान्दस भाषा को आधार बनाकर अष्टाध्यायी की रचना नहीं की। उन्होंने अपने काल की जन-सामान्य भाषा संस्कृत को आधार बनाकर व्याकरण के नियमों का निर्धारण किया। वाल्मीकीय रामायण में इस भाषा के लिए 'मानुषी' विशेषण का प्रयोग हुआ है। पाणिनी के समय संस्कृत का व्यवहार एवं प्रयोग बहुत बड़े भूभाग में होता था। उसके अनेक क्षेत्रीय भेद-प्रभेद रहे होंगे। पाणिनी ने भारत के उदीच्य भाग के गुरुकुलों में बोली जानेवाली भाषा को आधार बनाया। पाणिनी के व्याकरण का महत्त्व सर्वविदित है। उस सम्बंध में लिखना अनावश्यक है। पाणिनी के व्याकरण की विशिष्टता को अनेक विद्वानों ने रेखांकित किया है। संस्कृत भाषा को नियमबद्ध करने के लिए पाणिनी के सूत्र बीजगणित के जटिल सूत्रों की भाँति हैं।

पतंजलि ने भाषा प्रयोग के मामले में भाषा के वैयाकरण से अधिक महत्त्व सामान्य गाड़ीवान (सारथी) को दिया। महाभाष्यकार पतंजलि के 'पतंजलि महाभाष्य' से एक प्रसंग प्रस्तुत कर रहा हूँ जिसमें उन्होंने भाषा के प्रयोक्ता का महत्त्व प्रतिपादित किया है। प्रयोक्ता व्याकरणिक नियमों का भले ही जानकार नहीं होता किन्तु वह अपनी भाषा का प्रयोग करता है। व्याकरणिक नियमों के

निर्धारण करने वाले तथा भाषा का प्रयोग करने वाले का पतंजलि–महाभाष्य में रोचक प्रसंग मिलता है। वैयाकरण तथा रथ चलाने वाले के बीच के संवाद का प्रासंगिक अंश उद्धृत है–वैयाकरण ने पूछा – इस रथ का 'प्रवेता' कौन है?

सारथी का उत्तर – आयुष्मान्, मैं इस रथ का 'प्राजिता' हूँ।

(प्राजिन् = सारथी, रथ–चालक, गाड़ीवान)

वैयाकरण – 'प्राजिता' अपशब्द है।

सारथी का उत्तर – (देवानां प्रिय) आप केवल 'प्राप्तिज्ञ' हैं, 'इष्टिज्ञ' नहीं।

('प्राप्तिज्ञ' = नियमों का ज्ञाताय 'इष्टिज्ञ' = प्रयोग का ज्ञाता)

वैयाकरण – यह दुष्ट 'सूत' हमें 'दुरुत' (कष्ट पहुँचाना) रहा है।

सूत– आपका 'दुरुत' प्रयोग उचित नहीं है। आप निंदा ही करना चाहते हैं तो 'दुःसूत' शब्द का प्रयोग करें।

लेखक इस तथ्य से अवगत है कि प्रत्याहार, गणपाठ, विकरण, अनुबंध आदि की विपुल तकनीक से अलंकृत पाणिनीय सूत्र उनकी अद्वितीय प्रतिभा को प्रमाणित करते हैं।

लेखक को संस्कृत भाषा के व्यवहार एवं प्रसार की भी थोड़ी बहुत जानकारी है। उत्तर–वैदिक काल में संस्कृत भारत की सभी दिशाओं में चारों ओर फैलती गई। संस्कृत का यह प्रसार केवल भौगोलिक दिशाओं में ही नहीं हो रहा थाय सामाजिक स्तर पर मानक संस्कृत से भिन्न अनेक आर्य एवं अनार्य भाषाओं के बोलने वाले समुदायों में भी हो रहा था।

संस्कृत भाषा के भारत के विभिन्न भागों एवं विभिन्न सामाजिक समुदायों में व्यवहार एवं प्रसार के कारण दो बातें घटित हुई–

1. संस्कृत ने अपने प्रसार के कारण भारत के प्रत्येक क्षेत्र की भाषा को प्रभावित किया।
2. संस्कृत भाषा स्वयं भी भारत में अन्य भाषा–परिवारों की भाषाओं से तथा संस्कृत युग में भारतीय आर्य परिवार की संस्कृतेत्तर अन्य लोक भाषाओं/जनभाषाओं से प्रभावित हुई। लेखक यह स्पष्ट करना चाहता है कि संस्कृत काल में अन्य लोक भाषाओं/जनभाषाओं का व्यवहार होता था।

संस्कृत के प्रभाव से तो संस्कृत के विद्वान परिचित हैं मगर संस्कृत पर संस्कृतेतर अन्य लोक भाषाओं/जनभाषाओं के प्रभाव से शायद परिचित नहीं हैं अथवा इस पक्ष को अनदेखा कर जाते हैं। लेखक ने इन दोनों पक्षों पर अपनी

पुस्तक में विस्तार से लिखा है। यह भी विवेचित किया है कि पाणिनी के बाद के संस्कृत साहित्य में प्रयुक्त किन धातुओं का (शब्दों का नहीं) प्रयोग हुआ है, जिनका उल्लेख पाणिनी की अष्टाध्यायी में नहीं हुआ है। वस्तुतः संसार की प्रत्येक भाषा में अन्य भाषा/भाषाओं से आगत शब्दों का व्यवहार होता है। हिन्दी में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग हो रहा है। संसार की प्रत्येक भाषा अन्य भाषा से शब्द ग्रहण करती है और उसे अपनी भाषा में पचा लेती है। संसार की प्रत्येक प्रवाहशील भाषा में परिवर्तन होता है।

हिन्दी के समाचार पत्रों, टी. वी. चैनलों एवं फिल्मों की भाषा

समाचार पत्रों में तथा टी. वी. के हिन्दी चैनलों एवं हिन्दी की फिल्मों में उस भाषा का प्रयोग हो रहा है, जिसे हमारी संतति बोल रही है। भविष्य की हिन्दी का स्वरूप हमारे प्रपौत्र एवं प्रपौत्रियों की पीढ़ी के द्वारा बोली जानेवाली हिन्दी के द्वारा निर्धारित होगा जिसका निर्धारण उनके अपने काल में भाषा के वैयाकरण करेंगे।। ऐतिहासिक भाषा विज्ञान एवं एककालिक अथवा संकालिक भाषा विज्ञान की दृष्टियाँ समान नहीं होती। उनमें अन्तर होता है। शब्द प्रयोग के संदर्भ में जब ऐतिहासिक भाषा विज्ञान की दृष्टि से विचार किया जाता है तो यह पता लगाने की कोशिश की जाती है कि भाषा के शब्द का स्रोत कौन-सी भाषा है। शब्द प्रयोग के संदर्भ में जब एककालिक अथवा संकालिक भाषा विज्ञान की दृष्टि से विचार किया जाता है तो भाषा का प्रयोक्ता जिन शब्दों का व्यवहार करता है, वे समस्त शब्द उसकी भाषा के होते हैं। उस धरातल पर कोई शब्द स्वदेशी अथवा विदेशी नहीं होता। प्रत्येक जीवन्त भाषा में अनेक स्रोतों से शब्द आते रहते हैं और उस भाषा के अंग बनते रहते हैं। भाषा में शुद्ध एवं अशुद्ध का, मानक एवं अमानक का, सुसंस्कृत एवं अपशब्द का तथा आजकल भाषा के मानकीकरण एवं आधुनिकीकरण के बीच वाद-विवाद होता रहा है और होता रहेगा। भारत में ऐसे विद्वानों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है, जो केवल मानक भाषा की अवधारणा से परिचित हैं। जो भाषाएँ इन्टरनेट पर अधिक विकसित एवं उन्नत हो गयीं हैं, उनके भाषाविद् मानक भाषा से ज्यादा महत्त्व भाषा के आधुनिकीकरण को देते हैं। वैयाकरण प्रयोक्ता द्वारा बोली जाने वाली भाषा को आधार मानकर व्याकरण के नियमों का निर्धारण करता है। परम्परा से चिपके रहने वालों की नजर में कुछ शब्द सुसंस्कृत होते हैं एवं कुछ अपशब्द होते हैं। भाषा की प्रकृति बदलना है। भाषा बदलती है। परम्परावादियों को बदली भाषा

भ्रष्ट लगती है। मगर उनके लगने से भाषा अपने प्रवाह को, अपनी गति को, अपनी चाल को रोकती नहीं है। बहती रहती है। बहना उसकी प्रकृति है। इसी कारण कबीर ने कहा था – 'भाखा बहता नीर'। भाषा का अन्तिम निर्णायक उसका प्रयोक्ता होता है। दूसरे काल की भाषा के आधार पर उस काल का वैयाकरणिक संकालिक भाषा के व्याकरण के पुनः नए नियम बनाता है। व्याकरण के नियमों में भाषा को बाँधने की कोशिश करता है। भाषा गतिमान है। पुनः पुनः नया रूप धारण करती रहती है। भाषा वह है, जो भाषा के प्रयोक्ताओं द्वारा बोली जाती है। लेखक इस बात को दोहराना चाहता है कि भविष्य में हिन्दी भाषा का रूप वह होगा, जो लेखक के एवं हिन्दी समाज के प्रपौत्रों तथा प्रपौत्रियों के काल की पीढ़ी द्वारा बोला जाएगा। भाषा का मूल आधार उस के समाज के पढ़े-लिखे द्वारा बोली जानेवाली भाषा ही होती है। इसी के आधार पर किसी काल का वैयाकरण मानक भाषा के नियमों का निर्धारण करता है।

सामान्य जनता द्वारा बोली जाने वाली सरल, बोधगम्य हिन्दी का प्रयोग

यहाँ इसको रेखांकित करना अप्रसांगिक न होगा कि स्वाधीनता संग्राम के दौरान हिन्दीतर भाषी राष्ट्रीय नेताओं ने जहाँ देश की अखंडता एवं एकता के लिए राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार प्रसार की अनिवार्यता की पैरोकारी की वहीं भारत के सभी राष्ट्रीय नेताओं ने एकमतेन सरल एवं सामान्य जनता द्वारा बोली जाने वाली हिन्दी का प्रयोग करने एवं हिन्दी उर्दू की एकता पर बल दिया था। इसी प्रसंग में, लेखक यह जोड़ना चाहता है कि प्रजातंत्र में शुद्ध हिन्दी, क्लिष्ट हिन्दी, संस्कृत गर्भित हिन्दी जबरन नहीं चलाई जानी चाहिए। जनतंत्र में ऐसा करना सम्भव नहीं है। ऐसा फासिस्ट शासन में ही सम्भव है। हमें सामान्य आदमी जिन शब्दों का प्रयोग करता है उनको अपना लेना चाहिए। यदि वे शब्द अंग्रेजी से हमारी भाषाओं में आ गए हैं, हमारी भाषाओं के अंग बन गए हैं तो उन्हें भी अपना लेना चाहिए। यह सर्वविदित है कि प्रेमचन्द जैसे महान रचनाकार ने भी प्रसंगानुरूप किसी भी शब्द का प्रयोग करने से परहेज नहीं किया। उनकी रचनाओं में अंग्रेजी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। अपील, अस्पताल, ऑफिसर, इंस्पेक्टर, एक्टर, एजेंट, एडवोकेट, कलर, कमिश्नर, कम्पनी, कॉलिज, कांस्टेबिल, कैम्प, कौंसिल, गजट, गवर्नर, गैलन, गैस, चेयरमेन, चौक, जेल, जेलर, टिकट, डाक्टर, डायरी, डिप्टी, डिपो, डेस्क, ड्राइवर, थियेटर, नोट, पार्क, पिस्तौल,

पुलिस, फंड, फिल्म, फैक्टरी, बस, बिस्कुट, बूट, बैंक, बैंच, बैरंग, बोतल, बोर्ड, ब्लाउज, मास्टर, मिनिट, मिल, मेम, मैनेजर, मोटर, रेल, लेडी, सरकस, सिगरेट, सिनेमा, सिमेंट, सुपरिन्टेंडैंट, स्टेशन आदि हजारों शब्द इसके उदाहरण हैं। प्रेमचन्द जैसे हिन्दी के महान साहित्यकार ने अपने उपन्यासों एवं कहानियों में अंग्रेजी के इन शब्दों का प्रयोग करने में कोई झिझक नहीं दिखाई है। जब प्रेमचंद ने उर्दू से आकर हिन्दी में लिखना शुरू किया था तो उनकी भाषा को देखकर छायावादी संस्कारों में रँगे हुए आलोचकों ने बहुत नाक-भौंह सिकौड़ी थी तथा प्रेमचंद को उनकी भाषा के लिए पानी पी पीकर कोसा था। मगर प्रेमचंद की भाषा खूब चली। खूब इसलिए चली क्योंकि उन्होंने प्रसंगानुरूप किसी भी शब्द का प्रयोग करने से परहेज नहीं किया। उन्होंने शब्दावली आयोग की तरह इसके लिए विशेषज्ञों को बुलाकर यह नहीं कहा कि पहले इन अंग्रेजी के शब्दों के लिए शब्द गढ़ दो ताकि मैं अपना साहित्य सर्जित कर सकूँ। उनके लेखन में अंग्रेजी के ये शब्द ऊधारी के नहीं हैं, जनजीवन में प्रयुक्त शब्द भंडार के आधारभूत, अनिवार्य, अवैकल्पिक एवं अपरिहार्य अंग हैं। फिल्मों, रेडियो, टेलीविजन, दैनिक समाचार पत्रों में जिस हिन्दी का प्रयोग हो रहा है वह जन-प्रचलित भाषा है। जनसंचार की भाषा है। समय-समय पर बदलती भी रही है। पुरानी फिल्मों में प्रयुक्त होने वाले चुटीले संवादों तथा फिल्मी गानों की पंक्तियाँ जैसे पुरानी पीढ़ी के लोगों की जबान पर चढ़कर बोलती थीं वैसे ही आज की युवा पीढ़ी की जुबान पर आज की फिल्मों में प्रयुक्त संवादों तथा गानों की पंक्तियाँ बोलती हैं। फिल्मों की स्क्रिप्ट के लेखक जन-प्रचलित भाषा को परदे पर लाते हैं। उनके इसी प्रयास का परिणाम है कि फिल्मों को देखकर समाज के सबसे निचले स्तर का आम आदमी भी फिल्म का रस ले पाता है। लेखक का सवाल यह है कि यदि साहित्यकार, फिल्म के संवादों तथा गीतों के लेखक, समाचार पत्रों के रिपोर्टर जन-प्रचलित हिन्दी का प्रयोग कर सकते हैं तो भारत सरकार का शासन 'प्रशासन की राजभाषा हिन्दी' को जन-प्रचलित क्यों नहीं बना सकता। विचारणीय है कि हिंदी फिल्मों की भाषा ने गाँवों और कस्बों की सड़कों एवं बाजारों में आम आदमी के द्वारा रोजमर्रा की जिंदगी में बोली जाने वाली बोलचाल की भाषा को एक नई पहचान दी है। फिल्मों के कारण हिन्दी का जितना प्रचार-प्रसार हुआ है उतना किसी अन्य एक कारण से नहीं हुआ। आम आदमी जिन शब्दों का व्यवहार करता है उनको हिन्दी फिल्मों के संवादों एवं गीतों के लेखकों ने बड़ी खूबसूरती से सहेजा है। राजभाषा के

संदर्भ में यह संवैधानिक आदेश है कि संघ का यह कर्त्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्थानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात् करते हुए और जहाँ आवश्यक या वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द-भंडार के लिए मुख्यत: संस्कृत से और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे। भारत सरकार का शासन राजभाषा का तद्नुरूप विकास कर सका है अथवा नहीं यह सोचने विचारने की बात है। इस दृष्टि से भी लेखक फिल्मों में कार्यरत सभी रचनाकारों एवं कलाकारों का अभिनंदन करता है।हिन्दी सिनेमा ने भारत की सामासिक संस्कृति के माध्यम की निर्मिति में अप्रतिम योगदान दिया है। बंगला, पंजाबी, मराठी, गुजराती, तमिल आदि भाषाओं एवं हिन्दी की विविध उप-भाषाओं एवं बोलियों के अंचलों तथा विभिन्न पेशों की बस्तियों के परिवेश को सिनेमा की हिन्दी ने मूर्तमान एवं रूपायित किया है। भाषा तो हिन्दी ही है मगर उसके तेवर में, शब्दों के उच्चारण के लहजे में, अनुतान में तथा एकाधिक शब्द-प्रयोग में परिवेश का तड़का मौजूद है। भाषिक प्रयोग की यह विशिष्टता निंदनीय नहीं अपितु प्रशंसनीय है। लेखक को प्रसन्नता है कि देर आए दुरुस्त आए, राजभाषा विभाग ने प्रशासनिक हिन्दी को सरल बनाने की दिशा में कदम उठाने शुरू कर दिए हैं। जैसे प्रेमचन्द ने जन-प्रचलित अंग्रेजी के शब्दों को अपनाने से परहेज नहीं किया वैसे ही प्रशासनिक हिन्दी में भी प्रशासन से सम्बंधित ऐसे शब्दों को अपना लेना चाहिए, जो जन-प्रचलित हैं। उदाहरण के लिए एडवोकेट, ओवरसियर, एजेंसी, लाट, चौक, अपील, स्टेशन, प्लेटफार्म, एसेम्बली, ऑडिट, केबिनेट, कैम्पस, कैरियर, केस, कैश, बस, सेंसर, बोर्ड, सर्टिफिकेट, चालान, चेम्बर, चार्जशीट, चार्ट, चार्टर, सर्किल, इंस्पेक्टर, सर्किट हाउस, सिविल, क्लेम, क्लास, क्लर्क, क्लिनिक, क्लॉक रूम, मेम्बर, पार्टनर, कॉपी, कॉपीराइट, इन्कम, इन्कम टैक्स, इंक्रीमेंट, स्टोर आदि। इसी प्रसंग में, लेखक भारत सरकार के राजभाषा विभाग को यह सुझाव भी देना चाहता है कि जिन संस्थाओं में सम्पूर्ण प्रशासनिक कार्य हिन्दी में शतकों अथवा दशकों से होता आया है वहाँ की फाइलों में लिखी गई हिन्दी भाषा के आधार पर प्रशासनिक हिन्दी को सरल बनाएँ। जब कोई रोजाना फाइलों में सहज रूप से लिखता है तब उसकी भाषा का रूप अधिक सरल और सहज होता है बनिस्पत जब कोई सजग होकर भाषा को बनाता है।

सरल भाषा बनाने से नहीं बनती, सहज प्रयोग करते रहने से बन जाती है, ढल जाती है।

सन् 2014 में, राष्ट्रपति के अभिभाषण पर धन्यवाद प्रस्ताव पर हुई बहस का, जो उत्तर भारत के प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने संसद के दोनों सदनों में दिया उसको लेखक ने सुना तथा प्रयुक्त अंग्रेजी के शब्दों को अपनी शक्ति-सीमा के दायरे में लिखता गया। बहुत से शब्द छूट भी गए। लेखक उक्त संदर्भित भाषण में बोले गए अंग्रेजी के जिन शब्दों को लिख पाया, वे शब्द निम्नलिखित हैं– 1.स्कैम इंडिया 2. स्किल इंडिया 3. एंटरप्रेन्योरशिप 4. स्किल डेवलपमेंट 5. एजेंडा 6. रोडमैप 7. रेप 8. एफ. आई. आर. 9. रेंज 10. कॉमन 11. ब्रेक 12.इंडस्ट्रीज 13. फोकस 14. मार्केटिंग 15. प्रोडक्ट। ऐसा लेखक ने इस कारण किया जिससे वह उन विद्वानों को उत्तर देने में समर्थ हो सके, जो मूल धारा की शुद्धता को बनाए रखने के नाम पर केवल संस्कृताधारित शब्दों के प्रयोग के हिमायती हैं। प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी अपने भाषणों में जिस हिन्दी का प्रयोग करते हैं, वह अनुकरणीय है। मोदी जी अपने भाषणों में अंग्रेजी के जन प्रचलित शब्दों का प्रयोग करते हैं और यह भी एक कारण है कि उनके भाषणों को सुनकर देश और विदेश के श्रोतागण करतल ध्वनि से स्वागत करते हैं। भाषा की प्रयोजनशीलता संप्रेषणीयता है। भारत सरकार के अधिकारियों को तथा विशेष रूप से गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग के अधिकारियों को इस पर विचार करना चाहिए और तदनुरूप भाषा प्रयोग की नीति का निर्धारण करना चाहिए। राजभाषा हिन्दी में अरबी-फारसी एवं अंग्रेजी के जन प्रचलित शब्दों का प्रयोग करने से परहेज नहीं करना चाहिए। जिन शब्दों का हिन्दी भाषा-क्षेत्र का प्रयोक्ता अपनी जिन्दगी में रोजाना प्रयोग करता है, वे समस्त शब्द एककालिक स्तर पर हिन्दी भाषा के शब्दकोश के अंग हैं। एककालिक स्तर पर प्रयुक्त शब्द देशी अथवा विदेशी नहीं होता।

अंग्रेजी में भारतीय भाषाओं के शब्दों का प्रयोग

ऐसा नहीं है कि केवल हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में ही अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग होता है और अंग्रेजी बिल्कुल अछूती है। अंग्रेजी में संसार की उन सभी भाषाओं के शब्द प्रयुक्त होते हैं, जिन भाषाओं के बोलने वालों से अंग्रेजो का सामाजिक सम्पर्क हुआ। चूँकि अंग्रेजों का भारतीय समाज से भी सम्पर्क हुआ, इस कारण अंगेजी ने हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों

का आदान किया है। यदि ब्रिटेन में इंडियन रेस्तराँ में अंग्रेज समोसा, इडली, डोसा, भेलपुरी खायेंगे, खाने में 'करी', 'भुना आलू' एवं 'रायता' मागेंगे तो उन्हें उनके वाचक शब्दों का प्रयोग करना पड़ेगा। यदि भारत का 'योग' करेंगे तो उसके वाचक शब्द का भी प्रयोग करना होगा और वे करते हैं, भले ही उन्होंने उसको अपनी भाषा में 'योगा' बना लिया है, जैसे हमने 'हॉस्पिटल' को 'अस्पताल' बना लिया है। जिन अंग्रेजों ने भारत विद्या एवं धर्मशास्त्र का अध्ययन किया है उनकी भाषा में अवतार, अहिंसा, कर्म, गुरु, तंत्र, देवी, नारद, निर्वाण, पंडित, ब्राह्मन, बुद्ध, भक्ति, भगवान, भजन, मंत्र, महात्मा, महायान, माया, मोक्ष, यति, वेद, शक्ति, शिव, संघ, समाधि, संसार, संस्कृत, साधु, सिद्ध, सिंह, सूत्र, स्तूप, स्वामी, स्वास्तिक, हनुमान, हरि, हिमालय आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है। भारत में रहकर जिन अंग्रेजों ने पत्र, संस्मरण, रिपोर्ट, लेख आदि लिखे उनकी रचनाओं में तथा वर्तमान इंगलिश डिक्शनरी में अड्डा, इज्जत, कबाब, कोरा, कौड़ी, खाकी, खाट, घी, चक्कर, चटनी, चड्डी, चमचा, चिट, चोटी, छोटू, जंगल, ठग, तमाशा, तोला, धतूरा, धाबा, धोती, नबाब, नमस्ते, नीम, पंडित, परदा, पायजामा, बदमाश, बाजार, बासमती, बिंदी, बीड़ी, बेटा, भाँग, महाराजा, महारानी, मित्र, मैदान, राग, राजा, रानी, रुपया, लाख, लाट, लाठी चार्ज, लूट, विलायती, वीणा, शाबाश, सरदार, सति, सत्याग्रह, सारी(साड़ी), सिख, हवाला एवं हूकाह(हुक्का) जैसे शब्दों को पहचाना जा सकता है।

हिन्दी भाषा की प्रकृति के अनुरूप वाक्य रचना

लेखक ने अपने लेख में लिखा था कि राजभाषा हिन्दी का प्रयोग करते समय वाक्य रचना अंग्रेजी की वाक्य रचना के अनुरूप नहीं होनी चाहिए। यह रचना हिन्दी की प्रकृति के अनुरूप होनी चाहिए। भारत सरकार के मंत्रालय के राजभाषा अधिकारी का काम होता है कि वह अंग्रेजी के मैटर का आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली में अनुवाद कर दे। अधिकांश अनुवादक शब्द की जगह शब्द रखते जाते हैं। हिन्दी भाषा की प्रकृति को ध्यान में रखकर वाक्य नहीं बनाते। इस कारण जब राजभाषा हिन्दी में अनुवादित सामग्री पढ़ने को मिलती है तो उसे समझने के लिए कसरत करनी पड़ती है। लेखक जोर देकर यह कहना चाहता है कि लोकतंत्र में राजभाषा आम आदमी के लिए बोधगम्य होनी चाहिए। सरकारी अधिकारियों ने इस बात पर जोर दिया है कि राजभाषा सामान्य भाषा से अलग दिखनी चाहिए। वह गरिमामय लगनी चाहिए। उसको सुनकर सत्ता का

आधिपत्य परिलक्षित होना चाहिए। राजभाषा अधिकारी हिन्दी में अंग्रेजी की सामग्री का अनुवाद अधिक करता है। मूल टिप्पण हिन्दी में नहीं लिखा जाता। मूल टिप्पण अंग्रेजी में लिखा जाता है। अनुवादक, जो अनुवाद करता है, वह अंग्रेजी की वाक्य रचना के अनुरूप अधिक होता है। हिन्दी भाषा की रचना-प्रकृति अथवा संरचना के अनुरूप कम होता है। उदाहरणार्थ, जब कोई पत्र मंत्रालय को भेजते हैं तो उसकी पावती की भाषा की रचना निम्न होती है–

'पत्र दिनांक - - - , क्रमांक - - - प्राप्त हुआ'।

सवाल यह है कि क्या प्राप्त हुआ। क्रमांक प्राप्त हुआ अथवा दिनांक प्राप्त हुआ अथवा पत्र प्राप्त हुआ। अंग्रेजी की वाक्य रचना में क्रिया पहले आती है। हिन्दी की वाक्य रचना में क्रिया बाद में आती है। इस कारण, जो वाक्य रचना अंग्रेजी के लिए ठीक है उसके अनुरूप रचना हिन्दी के लिए सहज, सरल एवं स्वाभाविक नहीं है। क्रिया (प्राप्त होना अथवा मिलना) का सम्बंध दिनांक से अथवा क्रमांक से नहीं है। पत्र से है। एक विद्वान को इसमें कोई दोष नजर नहीं आता। लेखक उनका ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता है कि हिन्दी एवं अंग्रेजी की वाक्य संरचना में अन्तर हैं। हिन्दी एवं अंग्रेजी के व्यतिरेकी अध्ययन(Contrastive study) पर अनेक विद्वानों ने कार्य किया है। उन ग्रंथों को पढ़ा जा सकता है। सामान्य पाठक के लिए लेखक यह स्पष्ट करना चाहता है कि उपर्युक्त उदाहरण की वाक्य रचना हिन्दी की रचना प्रकृति के हिसाब से निम्न होनी चाहिए - 'आपका दिनांक - - - का लिखा पत्र प्राप्त हुआ। उसका क्रमांक है - - - -'।

हिन्दी की वाक्य रचना भी दो प्रकार की होती है। एक रचना सरल होती है। दूसरी रचना जटिल एवं क्लिष्ट होती है। सरल वाक्य रचना में वाक्य छोटे होते हैं। संयुक्त एवं मिश्र वाक्य बड़े होते हैं। सरल वाक्य रचना वाली भाषा सरल, सहज एवं बोधगम्य होती है। संयुक्त एवं मिश्र वाक्यों की रचना वाली भाषा जटिल होती है, कठिन लगने लगती है, क्लिष्ट लगने लगती है और इस कारण अबोधगम्य हो जाती है।

अंत में, लेखक यह निवेदन करना चाहता है कि हिन्दी के विकास के लिए सरल, सहज, पठनीय, बोधगम्य भाषा-शैली का विकास करना अपेक्षित है। इससे हिन्दी लोक में प्रिय होगी। लोक प्रचलित होगी।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास एवं हिन्दी

अर्थव्यवस्था के भूमंडलीकरण और उदारीकरण के दबाव के कारण आज प्रौद्योगिकी की आवश्यकता पहले से और अधिक बढ़ गई है। प्रौद्योगिकीय गतिविधियों को बनाए रखने के लिए, लोकतंत्रात्मक दर्शन एवं मूल्यों के अनुरूप सामान्य नागरिक एवं शासनतंत्र के बीच सार्थक संवाद के लिए ई–गवर्नेंस के प्रसार तथा सामाजिक–आर्थिक चुनौतियों के समाधान के लिए भारतीय जन मानस में वैज्ञानिक चेतना एवं प्रौद्योगिकी के उपयोग का विकास अनिवार्य है। देश की सम्पर्क भाषा हिन्दी में वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकीय ज्ञान के सतत् विकास और प्रसार के लिए हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन एवं प्रौद्योगिकी विकास के लिए वैज्ञानिकों, प्रौद्योगिकविदों एवं हिन्दी भाषा के विशेषज्ञों को मिलकर निरन्तर कार्य करना होगा।

हिन्दी में विज्ञान सम्बन्धी साहित्य का लेखन-कार्य

हिन्दी में विज्ञान सम्बन्धी साहित्य का लेखन–कार्य भारतेन्दु काल से प्रारम्भ हो गया था। 19वीं शताब्दी से इस दिशा में यत्र–तत्र हुए प्रयास बिखरे हुए मिलते हैं। स्कूल बुक सोसायटी, आगरा (सन् 1847), साइंटिफिक सोसायटी, अलीगढ़ (सन् 1862), काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी (सन् 1898), गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार (सन् 1900) विज्ञान परिषद्, इलाहाबाद (सन् 1913), वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली मण्डल (सन् 1950), वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग (सन् 1961) आदि ने वैज्ञानिक साहित्य के निर्माण में उल्लेखनीय कार्य किया है। यह जरूर है कि इस वैज्ञानिक–लेखन की भाषिक स्थिति के सम्बन्ध में अपेक्षित विचार सम्भव नहीं हो सका। हिन्दी में, जो पुस्तकें वैज्ञानिक विषयों पर उच्चतर माध्यमिक एवं इन्टरमीडिएट कक्षा के विद्यार्थियों को ध्यान में रखकर लिखी गई हैं उनकी संख्या बहुत अधिक है। उनकी भाषा–शैली भी अपेक्षाकृत सहज एवं बोधगम्य है। किन्तु जिन ग्रन्थों का निर्माण "मानक ग्रन्थ अनुवाद योजना" के अंतर्गत किया गया उनकी भाषा–शैली में अपेक्षाकृत अस्पष्टता एवं अस्वाभाविकता है तथा अंग्रेजी के वाक्य–विन्यासों की छाया दिखाई देती है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास एवं हिन्दी

इस दृष्टि से हिन्दी भाषा के विकास में नए आयाम जोड़ने की आवश्यकता असंदिग्ध है। यह निम्न उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए जरूरी है:–

- सुगम एवं बोधगम्य तकनीकी लेखन की शैली का तीव्र गति से अधिकाधिक विकास होना।
- जन–सामान्य के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी को सुबोध और सम्प्रेषणीय बनाना।
- जन–सामान्य में जिज्ञासा, तार्किकता एवं विवेकशीलता की प्रवृत्तियों का स्वाभाविक रूप से विकास करना
- उनमें विश्लेषणात्मक चिंतन शक्ति का विकास।उनमें प्रकृति की प्रक्रियाओं के बोध की दृष्टि उत्पन्न करना।
- हिन्दी के वैज्ञानिक लेखन को बच्चों और किशोरों के लिए आकर्षक एवं बोधगम्य बनाना।
- वयस्कों को उस लेखन का ज्ञान सहज ढंग से उपलब्ध कराना।

विद्वानों को वैज्ञानिक लेखन की विषय–वस्तु और उसके प्रस्तुतीकरण, सरलीकरण, मानकीकरण, शैलीकरण आदि पर विचार–विमर्श करना चाहिए। इस सम्बंध में एक स्पष्ट नीति एवं योजना बनाने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से लेखक का व्यक्तिगत विचार यह है कि हिन्दी के वैज्ञानिक लेखन के प्रसार के लिए भाषा के मानकीकरण की अपेक्षा भाषा के आधुनिकीकरण पर अधिक बल देने की आवश्यकता है।

सूचना प्रौद्यौगिकी के संदर्भ में हिन्दी की स्थिति पर भी विचार अपेक्षित है। आने वाले समय में वही भाषायें विकसित हो सकेंगी तथा जिन्दा रह पायेंगी जिनमें इन्टरनेट पर सूचनायें उपलब्ध होंगी। भाषा वैज्ञानिकों का अनुमान है कि इक्कीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक भाषाओं की संख्या में अप्रत्याशित रूप से कमी आएगी। अनुमान है कि वे भाषाएँ ही टिक पायेंगी जिनका व्यवहार अपेक्षाकृत व्यापक क्षेत्र में होगा तथा जो भाषिक प्रौद्योगिकी की दृष्टि से इतनी विकसित हो जायेंगी जिससे इन्टरनेट पर काम करने वाले उपयोगकर्ताओं के लिए उन भाषाओं में उनके प्रयोजन की सामग्री सुलभ होगी।

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान एवं हिन्दी सूचना एवं प्रौद्योगिकी

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान ने सन् 1990 ईस्वीं के बाद से हिन्दी सूचना एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में कार्य करने की दिशा में कारगर कदम उठाने शुरू किए। सन् 1992 में, संकाय संवर्द्धन कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषा प्रौद्योगिकी पाठ्यक्रम और कम्प्यूटर परिचय की कार्यशाला आयोजित हुई। विदेशी भाषा के रूप में

हिन्दी भाषा का कम्प्यूटर साधित अध्ययन एवं शिक्षण परियोजना का कार्य सम्पन्न हुआ। संस्थान ने सन् 2000 में, हिन्दी विश्वकोश की समस्त सामग्री को 6 खण्डों में तैयार करके उसे इन्टरनेट पर डालने की योजना बनाई तथा इसके जीरो वर्जन का विमोचन इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र के तत्कालीन अध्यक्ष डॉ. लक्ष्मी मल्ल सिंघवी ने किया। सन् 1991 में, भारत सरकार के तत्कालीन 'सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय' की 'भारतीय भाषाओं में प्रौद्योगिकी विकास' सम्बंधित योजना के अन्तर्गत 'हिन्दी कॉर्पोरा' परियोजना का काम आरम्भ हुआ। इस परियोजना के अन्तर्गत विविध विषयों के 3 करोड़ से अधिक शब्दों का संग्रह कर लिया गया है। इसकी टैगिंग के नियमों का निर्धारण सन् 2000 ईस्वी तक हो गया था। समस्त शब्दों की टैगिंग होने से कम्प्यूटर पर हिन्दी में और अधिक सुविधाएँ सुलभ हो जाएँगी। टैगिंग से मतलब शब्द के केवल अधिकतर समझे जाने वाले वाग् भाग (Part of speech) के निर्धारण से ही नहीं है अपितु भाषा में उसके समस्त प्रयोगो एवं संदर्भित अर्थों के आधार पर उसके समस्त वाग् भागों (संज्ञा , क्रिया , विशेषण , पूर्वसर्ग , सर्वनाम , क्रिया विशेषण , अव्यय, संयोजन , विस्मयादिबोधक) तथा समस्त व्याकरणिक कोटियों (वचन, लिंग, पुरुष, कारक आदि) को स्पष्ट करना है, उसके सह-प्रयोगों को स्पष्ट करना है। यदि उसके प्रयोग में संदिग्धार्थकता की सम्भावनाएँ हैं तो उन्हें भी बताना है। उदाहरण के लिए सामान्यतः 'पत्थर' शब्द संज्ञा समझा जाता है मगर इसका प्रयोग संज्ञा, क्रिया, विशेषण, अव्यय के रूप में भी होता है। निम्न वाक्यों से यह स्पष्ट हो जाएगा।

(1) यह पत्थर बड़ा चमकीला है।

(2) वह तो बिल्कुल ही पथरा गया है।

(3) पत्थर दिल नहीं पसीजते।

(4) तुम मेरा काम क्या पत्थर करोगे।

इसके अलावा टैगिंग में विवेच्य भाषा में प्रयुक्त उस शब्द के संदर्भित अर्थ प्रयोगो का आवृत्तिपरक अथवा सांख्यिकीय तकनीक से अध्ययन किया जाता है। मशीनी अनुवाद की सटीकता के लिए गतिशील प्रोग्रामिंग एल्गोरिदम का विकास जरूरी है। कम्प्यूटरीकृत भाषा विश्लेषण के लिए टैगिंग की वह तकनीक अधिक सटीक हो सकती है, जहाँ शब्द की टैगिंग उसके समस्त वाग्भागों की पूरी पूरी जानकारी प्रदान करे, प्रयोगों की आवृत्ति का साख्यिकीय तकनीक से अध्ययन सम्पन्न करे तथा वाक्य विन्यास और अर्थ विज्ञान के सिद्धांतों के परिप्रेक्ष्य में उसके समस्त प्रयोगों को स्पष्ट करे।

फॉन्ट

यह संतोष का विषय है कि इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों ने अब धीरे–धीरे हिन्दी में अपनी जगह बनानी शुरू कर दी है। आज से एक दशक पहले तक फॉन्ट की बहुत बड़ी समस्या थी। मुझे याद आ रहा है, लेखक ने एक लेख कृतिदेव फॉन्ट में टाइप कराकर एक साइट पर प्रकाशन के लिए भेजा था। जब लेख पढ़ने को मिला तो लेख में जिन शब्दों में 'श' वर्ण था उसके स्थान पर 'ष' वर्ण छप गया तथा जिन शब्दों में 'ष' वर्ण था उसके स्थान पर 'श' छप गया। 'भाषा' का रूप 'भाशा' हो गया। देवनागरी यूनिकोड के कारण अब स्थिति बदल गई है। हिन्दी में देवनागरी में टाइपिंग के लिए अनेक प्रकार के साधन उपलब्ध हैं। मंगल, रघु, संस्कृत 2003, अपराजिता आदि में से किसी फॉन्ट में टाइप किया जा सकता है। जो हिन्दी टाइपिंग नहीं जानते वे क्विलपैड, गूगल इण्डिक लिप्यन्तरण आदि में से किसी साइट पर जाकर रोमन लिपि में टाइप कर सकते हैं। रोमन वर्ण देवनारी वर्ण में बदल जाएगा अर्थात् लिप्यान्तरित(transliterate) हो जाएगा।

ऑपरेटिंग सिस्टम में हिन्दी

विंडोज के संस्करणों में हिन्दी में काम करने के लिए दो तरीके हैं। कुछ विंडोज में उसके कंट्रोल पैनल में जाकर हिन्दी समर्थन सक्षम करना होता है, जबकि कुछ विंडोज में हिन्दी भाषा का पैक पहले से इंस्टॉल्ड होता है अर्थात् वे हिन्दी के लिए स्वतः समर्थन सक्षम होते हैं। उदाहरण के लिए माइक्रोसॉफ्ट विंडोज के विंडोज क्सपी, विंडोज 2003 में कंट्रोल पैनल में जाकर हिन्दी समर्थन सक्षम करना होता है (इनमें कंट्रोल पैनल में जाकर रीजनल लैंग्वेज ऑप्शन्स में यूनिकोड को एक्टिवेट किया जाता है। हिन्दी (देवनागरी इंस्क्रिप्ट) का चयन करने के बाद कम्प्यूटर पर हिन्दी में वैसे ही काम किया जा सकता है, जैसे रोमन लिपि से होता है। विंडोज विस्ता, विंडोज 7 में भारतीय भाषाओं के लिए स्वतः समर्थन सक्षम व्यवस्था है। भारतीय भाषाओं को ध्यान में रखकर सी–डेक ने बॉस लिनक्स निर्मित किया है। लिनक्स के सभी नए संस्करणों का ऑपरेटिंग सिस्टम हिन्दी भाषा में काम करने के लिए स्वतः समर्थन सक्षम है।

फॉन्ट परिवर्तक एवं लिप्यान्तरण

मेरे बहुत से लेख कृतिदेव फॉन्ट में हैं। अब इस फॉन्ट की सामग्री को फॉन्ट परिवर्तक साइट पर जाकर यूनिकोड में बदलना आसान हो गया है। फॉन्ट परिवर्तक की कई साइटें हैं, जिन पर जाकर पुराने फॉन्टों में टाइप की हुई पाठ सामग्री को यूनिकोड में बदला जा सकता है। लिप्यान्तरण के औजारों से किसी एक भारतीय भाषा की लिपि में टाइप सामग्री को किसी अन्य भारतीय भाषा की लिपि में ऑनलाइन बदलकर पढ़ा जा सकता है।

शब्दकोश

अब हिन्दी में प्रत्येक प्रकार के शब्दकोश उपलब्ध हैं। हिन्दी शब्द तंत्र, शब्दमाला, विक्षनरी, ई–महाशब्दकोश, वर्धा हिन्दी शब्दकोश के अलावा हिन्दी विश्वकोश, हिन्दी यूनिकोड पाठ संग्रह, अरविंद समान्तर कोश आदि हैं। 'प्रबोधमहाशब्दकोश' के बाद नया महाशब्दकोश विकसित करने का काम प्रगति पर है। केन्द्रीय हिन्दी संस्थान ने श्री अरविन्द कुमार और उनकी पत्नी श्रीमती कुसुम कुमार से 'संस्थान अरविंद लेक्सीकॉन' बनवाया है, जिसमें नौ लाख से अधिक अभिव्यक्तियाँ हैं।

वर्तनी की जाँच (स्पैल चौकर), ईमेल, मोबाइल, चेट, सर्च इंजन

वर्तनी की जाँच (स्पैल चौकर) के लिए 'कुशल हिन्दी वर्तनी जाँचक', 'सक्षम हिन्दी वर्तनी परीश्रक' तथा 'ओपन सोर्स यूनिकोड वर्तनी परीक्षक तथा शोधक' हैं। ईमेल, मोबाइल, चेट, सर्च इंजन आदि पर हिन्दी उपलब्ध है। ईमेल के लिए जीमेल में हिन्दी की सुविधा सबसे अधिक हैं। निर्देश भी हिन्दी में हैं। चेट के लिए गूगल टॉक एवं याहू मैसेंजर में हिन्दी सुविधा है।

सी–डेक एवं राजभाषा के लिए सुविधाएँ

हम पूर्व में, एक अलग लेख में, पुणें की सी–डेक के द्वारा राजभाषा विभाग के लिए प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ स्तर की परीक्षाओं के लिए कम्प्यूटर की सहायता से मल्टी मीडिया पद्धति से प्रशिक्षण सामग्री के निर्माण के सम्बंध में उल्लेख कर चुके हैं। प्रशिक्षण सामग्री का नाम लीला हिन्दी प्रबोध, लीला हिन्दी प्रवीण, लीला हिन्दी प्राज्ञ है। यह सामग्री भारत सरकार के राजभाषा विभाग की वेबसाइट पर सर्व साधारण के उपयोग के लिए उपलब्ध है। इस संस्था ने

अन्य काम भी किए हैं। इसके द्वारा निर्मित 'मंत्र' सॉफ्टवेयर में अनुवाद की सुविधा है। हिंदी पाठ की किसी भी फाइल को 'प्रवाचक' हरीश भिमानी की आवाज में पढ़कर सुना देता है। 'श्रुतलेखन' आपकी आवाज में बोले हुए पाठ को देवनागरी में रूपांतरित कर देता है। इस प्रकार राजभाषा हिन्दी के लिए अब पाठ से वाक (टैक्स्ट टू स्पीच) तथा वाक से पाठ (स्पीच टू टैक्स्ट) दोनों सुविधाएँ मौजूद हैं। श्रुतलेखन–राजभाषा तथा वाचान्तर–राजभाषा सॉफ्टवेयर बन गए हैं।

मशीनी अनुवाद, ओसीआर, हिन्दी भाषा शिक्षण, देवनागरी शिक्षण

मशीनी अनुवाद की सुविधा गूगल, बैबीलॉन, विकिभाषा पर उपलब्ध है। हम पहले उल्लेख कर चुके हैं कि सी–डेक ने भारत सरकार के कार्यालयों में राजभाषा के प्रयोग के लिए अंग्रेजी पाठ का हिन्दी में अनुवाद के लिए मशीनी अनुवाद की व्यवस्था कर दी है। इसके लिए 'मंत्र–राजभाषा' सॉफ्टवेयर निर्मित हो गया है।

मशीनी अनुवाद को सक्षम बनाने के लिए यह जरूरी है कि इन्टरनेट पर प्रत्येक विषय की सामग्री उपलब्ध हो। मशीनी अनुवाद सूचना निष्कर्षण (Information Extraction) पद्धति पर आधारित होता है अर्थात् मशीन किसी भाषा में जो डॉटा उपलब्ध होता है उसे याद कर लेती है और उस स्मृति क्षमता के आधार पर अनुवाद करती है। उसे जिस भाषा की जितनी अधिक सामग्री मिलती जाती है वह उस भाषा में अनुवाद करने के अपने मॉडल को उसी अनुपात में बदलती जाती है। सीखने एवं याद करने की प्रक्रिया सतत् जारी रहती है। इस कारण जिस भाषा की जितनी सामग्री इन्टरनेट पर उपलब्ध होगी, उस भाषा का मशीनी अनुवाद उतना ही प्रभावी और सक्षम होगा।

देवनागरी वर्ण चिन्हक (OCR) बन गया है। हिन्दी के पाठ में शब्दों की आवृत्ति के लिए पहले शोधक वर्षों मेहनत करके हजारों लाखों चिटें बनाने का श्रम करते थे। अब सॉफ्टवेयर इस काम को बहुत कम समय में सहज सम्पन्न कर देता है। हिन्दी भाषा सीखने के लिए 'हिन्दी गुरु' है तथा देवनागरी लिपि सीखने के लिए 'अच्छा' है। देवनागरी में लिखे शब्दों अथवा शब्द समूहों को देवनागरी वर्ण–क्रम के अनुसार व्यवस्थित करने का ऑनलाइन प्रोग्राम मौजूद है। पाठ को तरह तरह से संसाधित करने के ऑनलाइन प्रोग्राम भी मौजूद हैं।

शब्द संसाधन एवं डाटाबेस प्रबंधन

देवनागरी में लिखे शब्दों अथवा शब्द समूहों को देवनागरी वर्ण-क्रम के अनुसार व्यवस्थित करने के ऑनलाइन प्रोग्राम मौजूद है। पाठ को तरह-तरह से संसाधित करने के ऑनलाइन प्रोग्राम भी मौजूद हैं।

प्रकाशन, वेबसाइट, ज्ञानकोष

डीटीपी प्रकाशन के लिए माइक्रोसॉफ्ट पब्लिशर अच्छा है। प्रकाशन सॉफ्टवेयर पैकेज उपलब्ध हैं। हिन्दी में वेबसाइट बनाना आसान हो गया है। वेबदुनिया, जागरण, प्रभासाक्षी और बीबीसी हिंदी के दैनिक पाठकों की संख्या बीस लाख से अधिक हो गई है। श्री आदित्य चौधरी ने विकीपीडिया की तरह 'भारतकोष' नामक पॉर्टल बनाया है। इसमें इतिहास, भूगोल, विज्ञान, धर्म, दर्शन, संस्कृति, पर्यटन, साहित्य, कला, राजनीति, जीवनी, उद्योग, व्यापार और खेल आदि विषयों पर पर्याप्त सामग्री है। जो काम महात्मा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय को करना चाहिए था उसे भारतकोश की टीम कर रही है। यह संतोष का विषय है कि केन्द्रीय हिन्दी संस्थान में 'लघु हिन्दी विश्वकोश परियोजना' पर काम हो रहा है।

सूचना प्रौद्योगिकी के संदर्भ में हिन्दी की प्रगति एवं विकास

सूचना प्रौद्योगिकी के संदर्भ में हिन्दी की प्रगति एवं विकास के लिए लेखक एक बात की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहता है। व्यापार, तकनीकी और चिकित्सा आदि क्षेत्रों की अधिकांश बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अपने माल की बिक्री के लिए सम्बंधित सॉफ्टवेयर ग्रीक, अरबी, चीनी सहित संसार की लगभग 30 से अधिक भाषाओं में बनाती हैं मगर वे हिन्दी भाषा का पैक नहीं बनाती। उनके प्रबंधक इसका कारण यह बताते हैं कि हम यह अनुभव करते हैं कि हमारी कम्पनी को हिन्दी के लिए भाषा पैक की जरूरत नहीं है। हमारे प्रतिनिधि भारतीय ग्राहकों से अंग्रेजी में आराम से बात कर लेते हैं अथवा हमारे भारतीय ग्राहक अंग्रेजी में ही बात करना पसंद करते हैं। यह स्थिति कुछ उसी प्रकार की है, जैसी लेखक तब अनुभव करता था जब वह रोमानिया के बुकारेस्त विश्वविद्यालय में हिन्दी का विजिटिंग प्रोफेसर था। उसकी कक्षा के हिन्दी पढ़ने वाले विद्यार्थी बड़े चाव से भारतीय राजदूतावास जाते थे मगर वहाँ उनको हिन्दी नहीं अपितु अंग्रेजी सुनने को मिलती थी। हमने अंग्रेजी को इतना

ओढ़ लिया है, जिसके कारण न केवल हिन्दी का अपितु समस्त भारतीय भाषाओं का अपेक्षित विकास नहीं हो पा रहा है। जो कम्पनी ग्रीक एवं अरबी में सॉफ्टवेयर बना रही हैं वे हिन्दी में सॉफ्टवेयर केवल इस कारण नहीं बनाती क्योंकि उसके प्रबंधकों को पता है कि भारतीय उच्च वर्ग अंग्रेजी मोह से ग्रसित है। इसके कारण भारतीय भाषाओं में, जो सॉफ्टवेयर स्वाभाविक ढंग से सहज बन जाते, वे नहीं बन रहे हैं। भारतीय भाषाओं की भाषिक प्रौद्योगिकी पिछड़ रही है। इस मानसिकता में जिस गति से बदलाव आएगा उसी गति से हमारी भारतीय भाषाओं की भाषिक प्रौद्योगिकी का भी विकास होगा। हम हिन्दी के संदर्भ में, इस बात को दोहराना चाहते हैं कि हिन्दी में काम करने वालों को अधिक से अधिक सामग्री इन्टरनेट पर डालनी चाहिए। लेखक ने मशीनी अनुवाद के संदर्भ में, यह निवेदित किया था कि मशीनी अनुवाद को सक्षम बनाने के लिए यह जरूरी है कि इन्टरनेट पर हिन्दी में प्रत्येक विषय की सामग्री उपलब्ध हो। यह हिन्दी की भाषिक प्रौद्योगिकी के विकास के व्यापक संदर्भ में भी उतनी ही सत्य है। जब प्रयोक्ता को हिन्दी में डाटा उपलब्ध होगा तो उसकी अंग्रेजी के प्रति निर्भरता में कमी आएगी तथा अंग्रेजी के प्रति हमारे उच्च वर्ग की अंध भक्ति में भी कमी आएगी।

वर्तमान की स्थिति भले ही उत्साहवर्धक न हो किन्तु हिन्दी प्रौद्योगिकी का भविष्य निराशाजनक नहीं है। हिन्दी की प्रगति एवं विकास को अब कोई ताकत रोक नहीं पाएगी। वर्तमान में, कम्प्यूटरों के कीबोर्ड रोमन वर्णों में हैं तथा उनका विकास अंग्रेजी भाषा को ध्यान में रखकर किया गया है। आम आदमी को इसी कारण कम्प्यूटर पर अंग्रेजी अथवा रोमन लिपि में काम करने में सुविधा का अनुभव होता है। निकट भविष्य में कम्प्यूटर संसार की लगभग तीस-चालीस भाषाओं के लिखित पाठ को भाषा में बोलकर सुना देगा तथा उन भाषाओं के प्रयोक्ता की भाषा को सुनकर उसे लिखित पाठ में बदल देगा। ऐसी स्थिति में, कम्प्यूटर पर काम करने में भाषा की कोई बाधा नहीं रह जाएगी। एक भाषा के पाठ को मशीनी अनुवाद से दूसरी भाषा में भी बदला जा सकेगा, उन भाषाओं में परस्पर वाक से पाठ तथा पाठ से वाक में अंतरण बहुत सहज हो जाएगा। भाषा विशेष के ज्ञान का रुतबा समाप्त हो जाएगा।

इस दिशा में प्रक्रिया को तेज बनाने के लिए यह उचित होगा कि भारतीय सॉफ्टवेयरों का निर्माण करने वाले उपक्रम तथा संगठन गूगल जैसी

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ मिलकर काम करें। भारतीय जनमानस में जागरूकता की रफ्तार को बढ़ाने की भी जरूरत हैं। कितने आम भारतीय हैं, जिन्हें सी–डेक जैसे संगठनों तथा उनके द्वारा निर्मित सॉफ्टवेयरों का ज्ञान है। कितने हिन्दी प्रेमी हैं, जो हिन्दी प्रौद्योगिकी के सॉफ्टवेयरों से अनजान हैं। उनको यह ज्ञान भी नहीं है कि यूनिकोड में हिन्दी में काम करना कितना आसान और सुगम है।

2

हिंदी का वैश्विक स्वरूप

हिंदी की वर्णमाला 'अ' यानी अनपढ़ से शुरू होती है और 'ज्ञ' यानी ज्ञानी बनाकर छोड़ती है। या हिंदी भाषा की सबसे बड़ी उपलब्धि है। हिंदी की वर्णमाला पूर्णतः वैज्ञानिक है और प्रत्येक ध्वनि के लिए अलग-अलग लिपि चिह्न इसकी विशिष्टता है। इसके अतिरिक्त इसके उच्चारण और लेखन में एकरूपता होने के कारण ही यह कालजयी हैं और भौगोलिक सीमाओं से परे पहुँच चुकी है। हिंदी की अद्वितीय आत्मसात एवं अंगीकार करने की प्रक्रिया ने ही इसे 310 करोड़ लोगों का चहेता बना दिया है। यूरोपीय भाषाओं की तुलना में उर्दू, फारसी, तुर्की, अरबी शब्द हमारे ज्यादा नजदीक है। अंग्रेजी के प्रचलन में आ चुके शब्दों को अपनाने में भी हिंदी आगे ही है।

बोलने और समझने वालों की संख्या की दृष्टि से हिंदी विश्व की दूसरी सबसे बड़ी भाषा है। परंतु सर्वेक्षण में हिंदी की अनेक बोलियों जैसे भोजपुरी, अवधी, हरियाणवी, छत्तीसगढ़ी, मैथिली, मगही इत्यादि को स्वतंत्र भाषा मानकर सूचीबद्ध करते हुए, विश्व में सबसे अधिक बोली जानी वाली भाषाओं की सूची में इसे चौथे स्थान पर रखा गया है। इस तरीके से यह तो सिद्ध हो ही जाता है कि वैश्विक स्तर पर हिंदी अपनी एक अलग पहचान बना ही चुकी है।

अंतर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिंदी का संवर्द्धन करने तथा उसे संयुक्त राष्ट्र संघ में एक अधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता दिलाने के अपने मूल उद्देश्य को लेकर 'विश्व हिंदी सचिवालय' अपने सीमित साधनों के साथ निरंतर

प्रयासरत है। न्यूयार्क में 13-15 जुलाई 2007 को आयोजित आठवाँ 'विश्व हिंदी सम्मेलन' इस दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण रहा कि विश्व भर के हिंदी प्रेमी संयुक्त राष्ट्र संघ के सभागार में एकत्र हुए और हिंदी का सामूहिक शंखनाद विश्व के कोने-कोने तक पहुँचाया। सम्मेलन को संबोधित करते हुए 'संयुक्त राष्ट्र संघ' के महासचिव 'श्री बान की मून' ने कहा, ''संसार के लोगों को एक-दूसरे के निकट लाने के लिए हिंदी समन्वय-सूत्र की तरह काम कर रही है। यह संसार की सभी संस्कृतियों के बीच एक सेतु है।'' निश्चित ही 'श्री बान की मून' को हिंदी के विश्वव्यापी उज्ज्वल भविष्य का आभास हो चुका है और उन्हें हिंदी के तेजी से बढ़ते कदमों की आहटें भी सुनाई दे रही हैं।

हिंदी को विश्वभाषा व राष्ट्रसंघ की भाषा बनाने में कठिनाइयाँ विज्ञान और टेक्नोलॉजी की शब्दावली की है। अभी तक हमने जो शब्द गढ़े हैं उनमें अस्पष्टता, अस्वाभाविकता और अंग्रेजी की छाप है। वे शब्दकोश में तो जगह पा सकते हैं पर बोलचाल में उनका प्रवेश मुश्किल है। इसके लिए हमें शुद्धतावादी दृष्टिकोण छोड़ना होगा। विज्ञान व तकनीकी शब्दावली की दुरुहता दूर होते ही हिंदी अपने आप सर्वमान्य हो जाएगी। जरूरत सिर्फ इतनी है कि हम इसे विज्ञान और वाणिज्य की भाषा बनाने की दिशा में सार्थक काम करें और सोचें कि हम हिंदी सीखने के इच्छुक देशों के लिए किस तरह लुभावनी, सरल और सुगम हिंदी बना सकते हैं।

इस पुनीत कार्य को सुचारु और संगठित रूप से पूरा करने का कार्यभार 'विश्व हिंदी सचिवालय' मॉरीशस ने भी लिया है। वास्तव में 'विश्व हिंदी सचिवालय' की स्थापना का विचार सबसे पहले मॉरीशस के राष्ट्रपिता और प्रथम प्रधानमंत्री 'सर शिवसागर गुलाम' ने भारत की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की उपस्थिति में भारत के नागपुर शहर में 10 जनवरी, 1975 को आयोजित प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन में रखा था। उन्होंने कहा था कि हिंदी भारत के लिए राष्ट्रभाषा है लकिन हमारे लिए यह अंतर्राष्ट्रीय भाषा है। आज मॉरीशस और भारत की साझेदारी में 'विश्व हिंदी सचिवालय' मॉरीशस में कार्यरत है। 'विश्व हिंदी सचिवालय' ने हिंदी को विश्वव्यापी बनाने का अपना अधिकारिक अभियान 11 फरवरी, 2008 से प्रारंभ किया था। संपूर्ण विश्व में चल रही हिंदी की गतिविधियों से हिंदी प्रेमियों को समय-समय पर अवगत कराने के लिए सचिवालय की ओर से त्रैमासिक 'विश्व हिंदी समाचार' का प्रकाशन मार्च 2008 से आरंभ किया गया था। इस पत्र के माध्यम से मॉरीशस, अमेरिका,

ब्रिटेन, कनाड़ा, नीदरलैंड, दक्षिण अफ्रिका, सिंगापुर, सिडनी, जमैका, उक्रेन, जापान, हंगरी, संयुक्त अरब अमीरात, कुवैत, ईराक व साऊदी आदि देशों में हिंदी के प्रचार-प्रसार से जुड़ी संस्थाओं द्वारा हिंदी भाषा और भारतीय संस्कृति के लिए किए जा रहे कार्यों की संक्षिप्त जानकारी विश्वव्यापी हिंदी प्रेमियों तक पहुँचाने का प्रयास जारी है।

विश्व के अनेक देशों के विश्वविद्यालयों में हिंदी शिक्षा दी जाती है, जिनमें मॉरीशस, फीजी, हॉलैंड, जर्मनी, अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, ऑस्ट्रेलिया, थाईलैंड, उजबेकिस्तान, तजाकिस्तान, क्रोएशिया, कनाडा, चीन, जापान, रोमानिया, ब्रल्गारिया, रूस, हंगरी, पोलैंड आदि देश प्रमुख है। अकेले अमेरिका के 80 से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी शिक्षण की सुविधा उपलब्ध है। जिन देशों में हिंदी शिक्षण को औपचारिक शिक्षा व्यवस्था में स्थान नहीं मिला, वहाँ भारतीय समुदाय की स्वंयसेवी संस्थाए हिंदी का अध्यापन करती है। इसके अतिरिक्त हिंदी को नामचीन बनाने के उद्देश्य से 10 जनवरी, 1975 को 'प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन' का शुभारंभ नागपुर, भारत में हुआ था, अतः, इस ऐतिहासिक तिथि को याद रखने के साथ ही पूरी दुनिया में हिंदीमय वातावरण बनाने के लिए प्रतिवर्ष 10 जनवरी का दिन 'विश्व हिंदी दिवस' के रूप में मनाने का निर्णय विदेश मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा सन् 2006 में लिया गया था। अब हर साल हिंदी प्रेमी 14 सितंबर को भारत में 'हिंदी दिवस' और 10 जनवरी को पूरे विश्व में 'विश्व हिंदी दिवस' मनाने लगे हैं।

आज हिंदी फिल्मों और धारावाहिकों ने भी हिंदी भाषा के विकास में अहम् भूमिका निभाई है और लगभग 120 देशों में भारतीय चैनलों का प्रसारण इस बात का पुख्ता सबूत है कि हिंदी की परिधि हर दिन विस्तृत होती जा रही है। आश्चर्य नहीं होगा जब 'योग' की भांति हिंदी भी एक दिन अंतर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में अपना परचम लहराएगी।

3

हिन्दी व्याकरण

हिंदी व्याकरण, हिंदी भाषा को शुद्ध रूप में लिखने और बोलने संबंधी नियमों का बोध कराने वाला शास्त्र हैं। यह हिंदी भाषा के अध्ययन का महत्त्वपूर्ण हिस्सा हैं। इसमें हिंदी के सभी स्वरूपों का चार खंडों के अंतर्गत अध्ययन किया जाता है, यथा– वर्ण विचार के अंतर्गत ध्वनि और वर्ण तथा शब्द विचार के अंतर्गत शब्द के विविध पक्षों संबंधी नियमों और वाक्य विचार के अंतर्गत वाक्य संबंधी विभिन्न स्थितियों एवं छंद विचार में साहित्यिक रचनाओं के शिल्पगत पक्षों पर विचार किया गया है।

वर्ण विचार

वर्ण विचार हिंदी व्याकरण का पहला खंड है, जिसमें भाषा की मूल इकाई ध्वनि तथा वर्ण पर विचार किया जाता है। वर्ण विचार तीन प्रकार के होते हैं। इसके अंतर्गत हिंदी के मूल अक्षरों की परिभाषा, भेद–उपभेद, उच्चारण, संयोग, वर्णमाला इत्यादि संबंधी नियमों का वर्णन किया जाता है।

वर्ण

हिन्दी भाषा की लिपि देवनागरी है। देवनागरी वर्णमाला में कुल 52 वर्ण हैं, जिनमें से 11 स्वर, 33 व्यंजन, एक अनुस्वार (अं) और एक विसर्ग (अः) सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त हिंदी वर्णमाला में दो द्विगुण व्यंजन (ड़ और ढ़) तथा चार संयुक्त व्यंजन (क्ष, त्र, ज्ञ, श्र) होते हैं।

स्वर

हिन्दी भाषा में कुल ग्यारह स्वर हैं। ये ग्यारह स्वर इस प्रकार हैं- अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ।

स्वर के दो भेद है–

1–मूल स्वर ं–लघु–अ, इ, उ इ–ह्रस्व–ऋ

2–संधि स्वर

ं–दीर्घ स्वर –अ+अ=आ, इ+इ=ई, उ+उ=ऊ

इ–संयुक्त स्वर–अ+इ=ए, अ+ए=ऐ, अ+उ=ओ, अ+ओ=औ

'अं' और 'अः' को स्वर में नहीं गिना जाता है। इन्हें अयोगवाह ध्वनियाँ कहते हैं। 'ॅ' आगत अंग्रेजी स्वर

व्यंजन

व्यंजन को पांच वर्गों में बांट दिया है–

'क' वर्ग–क, ख, ग, घ, ड़ (कण्ठ से बोले जाने वाले)

'च' वर्ग–च, छ, ज, झ, ञ (तालू से बोले जाने वाले)

'ट' वर्ग–ट, ठ, ड, ढ, ण (मूर्धा से बोले जाने वाले)

'त' वर्ग–त, थ, द, ध, न (दंत्त से बोले जाने वाले)

'प' वर्ग–प, फ, ब, भ, म (ओष्ठ से बोले जाने वाले)

शब्द विचार

शब्द विचार हिंदी व्याकरण का दूसरा खंड है, जिसके अंतर्गत शब्द की परिभाषा, भेद–उपभेद, संधि, विच्छेद, रूपांतरण, निर्माण आदि से संबंधित नियमों पर विचार किया जाता है। शब्द की परिभाषा- एक या अधिक वर्णों से बनी हुई स्वतंत्र सार्थक ध्वनि शब्द कहलाता है। जैसे- एक वर्ण से निर्मित शब्द–न (नहीं) व (और) अनेक वर्णों से निर्मित शब्द–कुत्ता, शेर, कमल, नयन, प्रासाद, सर्वव्यापी, परमात्मा।

शब्द–भेद

व्युत्पत्ति (बनावट) के आधार पर शब्द–भेद-

व्युत्पत्ति (बनावट) के आधार पर शब्द के निम्नलिखित तीन भेद हैं-

1. रूढ़
2. यौगिक
3. योगरूढ़।

1. रूढ़–जो शब्द किन्हीं अन्य शब्दों के योग से न बने हों और किसी विशेष अर्थ को प्रकट करते हों तथा जिनके टुकड़ों का कोई अर्थ नहीं होता, वे रूढ़ कहलाते हैं। जैसे–कल, पर। इनमें क, ल, प, र का टुकड़े करने पर कुछ अर्थ नहीं हैं, अत: यह निरर्थक हैं।

2. यौगिक–जो शब्द कई सार्थक शब्दों के मेल से बने हों, वे यौगिक कहलाते हैं। जैसे–देवालय=देव+आलय, राजपुरुष=राज+पुरुष, हिमालय=हिम+आलय, देवदूत=देव+दूत आदि। ये सभी शब्द दो सार्थक शब्दों के मेल से बने हैं।

3. योगरूढ़–वे शब्द, जो यौगिक तो हैं, किन्तु सामान्य अर्थ को न प्रकट कर किसी विशेष अर्थ को प्रकट करते हैं, योगरूढ़ कहलाते हैं, जैसे–पंकज, दशानन आदि। पंकज=पंक्ज (कीचड़ में उत्पन्न होने वाला) सामान्य अर्थ में प्रचलित न होकर कमल के अर्थ में रूढ़ हो गया है, अत: पंकज शब्द योगरूढ़ है। इसी प्रकार दश (दस) आनन (मुख) वाला रावण के अर्थ में प्रसिद्ध है।

उत्पत्ति के आधार पर शब्द–भेद–

उत्पत्ति के आधार पर शब्द के निम्नलिखित चार भेद हैं–

1. तत्सम– जो शब्द संस्कृत भाषा से हिन्दी में बिना किसी परिवर्तन के ले लिए गए हैं वे तत्सम कहलाते हैं, जैसे–अग्नि, क्षेत्र, वायु, रात्रि, सूर्य आदि।

2. तद्‌भव– जो शब्द रूप बदलने के बाद संस्कृत से हिन्दी में आए हैं वे तद्‌भव कहलाते हैं, जैसे–आग (अग्नि), खेत(क्षेत्र), रात (रात्रि), सूरज (सूर्य) आदि।

3. देशज– जो शब्द क्षेत्रीय प्रभाव के कारण परिस्थिति व आवश्यकतानुसार बनकर प्रचलित हो गए हैं वे देशज कहलाते हैं, जैसे–पगड़ी, गाड़ी, थैला, पेट, खटखटाना आदि।

4. विदेशी या विदेशज– विदेशी जातियों के संपर्क से उनकी भाषा के बहुत से शब्द हिन्दी में प्रयुक्त होने लगे हैं। ऐसे शब्द विदेशी अथवा विदेशज कहलाते हैं। जैसे–स्कूल, अनार, आम, कैंची, अचार, पुलिस, टेलीफोन, रिक्शा आदि। ऐसे कुछ विदेशी शब्दों की सूची नीचे दी जा रही है।

अंग्रेजी– कॉलेज, पैंसिल, रेडियो, टेलीविजन, डॉक्टर, लैटरबॉक्स, पैन, टिकट, मशीन, सिगरेट, साइकिल, बोतल आदि।

फारसी- अनार, चश्मा, जमींदार, दुकान, दरबार, नमक, नमूना, बीमार, बरफ, रूमाल, आदमी, चुगलखोर, गंदगी, चापलूसी आदि।

अरबी- औलाद, अमीर, कत्ल, कलम, कानून, खत, फकीर, रिश्वत, औरत, कैदी, मालिक, गरीब आदि।

तुर्की- कैंची, चाकू, तोप, बारूद, लाश, दारोगा, बहादुर आदि।

पुर्तगाली- अचार, आलपीन, कारतूस, गमला, चाबी, तिजोरी, तौलिया, फीता, साबुन, तंबाकू, कॉफी, कमीज आदि।

फ्रांसीसी- पुलिस, कार्टून, इंजीनियर, कर्फ्यू, बिगुल आदि।

चीनी- तूफान, लीची, चाय, पटाखा आदि।

यूनानी- टेलीफोन, टेलीग्राफ, ऐटम, डेल्टा आदि।

जापानी- रिक्शा आदि।

प्रयोग के आधार पर शब्द-भेद

प्रयोग के आधार पर शब्द के निम्नलिखित आठ भेद है-

1. संज्ञा
2. सर्वनाम
3. विशेषण
4. क्रिया
5. क्रिया-विशेषण
6. संबंधबोधक
7. समुच्चयबोधक
8. विस्मयादिबोधक

इन उपर्युक्त आठ प्रकार के शब्दों को भी विकार की दृष्टि से दो भागों में बाँटा जा सकता है-

1. विकारी 2. अविकारी

1. विकारी शब्द-

जिन शब्दों का रूप-परिवर्तन होता रहता है वे विकारी शब्द कहलाते हैं, जैसे-कुत्ता, कुत्ते, कुत्तों, मैं मुझे, हमें अच्छा, अच्छे खाता है, खाती है, खाते हैं। इनमें संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया विकारी शब्द हैं।

2. अविकारी शब्द-

जिन शब्दों के रूप में कभी कोई परिवर्तन नहीं होता है वे अविकारी शब्द कहलाते हैं, जैसे-यहाँ, किन्तु, नित्य, और, हे अरे आदि। इनमें क्रिया-विशेषण, संबंधबोधक, समुच्चयबोधक और विस्मयादिबोधक आदि हैं।

अर्थ की दृष्टि से शब्द-भेद

अर्थ की दृष्टि से शब्द के दो भेद हैं-

1. सार्थक
2. निरर्थक

1. सार्थक शब्द–जिन शब्दों का कुछ-न-कुछ अर्थ हो वे शब्द सार्थक शब्द कहलाते हैं, जैसे-रोटी, पानी, ममता, डंडा आदि।

2. निरर्थक शब्द–जिन शब्दों का कोई अर्थ नहीं होता है वे शब्द निरर्थक कहलाते हैं, जैसे-रोटी-वोटी, पानी-वानी, डंडा-वंडा इनमें वोटी, वानी, वंडा आदि निरर्थक शब्द हैं।

विशेष- निरर्थक शब्दों पर व्याकरण में कोई विचार नहीं किया जाता है।

पद-विचार सार्थक वर्ण-समूह शब्द कहलाता है, पर जब इसका प्रयोग वाक्य में होता है तो वह स्वतंत्र नहीं रहता बल्कि व्याकरण के नियमों में बँध जाता है और प्रायः इसका रूप भी बदल जाता है। जब कोई शब्द वाक्य में प्रयुक्त होता है तो उसे शब्द न कहकर पद कहा जाता है।

हिन्दी में पद पाँच प्रकार के होते हैं–

1. संज्ञा
2. सर्वनाम
3. विशेषण
4. क्रिया
5. अव्यय

1. संज्ञा–किसी व्यक्ति, स्थान, वस्तु आदि तथा नाम के गुण, धर्म, स्वभाव का बोध कराने वाले शब्द संज्ञा कहलाते हैं, जैसे-श्याम, आम, मिठास, हाथी आदि।

संज्ञा के प्रकार

संज्ञा के तीन भेद हैं–

1. व्यक्तिवाचक संज्ञा।
2. जातिवाचक संज्ञा।
3. भाववाचक संज्ञा।

1. व्यक्तिवाचक संज्ञा–जिस संज्ञा शब्द से किसी विशेष, व्यक्ति, प्राणी, वस्तु अथवा स्थान का बोध हो उसे व्यक्तिवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे–जयप्रकाश नारायण, श्रीकृष्ण, रामायण, ताजमहल, कुतुबमीनार, लालकिला हिमालय आदि।

2. जातिवाचक संज्ञा–जिस संज्ञा शब्द से उसकी संपूर्ण जाति का बोध हो उसे जातिवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे–मनुष्य, नदी, नगर, पर्वत, पशु, पक्षी, लड़का, कुत्ता, गाय, घोड़ा, भैंस, बकरी, नारी, गाँव आदि।

3. भाववाचक संज्ञा–जिस संज्ञा शब्द से पदार्थों की अवस्था, गुण–दोष, धर्म आदि का बोध हो उसे भाववाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे–बुढ़ापा, मिठास, बचपन, मोटापा, चढ़ाई, थकावट आदि।

विशेष– कुछ विद्वान अंग्रेजी व्याकरण के प्रभाव के कारण संज्ञा शब्द के दो भेद और बतलाते हैं–

1. समुदायवाचक संज्ञा।
2. द्रव्यवाचक संज्ञा।

1. समुदायवाचक संज्ञा–जिन संज्ञा शब्दों से व्यक्तियों, वस्तुओं आदि के समूह का बोध हो उन्हें समुदायवाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे–सभा, कक्षा, सेना, भीड़, पुस्तकालय, दल आदि।

2. द्रव्यवाचक संज्ञा–जिन संज्ञा–शब्दों से किसी धातु, द्रव्य आदि पदार्थों का बोध हो उन्हें द्रव्यवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे–घी, तेल, सोना, चाँदी, पीतल, चावल, गेहूँ, कोयला, लोहा आदि। इस प्रकार संज्ञा के पाँच भेद हो गए, किन्तु अनेक विद्वान समुदायवाचक और द्रव्यवाचक संज्ञाओं को जातिवाचक संज्ञा के अंतर्गत ही मानते हैं, और यही उचित भी प्रतीत होता है।

भाववाचक संज्ञा -

भाववाचक संज्ञाएँ चार प्रकार के शब्दों से बनती हैं। जैसे–

1. जातिवाचक संज्ञाओं से–

दास–दासता

पंडित–पांडित्य
बंधु–बंधुत्व
क्षत्रिय–क्षत्रियत्व
पुरुष–पुरुषत्व
प्रभु–प्रभुता
पशु–पशुता, पशुत्व
ब्राह्मण–ब्राह्मणत्व
मित्र–मित्रता
बालक–बालकपन
बच्चा–बचपन
नारी–नारीत्व

2. सर्वनाम से–

अपना–अपनापन, अपनत्व
निज–निजत्व, निजता
पराया–परायापन
स्व–स्वत्व
सर्व–सर्वस्व
अहं–अहंकार
मम–ममत्व, ममता

3. विशेषण से–

मीठा–मिठास
चतुर–चातुर्य, चतुराई
मधुर–माधुर्य
सुंदर–सौंदर्य, सुंदरता
निर्बल–निर्बलता
सफेद–सफेदी
हरा–हरियाली
सफल–सफलता
प्रवीण–प्रवीणता

मैला–मैल
निपुण–निपुणता
खट्टा–खटास

4. क्रिया से-

खेलना–खेल
थकना–थकावट
लिखना–लेख, लिखाई
हँसना–हँसी
लेना–देना
लेन–देन
पढ़ना–पढ़ाई
मिलना–मेल
चढ़ना–चढ़ाई
मुसकाना–मुसकान
कमाना–कमाई
उतरना–उतराई
उड़ना–उड़ान
रहना–सहना
रहन–सहन
देखना–भालना
देख–भाल

शब्द

शब्द वर्णों या अक्षरों के सार्थक समूह को कहते हैं।

उदाहरण के लिए क, म तथा ल के मेल से 'कमल' बनता है, जो एक खास किस्म के फूल का बोध कराता है, अतः 'कमल' एक शब्द है

कमल की ही तरह 'लकम' भी इन्हीं तीन अक्षरों का समूह है, किंतु यह किसी अर्थ का बोध नहीं कराता है। इसलिए यह शब्द नहीं है।

व्याकरण के अनुसार शब्द दो प्रकार के होते हैं- विकारी और अविकारी या अव्यय। विकारी शब्दों को चार भागों में बाँटा गया है- संज्ञा, सर्वनाम,

विशेषण और क्रिया। अविकारी शब्द या अव्यय भी चार प्रकार के होते हैं– क्रिया विशेषण, संबन्ध बोधक, संयोजक और विस्मयादि बोधक इस प्रकार सब मिलाकर निम्नलिखित 8 प्रकार के शब्द–भेद होते हैं–

संज्ञा

किसी भी स्थान, व्यक्ति, वस्तु आदि का नाम बताने वाले शब्द को संज्ञा कहते हैं। उदाहरण -

राम, भारत, हिमालय, गंगा, मेज, कुर्सी, बिस्तर, चादर, शेर, भालू, साँप, बिच्छू आदि

संज्ञा के भेद-

संज्ञा के कुल 5 भेद बताये गए हैं–

व्यक्तिवाचक– राम, भारत, सूर्य आदि।

जातिवाचक– बकरी, पहाड़, कंप्यूटर आदि।

समूह वाचक– कक्षा, बारात, भीड़, झुंड आदि।

द्रव्यवाचक– पानी, लोहा, मिट्टी, खाद या उर्वरक आदि।

भाववाचक–ममता, बुढापा आदि।

सर्वनाम

संज्ञा के बदले में आने वाले शब्द को सर्वनाम कहते हैं। उदाहरण -

मैं, तुम, आप, वह, वे आदि।

संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होने वाले शब्द को सर्वनाम कहते है। संज्ञा की पुनरुक्ति न करने के लिए सर्वनाम का प्रयोग किया जाता है। जैसे - मैं, तू, तुम, आप, वह, वे आदि।

सर्वनाम सार्थक शब्दों के आठ भेदों में एक भेद है।

व्याकरण में सर्वनाम एक विकारी शब्द है।

सर्वनाम के भेद

सर्वनाम के छह प्रकार के भेद हैं–

- पुरुषवाचक (व्यक्तिवाचक) सर्वनाम।

- निश्चयवाचक सर्वनाम।
- अनिश्चयवाचक सर्वनाम।
- संबन्धवाचक सर्वनाम।
- प्रश्नवाचक सर्वनाम।
- निजवाचक सर्वनाम।

पुरुषवाचक सर्वनाम

जिस सर्वनाम का प्रयोग वक्ता या लेखक द्वारा स्वयं अपने लिए अथवा किसी अन्य के लिए किया जाता है, वह 'पुरुषवाचक (व्यक्तिवाचक) सर्वनाम' कहलाता है। पुरुषवाचक (व्यक्तिवाचक) सर्वनाम तीन प्रकार के होते हैं–

उत्तम पुरुषवाचक सर्वनाम– जिस सर्वनाम का प्रयोग बोलने वाला स्वयं के लिए करता है, उसे उत्तम पुरुषवाचक सर्वनाम कहा जाता है। जैसे – मैं, हम, मुझे, हमारा आदि।

मध्यम पुरुषवाचक सर्वनाम– जिस सर्वनाम का प्रयोग बोलने वाला श्रोता के लिए करे, उसे मध्यम पुरुषवाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे – तुम, तुझे, तुम्हारा आदि।

अन्य पुरुषवाचक सर्वनाम– जिस सर्वनाम का प्रयोग बोलने वाला श्रोता के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष के लिए करे, उसे अन्य पुरुषवाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे– वह, वे, उसने, यह, ये, इसने, आदि।

निश्चयवाचक सर्वनाम

जो (शब्द) सर्वनाम किसी व्यक्ति, वस्तु आदि की ओर निश्चयपूर्वक संकेत करें वे निश्चयवाचक सर्वनाम कहलाते हैं। जैसे– 'यह', 'वह', 'वे' सर्वनाम शब्द किसी विशेष व्यक्ति का निश्चयपूर्वक बोध करा रहे हैं, अतः ये निश्चयवाचक सर्वनाम हैं।

उदाहरण–
यह पुस्तक सोनी की है
ये पुस्तकें रानी की हैं।
वह सड़क पर कौन आ रहा है।
वे सड़क पर कौन आ रहे हैं।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम

जिन सर्वनाम शब्दों के द्वारा किसी निश्चित व्यक्ति अथवा वस्तु का बोध न हो वे अनिश्चयवाचक सर्वनाम कहलाते हैं। जैसे– 'कोई' और 'कुछ' आदि सर्वनाम शब्द। इनसे किसी विशेष व्यक्ति अथवा वस्तु का निश्चय नहीं हो रहा है, अतः ऐसे शब्द अनिश्चयवाचक सर्वनाम कहलाते हैं।

उदाहरण–

द्वार पर कोई खड़ा है।

कुछ पत्र देख लिए गए हैं और कुछ देखने हैं।

संबन्धवाचक सर्वनाम

परस्पर सबन्ध बतलाने के लिए जिन सर्वनामों का प्रयोग होता है उन्हें संबन्धवाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे– 'जो', 'वह', 'जिसकी', 'उसकी', 'जैसा', 'वैसा' आदि।

उदाहरण–

जो सोएगा, सो खोएगा, जो जागेगा, सो पावेगा।

जैसी करनी, तैसी पार उतरनी।

प्रश्नवाचक सर्वनाम

जो सर्वनाम संज्ञा शब्दों के स्थान पर भी आते हैं और वाक्य को प्रश्नवाचक भी बनाते हैं, वे प्रश्नवाचक सर्वनाम कहलाते हैं। जैसे– क्या, कौन आदि।

उदाहरण–

तुम्हारे घर कौन आया है?

दिल्ली से क्या मँगाना है?

निजवाचक सर्वनाम

जहाँ स्वयं के लिए 'आप', 'अपना' अथवा 'अपने', 'आप' शब्द का प्रयोग हो वहाँ निजवाचक सर्वनाम होता है। इनमें 'अपना' और 'आप' शब्द उत्तम, पुरुष मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष के (स्वयं का) अपने आप का ज्ञान करा रहे शब्द हें जिन्हें निजवाचक सर्वनाम कहते हैं।

विशेष-

जहाँ 'आप' शब्द का प्रयोग श्रोता के लिए हो वहाँ यह आदर-सूचक मध्यम पुरुष होता है और जहाँ 'आप' शब्द का प्रयोग अपने लिए हो वहाँ निजवाचक होता है।

उदाहरण-

राम अपने दादा को समझाता है।

श्यामा आप ही दिल्ली चली गई।

राधा अपनी सहेली के घर गई है।

सीता ने अपना मकान बेच दिया है।

सर्वनाम शब्दों के विशेष प्रयोग

आप, वे, ये, हम, तुम शब्द बहुवचन के रूप में हैं, किन्तु आदर प्रकट करने के लिए इनका प्रयोग एक व्यक्ति के लिए भी किया जाता है।

'आप' शब्द स्वयं के अर्थ में भी प्रयुक्त हो जाता है। जैसे- मैं, यह, का

विशेषण

संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताने वाले शब्द को विशेषण कहते हैं। उदाहरण -

'हिमालय एक विशाल पर्वत है।' यहाँ 'विशाल' शब्द 'हिमालय' की विशेषता बताता है इसलिए वह विशेषण है।

विशेषण के भेद

(1) संख्यावाचक विशेषण

दस लड्डू चाहिए।

(2) परिमाणवाचक विशेषण

एक किलो चीनी दीजिए।

(3) गुणवाचक विशेषण

हिमालय विशाल पर्वत है

(4) सार्वनामिक विशेषण

कमला मेरी बहन है।

क्रिया

कार्य का बोध कराने वाले शब्द को क्रिया कहते हैं। उदाहरण –

आना, जाना, नाचना, खाना, घूमना, सोचना, देना, लेना, समझना, करना, करना, बजाना, झपटना, पढना, उठाना, सुनाना, लगाना, दिखाना, पीना, होना, धोना, जागना, बतियाना, फटकारा, हथियाने, लगाना, पढ़ना, लिखना, रोना, हंसना, गाना आदि।

क्रियाएं दो प्रकार की होतीं हैं–

- सकर्मक क्रिया,
- अकर्मक क्रिया।

सकर्मक क्रिया– जिस क्रिया में कोई कर्म (ऑब्जेक्ट) होता है उसे सकर्मक क्रिया कहते हैं। उदाहरण – खाना, पीना, लिखना आदि।

बन्दर केला खाता है। इस वाक्य में 'क्या' का उत्तर 'केला' है।

अकर्मक क्रिया– इसमें कोई कर्म नहीं होता। उदाहरण – हंसना, रोना आदि। बच्चा रोता है। इस वाक्य में 'क्या' का उत्तर उपलब्ध नहीं है।

क्रिया का लिंग एवं काल–

क्रिया का लिंग कर्ता के लिंग के अनुसार होता है। उदाहरण – रोना–लड़का रोता है। लड़की रोती है। लड़का रोता था। लड़की रोती थी। लड़का रोएगा। लड़की रोएगी।

मुख्य क्रिया के साथ आकर काम के होने या किए जाने का बोध कराने वाली क्रियाएं सहायक क्रियाएं कहलाती हैं। जैसे – है, था, गा, होंगे आदि शब्द सहायक क्रियाएँ हैं।

सहायक क्रिया के प्रयोग से वाक्य का अर्थ और अधिक स्पष्ट हो जाता है। इससे वाक्य के काल का तथा कार्य के जारी होने, पूर्ण हो चुकने अथवा आरंभ न होने कि स्थिति का भी पता चलता है। उदाहरण – कुत्ता भौंक रहा है। (वर्तमान काल जारी)। कुत्ता भौंक चुका होगा। (भविष्य काल पूर्ण)।

क्रिया विशेषण

किसी भी क्रिया की विशेषता बताने वाले शब्द को क्रिया विशेषण कहते हैं। उदाहरण –

'मोहन मुरली की अपेक्षा कम पढ़ता है।' यहाँ 'कम' शब्द 'पढ़ने' (क्रिया) की विशेषता बताता है इसलिए वह क्रिया विशेषण है।

'मोहन बहुत तेज चलता है।' यहाँ 'बहुत' शब्द 'चलना' (क्रिया) की विशेषता बताता है इसलिए यह क्रिया विशेषण है।

'मोहन मुरली की अपेक्षा बहुत कम पढ़ता है।' यहाँ 'बहुत' शब्द 'कम' (क्रिया विशेषण) की विशेषता बताता है इसलिए वह क्रिया विशेषण है।

क्रिया विशेषण के भेद–

1. रीतिवाचक क्रिया विशेषण–मोहन ने अचानक कहा।
2. कालवाचक क्रिया विशेषण – मोहन ने कल कहा था।
3. स्थानवाचक क्रिया विशेषण–मोहन यहाँ आया था।
4. परिमाणवाचक क्रिया विशेषण–मोहन कम बोलता है।

समुच्चय बोधक

दो शब्दों या वाक्यों को जोड़ने वाले संयोजक शब्द को समुच्चय बोधक कहते हैं। उदाहरण -

'मोहन और सोहन एक ही शाला में पढ़ते हैं।' यहाँ 'और' शब्द 'मोहन' तथा 'सोहन' को आपस में जोड़ता है इसलिए यह संयोजक है।

'मोहन या सोहन में से कोई एक ही कक्षा कप्तान बनेगा।' यहाँ 'या' शब्द 'मोहन' तथा 'सोहन' को आपस में जोड़ता है इसलिए यह संयोजक है।

विस्मयादि बोधक

विस्मय प्रकट करने वाले शब्द को विस्मायादि बोधक कहते हैं। उदाहरण–

अरे! मैं तो भूल ही गया था कि आज मेरा जन्म दिन है। यहाँ 'अरे' शब्द से विस्मय का बोध होता है, अतः यह विस्मयादि बोधक है।

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	मैं	हम
मध्यम पुरुष	तुम	तुम लोग/तुम सब
अन्य पुरुष	यह	ये
वह	वे/वे लोग	
आप	आप लोग/आप सब	

हिन्दी में तीन पुरुष होते हैं–

उत्तम पुरुष– मैं, हम

मध्यम पुरुष – तुम, आप

अन्य पुरुष– वह, राम आदि

उत्तम पुरुष में मैं और हम शब्द का प्रयोग होता है, जिसमें हम का प्रयोग एकवचन और बहुवचन दोनों के रूप में होता है। इस प्रकार हम उत्तम पुरुष एकवचन भी है और बहुवचन भी है।

मिसाल के तौर पर यदि ऐसा कहा जाए कि 'हम सब भारतवासी हैंष, तो यहाँ हम बहुवचन है और अगर ऐसा लिखा जाए कि 'हम विद्युत के कार्य में निपुण हैं', तो यहाँ हम एकवचन के रूप में भी है और बहुवचन के रूप में भी है। हमको सिर्फ तुमसे प्यार है – इस वाक्य में देखें तो, 'हम' एकवचन के रूप में प्रयुक्त हुआ है।

वक्ता अपने आपको मान देने के लिए भी एकवचन के रूप में हम का प्रयोग करते हैं। लेखक भी कई बार अपने बारे में कहने के लिए हम शब्द का प्रयोग एकवचन के रूप में अपने लेख में करते हैं। इस प्रकार हम एक एकवचन के रूप में मानवाचक सर्वनाम भी है।

वचन

हिन्दी में दो वचन होते हैं–

एकवचन– जैसे राम, मैं, काला, आदि एकवचन में हैं।

बहुवचन– हम लोग, वे लोग, सारे प्राणी, पेड़ों आदि बहुवचन में हैं।

लिंग

हिन्दी में सिर्फ दो ही लिंग होते हैं– स्त्रीलिंग और पुल्लिंग। कोई वस्तु या जानवर या वनस्पति या भाववाचक संज्ञा स्त्रीलिंग है या पुल्लिंग, इसका ज्ञान अभ्यास से होता है। कभी-कभी संज्ञा के अन्त-स्वर से भी इसका पता चल जाता है।

पुल्लिंग– पुरुष जाति के लिए प्रयुक्त शब्द पुल्लिंग में कहे जाते हैं। जैसे – अजय, बैल, जाता है आदि

स्त्रीलिंग– स्त्री जाति के बोधक शब्द जैसे– निर्मला, चींटी, पहाड़ी, खेलती है, काली बकरी दूध देती है आदि।

कारक

8 कारक होते हैं।

कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, संबन्ध, अधिकरण, संबोधन।

किसी भी वाक्य के सभी शब्दों को इन्हीं 8 कारकों में वर्गीकृत किया जा सकता है। उदाहरण- राम ने अमरूद खाया। यहाँ 'राम' कर्ता है, 'खाना' कर्म है।

दो वस्तुओं के मध्य संबन्ध बताने वाले शब्द को संबन्धकारक कहते हैं। उदाहरण –

'यह मोहन की पुस्तक है।' यहाँ 'की' शब्द 'मोहन' और 'पुस्तक' में संबन्ध बताता है इसलिए यह संबन्धकारक है।

उपसर्ग

वे शब्द जो किसी दूसरे शब्द के आरम्भ में लगाये जाते हैं। इनके लगाने से शब्दों के अर्थ परिवर्तन या विशिष्टता आ सकती है। प्र+ मोद = प्रमोद, सु +शील = सुशील

उपसर्ग प्रकृति से परतंत्र होते हैं। उपसर्ग चार प्रकार के होते हैं –

- संस्कृत से आए हुए उपसर्ग,
- कुछ अव्यय जो उपसर्गों की तरह प्रयुक्त होते हैं,
- हिन्दी के अपने उपसर्ग (तद्‌भव),
- विदेशी भाषा से आए हुए उपसर्ग।

प्रत्यय

वे शब्द जो किसी शब्द के अन्त में जोड़े जाते हैं, उन्हें प्रत्यय (प्रति+ अय = बाद में आने वाला) कहते हैं। जैसे- गाड़ी+ वान = गाड़ीवान, अपना+ पन = अपनापन।

संधि

दो शब्दों के पास-पास होने पर उनको जोड़ देने को सन्धि कहते हैं। जैसे- सूर्य+ उदय = सूर्योदय, अति + आवश्यक = अत्यावश्यक, संन्यासी = सम् + न्यासी, रवि + इन्द्र = रवीन्द्र

समास

दो शब्द आपस में मिलकर एक समस्त पद की रचना करते हैं। जैसे–राज+पुत्र = राजपुत्र, छोटे+बड़े = छोटे–बड़े आदि

समास छः होते हैं–

द्वन्द, द्विगु, तत्पुरुष, कर्मधारय, अव्ययीभाव और बहुब्रीहि

वाक्य विचार

वाक्य विचार हिंदी व्याकरण का तीसरा खंड है, जिसमें वाक्य की परिभाषा, भेद–उपभेद, संरचना आदि से संबंधित नियमों पर विचार किया जाता है।

वाक्य

शब्दों के समूह को जिसका पूरा–पूरा अर्थ निकलता है, वाक्य कहते हैं। वाक्य के दो अनिवार्य तत्त्व होते हैं–

(1) उद्देश्य और

(2) विधेय।

जिसके बारे में बात की जाय उसे उद्देश्य कहते हैं और जो बात की जाये उसे विधेय कहते हैं। उदाहरण के लिए मोहन प्रयाग में रहता है। इसमें उद्देश्य–मोहन है और विधेय है– प्रयाग में रहता है। वाक्य भेद दो प्रकार से किए जा सकते हँ–

1. अर्थ के आधार पर वाक्य भेद
2. रचना के आधार पर वाक्य भेद

अर्थ के आधार पर आठ प्रकार के वाक्य होते हैं–

1. विधान वाचक वाक्य, 2. निषेधवाचक वाक्य, 3. प्रश्नवाचक वाक्य, 4. विस्म्यादिवाचक वाक्य, 5. आज्ञावाचक वाक्य, 6. इच्छावाचक वाक्य, 7. संदेहवाचक वाक्य।

काल

वाक्य तीन काल में से किसी एक में हो सकते हैं–

1. वर्तमान काल, जैसे मैं खेलने जा रहा हूँ।
2. भूतकाल, जैसे 'जय हिन्द' का नारा नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने दिया था और

3. भविष्य काल, जैसे अगले मंगलवार को मैं नानी के घर जाऊँगा।
4. वर्तमान काल के तीन भेद होते हैं- सामान्य वर्तमान काल, संदिग्ध वर्तमान काल तथा अपूर्ण वर्तमान काल।
5. भूतकाल के भी छः भेद होते हैं–समान्य भूत, आसन्न भूत, पूर्ण भूत, अपूर्ण भूत, संदिग्ध भूत और हेतुमद भूत।
6. भविष्य काल के दो भेद होते हैं- सामान्य भविष्य काल और संभाव्य भविष्य काल।

पदबंध

पदबंध दो शब्दों का संयोजन हैं 'पद+ बंध। पदबंध जानने से पहले ये जानना जरूरी है कि पद या पद परिचय क्या है (पद– जिस शब्द का पूरा व्याकरण की परिचय देना होता है, जैसे शब्द का वचन क्या है , लिंग क्या है , क्रिया है या फिर क्रिया विशेषण , संज्ञा शब्द हैं या फिर सर्वनाम शब्द है आदि की पूरी जानकारी दे उसे पद कहते है।

छन्द विचार

छन्द विचार हिंदी व्याकरण का चौथा खंड है, जिसके अंतर्गत वाक्य के साहित्यिक रूप में प्रयुक्त होने से संबंधित विषयों वर विचार किया जाता है। इसमें छंद की परिभाषा, प्रकार आदि पर विचार किया जाता है।

हिन्दी भाषा का व्याकरण लिखने के प्रयास काफी पहले आरम्भ हो चुके थे। अद्यतन जानकारी के अनुसार हिन्दी व्याकरण का सबसे पुराना ग्रंथ बनारस के दामोदर पण्डित द्वारा रचित द्विभाषिक ग्रंथ उक्ति–व्यक्ति–प्रकरण सिद्ध होता है। यह बारहवीं शताब्दी का है। यह समय हिंदी का क्रमिक विकास इसी समय से प्रारंभ हुआ माना जाता है। इस ग्रंथ में हिन्दी की पुरानी कोशली या अवधी बोली बोलने वालों के लिए संस्कृत सिखाने वाला एक मैनुअल है, जिसमें पुरानी अवधी के व्याकरणिक रूपों के समानान्तर संस्कृत रूपों के साथ पुरानी कोशली एवं संस्कृत दोनों में उदाहरणात्मक वाक्य दिये गये हैं। 'कोशली' का लोक प्रचलित नाम वर्तमान में 'अवधी' या 'पूर्वीया हिन्दी' है। 1675ई. से कुछ पूर्व ब्रज भाषा के व्याकरण का एक ग्रंथ मिर्जा खघन इब्न फखरूद्दीन मुहम्मद द्वारा लिखा गया है। 16 पृष्ठों के तुहफतुल हिन्द नामक इस संक्षिप्त ग्रंथ में हिन्दी साहित्य के विविध विषयों का विवेचन है, जो क्रमशः इस प्रकार हैं - व्याकरण,

छन्द, तुक, अलंकार, शृंगार रस, संगीत, कामशास्त्र, सामुद्रिक शास्त्र और शब्दकोश। 1898 में एक डच विद्वान योन योस्वा केटलार द्वारा लिखे गए हिंदी व्याकरण के प्रमाण भी मिलते हैं। हिंदी विद्वान सुनीति कुमार चटर्जी के लेखों में इस ग्रंथ का उल्लेख मिलता है।

अठारहवीं शताब्दी के हिन्दी व्याकरण

केटलार व्याकरण के लैटिन अनुवाद के प्रकाशन के एक वर्ष बाद ही प्रख्यात मिशनरी बेंजामिन शुल्ट्स का ग्रामाटिका हिन्दोस्तानिका Grammtica Hindostanica (हिन्दुस्तानी व्याकरण) सन् 1744 में प्रकाशित हुआ। यह व्याकरण लैटिन भाषा में है, जिसका पाँच पंक्तियों का पूर्ण शीर्षक डॉ. ग्रियर्सन ने Linguistic Survey of India, Vol IX, Part I के पृ. 8 पर दिया है। शुल्ट्स को केटलार व्याकरण की जानकारी थी और अपनी भूमिका में इसका उल्लेख किया। हिन्दुस्तानी शब्द फारसीध्अरबी लिपि में रोमन लिप्यांतरण सहित दिये गये हैं। देवनागरी लिपि की भी व्याख्या है। मूर्धन्य अक्षरों की ध्वनि की उसने उपेक्षा की है और (लिप्यांतरण में) सभी महाप्राण अक्षरों की। पुरुषवाचक सर्वनामों के एकवचन और बहुवचन रूपों का उसे ज्ञान था, परन्तु सकर्मक क्रियाओं के भूतकाल में कर्ता में प्रयुक्त 'ने' विभक्ति के बारे में वह अनभिज्ञ था।

सन् 1771 में कापुचिन मिशनरी कासिआनो बेलिगाति द्वारा भाषा में लिखित 'Alphabetum Brammhanicum' रोम से प्रकाशित हुआ। इसमें नागरी के साथ-साथ भारत की अन्य प्रमुख लिपियों को चल टाइपों में मुद्रित किया गया है और इन पर विस्तृत विवेचना की गयी है। इसके भूमिका-लेखक Johannes Christophorus Amaditius (Amaduzzi) ने भारतीय भाषाओं के बारे में उस समय वर्तमान ज्ञान का सम्पूर्ण विवरण दिया है।

यह बहुत प्रसन्नता की बात है कि केटलार व्याकरण के लैटिन अनुवाद, शूल्ट्स व्याकरण एवं Alphabetum Brammhanicum के भूमिका सहित नागरी लिपि संबंधी अंश का हिन्दी अनुवाद अभी उपलब्ध है। 16 हिन्दी भाषा एवं लिपि के अध्ययन के लिए इन तीनों प्राचीनतम कृतियों का ऐतिहासिक महत्त्व है।

जार्ज हेडली (Hadley) का व्याकरण सन् 1772 में लंदन से प्रकाशित हुआ। इसके तरन्त बाद इससे बेहतर व्याकरण प्रकाशित हुए, जैसे - किसी अज्ञात लेखक का पोर्तुगीज भाषा में Gramatica Indostana रोम से 1778 में, जो

हेडली के व्याकरण की अपेक्षा बहुत विकसित था। कलकत्ते के फोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दुस्तानी विभाग के अध्यक्ष डॉ. जॉन बॉर्थविक गिलक्राइस्ट का 'A Grammar of the Hindoostanee Language' सन् 1796 में प्रकाशित हुआ। यह व्याकरण उनके 'A System of Hindoostanee Philology', खंड-1 का तीसरा भाग था।

सिन्धी का आदर्श व्याकरण और निराली कारक रचना

भाषा ! भावनाओं - विचारों को प्रकट करने का माध्यम होती है और जिस भाषा में ऐसे गुण अधिक हों, उसी को सबसे समर्थ और आदर्श (आईडियल) भाषा मानना चाहिए।

सिन्धी में भावनाओं और निराले गुणों को प्रकट करने वाले शब्दों में से एक शब्द है 'भवाइतो' -- जिसका रूप संस्कृत में 'भयप्रद', हिन्दी में 'भयानक' उर्दू में समानार्थी 'खौफनाक' और अंग्रेजी में ज्मततपइसम के लिंग और वचन के रूप नहीं बनते और न ही कारक रूप।

जबकि सिन्धी में 'भवाइतो' के चार -- भवाइतो (पुल्लिंग, एक वचन) -- भवाइता (पुल्लिंग, बहु वचन), भवाइती (स्त्रीलिंग, एक वचन) -- भवाइतियूं (स्त्रीलिंग, बहु वचन) और कर्ता कारक 'ने' के अर्थ वाले चार -- भवाइतो – 'भवाइते' (पुल्लिंग, एक वचन), भवाइता – 'भवाइतनि' (पुल्लिंग, बहुवचन), भवाइती – 'भवाइतीअ' (स्त्रीलिंग, एकवचन) ऐं भवाइतियूं – 'भवाइतुनि' (स्त्रीलिंग, बहुवचन), मिलाकर कुल आठ रूप बनते हैं।

संस्कृत में कर्ता कारक के रूप नहीं बनते, पर हिन्दी और उर्दू में कर्ता कारक 'ने' है, जो सिन्धी के 'न - नि' का रूप है -- जैसे कि -- हो -- हुन (वह – उस -- उसने), हू -- हुननि (वे – उन - उन्होंने)।

इस तरह सिन्धी के 'सुंहिंणो' ऐं 'मोहिणो' आदि शब्दों के भी आठ - आठ रूप बनते हैं। पर संस्कृत और हिन्दी के 'सोहन' और 'मोहन' - 'मोहक' तथा उर्दू के 'खूबसूरत' और 'दिलकश' के रूप नहीं बनते।

सिन्धी के ऐसे दूसरे भी कई गुण हैं, जिनको अभी तक प्रकट नहीं किया गया है।

इन रूपों से प्रमाणित हो जाता है कि सिन्धी में भावनाओं को प्रकट करने की सामर्थ्य, दूसरी भाषाओं से आठ गुनी अधिक है -- सिन्धी का व्याकरण एवं कारक रचना सभी भाषाओं से अधिक समर्थ और आदर्श भी है।

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम (1857) के पश्चात् उन्नीसवीं शताब्दी के हिन्दी व्याकरण

सिपाही विद्रोह के बाद शिक्षा विभाग की स्थापना होने पर पं. रामजसन की 'भाषा-तत्त्व-बोधिनी' प्रकाशित हुई, जिसमें कहीं-कहीं हिन्दी और संस्कृत की मिश्रित प्रणालियों का प्रयोग किया गया। इसके बाद पं. श्रीलाल का 'भाषा चंद्रोदय' प्रकाशित हुआ, जिसमें हिन्दी व्याकरण के कुछ अधिक नियम थे। फिर सन् 1869 ई. में बाबू नवीनचंद्र राय कृत 'नवीन-चंद्रोदय' निकला, जिसमें 'भाषा चंद्रोदय' के बारे में टिप्पणी भी थी। इसके पश्चात् मराठी और संस्कृत व्याकरण के आधार पर और बहुत कुछ अंग्रेजी ढंग पर पं. हरिगोपाल पाध्ये ने अपनी 'भाषा-तत्त्व-दीपिका' लिखी। लेखक के महाराष्ट्रीय होने के कारण इस पुस्तक में स्वभावतः मराठीपन पाया जाता है।

पादरी W- एथारिंगटन का प्रसिद्ध हिन्दी व्याकरण 'भाषा भास्कर' बनारस से 1873 में प्रकाशित हुआ, जिसकी सत्ता लगभग 50 वर्ष तक बनी रही। इसका सन् 1913 का संस्करण डेक्कन कॉलेज, पुणे में उपलब्ध है। पं. कामता प्रसाद गुरु ने अपने 'हिन्दी व्याकरण' की भूमिका में लिखा है – 'अधिकांश में दूषित होने पर भी इस पुस्तक के आधार और अनुकरण पर हिन्दी के कई छोटे-मोटे व्याकरण बने और बनते जाते हैं। यह पुस्तक अंग्रेजी ढंग पर लिखी गई है। हिन्दी में यह अंग्रेजी प्रणाली इतनी प्रिय हो गई है कि इसे छोड़ने का पूरा प्रयत्न आज तक नहीं किया गया। मराठी, गुजराती, बंगला आदि भाषाओं के व्याकरणों में भी बहुधा इसी प्रणाली का अनुकरण पाया जाता है।'

सन् 1875 में राजा शिवप्रसाद का हिन्दी व्याकरण निकला। पं. कामता प्रसाद गुरु लिखते हैं – 'इस पुस्तक में दो विशेषताएँ हैं। पहली विशेषता यह है कि पुस्तक अंग्रेजी ढंग की होने पर भी इसमें संस्कृत व्याकरण के सूत्रों का अनुकरण किया गया है, और दूसरी यह कि हिन्दी के व्याकरण के साथ-साथ नागरी अक्षरों में उर्दू का भी व्याकरण दिया गया है। इस समय हिन्दी और उर्दू के स्वरूप के विषय में वाद-विवाद उपस्थित हो गया था और राजा साहब दोनों बोलियों को एक बनाने के प्रयत्न में अगुआ थे, इसीलिए आपको ऐसा दोहरा व्याकरण बनाने की आवश्यकता हुई। इसी समय भारतेंदु हरिश्चंद्र जी ने बच्चों के लिए एक छोटा-सा हिन्दी व्याकरण लिखकर इस विषय की उपयोगिता और आवश्यकता सिद्ध कर दी।'

सन् 1876 में इलाहाबाद और कलकत्ते से S.H. केलॉग का 'A Grammar of the Hindi Language' प्रकाशित हुआ, जिसका परवर्द्धित तृतीय संस्करण 1938 में निकला। इसमें उच्च हिन्दी के साथ-साथ ब्रज एवं तुलसीदास कृत रामचरितमानस की पूर्वी हिन्दी एवं राजपुताना, कुमाउँ, अवध, रिवा, भोजपुर, मगध, संबंधी विस्तृत नोट भी हैं। तृतीय संस्करण का पुनर्मुद्रण कई प्रकाशकों ने किया है, जैसे एशियन एजुकेशनल सर्विसेज एवं मुंशीराम मनोहर लाल, दिल्ली।

फ्रेड्रिक पिंकॉट द्वारा लिखित 'The Hindi Manual' लन्दन से 1882 में प्रकाशित हुआ, जिसमें साहित्यिक और प्रान्तीय दोनों प्रकार के हिन्दी व्याकरण शामिल किये गये। इसका तीसरा संस्करण 1890 में निकला। M. शूल्ट्स का 'Grammatik der hinduistanischen Sprache' (हिन्दुस्तानी भाषा का व्याकरण) जर्मन भाषा में Leipzig से 1894 में प्रकाशित हुआ।

एडविन ग्रीब्ज लिखित 'A Grammar of Modern Hindi' बनारस से 1896 में प्रकाशित हुआ। इस लेखक ने केलॉग के हिन्दी व्याकरण को एक मानक कृति बताया है। परन्तु सामान्य लोगों की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए ग्रीब्ज ने अन्य व्याकरण रचा। इसका संशोधित संस्करण 1908 में प्रकाशित हुआ। सन् 1921 में इस लेखक ने पूर्णतः नये रूप से 'Hindi Grammar' नामक शीर्षक के अन्तर्गत हिन्दी व्याकरण लिखा, जिसमें ब्रज भाषा में कुछ नोट के सिवा हिन्दी के क्षेत्रीय अंतरों का कोई जिक्र नहीं किया गया। इसका पुनर्मुद्रण एशियन एजुकेशनल सर्विसेज ने 1983 में किया।

पाश्चात्य विद्वानों द्वारा लिखे गये हिन्दी व्याकरणों का थोड़ा विस्तृत विवरण डॉ. जाधव की थीसिस में पृ. 148-171 के अंतर्गत देखा जा सकता है।

बीसवीं शताब्दी के हिन्दी व्याकरण

सन् 1920 में पं. कामता प्रसाद गुरु द्वारा लिखित प्रथम बार एक प्रामाणिक एवं आदर्श 'हिन्दी व्याकरण' नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने प्रकाशित किया। इसका षष्ठ पुनर्मुद्रण सन् 1960 में हुआ। सन् 2001 में इसका 22वाँ संस्करण प्रकाशित हुआ। इस व्याकरण के लेखक ने अपनी भूमिका में लिखा है - 'हिन्दी व्याकरण की छोटी-मोटी कई पुस्तकें उपलब्ध होते हुए भी हिन्दी में, इस समय अपने विषय और ढंग की यही एक व्यापक और (संभवतः) मौलिक पुस्तक

है। इस व्याकरण में अन्यान्य विशेषताओं के साथ-साथ एक बड़ी विशेषता यह भी है कि नियमों के स्पष्टीकरण के लिए इसमें, जो उदाहरण दिये गये हैं वे अधिकतर हिन्दी के भिन्न-भिन्न कालों के प्रतिष्ठित एवं प्रामाणिक लेखकों के ग्रंथों से लिये गये हैं। इस विशेषता के कारण पुस्तक में यथासंभव, अंध-परंपरा अथवा कृत्रिमता का दोष नहीं आने पाया है।' इस व्याकरण में छन्द, अलंकार, कहावतों और मुहावरों को स्थान नहीं दिया गया है। लेखक का कहना है कि यद्यपि ये सब विषय भाषा ज्ञान की पूर्णता के लिए आवश्यक हैं, तो भी ये सब अपने-आप में स्वतंत्र विषय हैं और व्याकरण से इनका कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं है। किसी भी भाषा का 'सर्वांगपूर्ण' व्याकरण वही है, जिससे उस भाषा में शिष्ट रूपों और प्रयोगों का पूर्ण विवेचन किया जाय और उनमें यथासंभव स्थिरता लायी जाय। पं. कामता प्रसाद गुरु ने यह व्याकरण, अधिकांश में, अंग्रेजी व्याकरण के ढंग पर लिखा है। इस प्रणाली के अनुसरण का कारण बताते हुए वे लिखते हैं – 'इस प्रणाली के अनुसरण का मुख्य कारण यह है कि इसमें स्पष्टता और सरलता विशेष रूप से पायी जाती है और सूत्र तथा भाष्य दोनों ऐसे मिले रहते हैं कि एक ही लेखक पूरा व्याकरण विशद् रूप से लिख सकता है। हिन्दी भाषा के लिए वह दिन सचमुच बड़े गौरव का होगा जब इसका व्याकरण 'अष्टाध्यायी' और 'महाभाष्य' के मिश्रित रूप में लिखा जायेगा, पर वह दिन अभी बहुत दूर दिखायी देता है।'

हिन्दी के राष्ट्रभाषा हो जाने पर विद्वानों का ध्यान इसके स्वतंत्र अस्तित्त्व की खोज पर जाने लगा। पं. किशोरीदास वाजपेयी ने 'राष्ट्रभाषा का प्रथम व्याकरण' (1949) लिखकर हिन्दी व्याकरण की स्वतंत्र सत्ता पर अपने महत्त्वपूर्ण विचार व्यक्त किये हैं। उनके शब्दों में – 'कोई व्याकरण अंग्रेजी के आधार पर लिखा गया है और कोई संस्कृत के आधार पर। हिन्दी के आधार पर हिन्दी का व्याकरण बना ही नहीं। तब तो उलझन होगी ही।' उनका 'हिन्दी शब्दानुशासन' (1957) एक महत्त्वपूर्ण व्याकरण ग्रंथ है। इसका पंचम संस्करण संवत् 2055 वि. (सन् 1998 ई.) में प्रकाशित हुआ।

डॉ. वासुदेव नन्दन प्रसाद लिखित 'आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना' सन् 1959 में पटना से प्रकाशित हुआ, जिसका तेरहवाँ संस्करण 1977 में निकला। डॉ. प्रभाकर माचवे की इस व्याकरण ग्रंथ पर प्रतिक्रिया इस प्रकार है – 'हिन्दी में व्याकरण ग्रंथ, जो स्टैंडर्ड माने जायें, बहुत थोड़े हैं। उन पुस्तकों में डॉ. प्रसाद की रचना मैं सभी दृष्टियों से सर्वांगपूर्ण समझता हूँ। स्व. रामचन्द्र

वर्मा, स्व. कामता प्रसाद गुरु और आचार्य किशोरी दास वाजपेयी के बाद डॉ. प्रसाद का कार्य अत्यन्त मूल्यवान और उपयोगी हुआ है।' इस व्याकरण का 23वाँ संस्करण 1993 में निकला, जिसका द्वितीय पुनःमुद्रण सन् 2001 में हुआ।

विदेशी वैयाकरणों के द्वारा लिखित हिन्दी व्याकरणों में डॉ. जालमन दीमशित्स का रूसी भाषा में लिखा (हिन्दी भाषा का व्याकरण) मेरे मत में सर्वश्रेष्ठ है। इसका द्वितीय संस्करण (दो खण्डों में – 373 . 300 पृष्ठ) मास्को से सन् 1986 ई. में प्रकाशित हुआ। इसके प्रथम संस्करण का हिन्दी अनुवाद "हिन्दी व्याकरण" रादुगा प्रकाशन, मास्को से सन् 1983 ई. में प्रकाशित हुआ।

तुलनात्मक व्याकरण

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से एक ही परिवार की भारतीय भाषाओं के तुलनात्मक व्याकरण का युग शुरू हुआ जब राबर्ट काल्डवेल (1814–1891) की स्मारकीय कृति (Monumental work) 'Comparative Grammar of the Dravidian Languages' (द्रविड भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण) सन् 1856 में प्रकाशित हुई। इंग्लैंड निवासी जॉन बीम्स 1857 में इंडियन सिविल सर्विस में आये। भाषाओं के अध्ययन में ये बचपन से ही रुचि लेते थे। काल्डवेल की कृति देखकर इन्हें भारतीय आर्य भाषाओं पर वैसा ही काम करने की प्रेरणा मिली और लगभग 14 वर्षों तक इस विषय पर कार्य करते हुए उन्होंने अपना प्रसिद्ध ग्रंथ 'A Comparative Grammar of the Modern Aryan Languages of India' तीन भागों में (प्रथम भाग–1872 में, द्वितीय भाग–1878 तथा तृतीय भाग 1879 में) प्रकाशित किया। भारतीय आर्य भाषाओं के तुलनात्मक विकास पर यह पहला कार्य है। इस विषय पर अभी तक कोई दूसरा कार्य नहीं हुआ है। 26 एक हजार से अधिक पृष्ठों के इस विस्तृत ग्रंथ के प्रारंभ में भारतीय आर्य भाषाओं के उद्‌भव और विकास पर 121 पृष्ठों की एक लम्बी–सी भूमिका है तथा आगे हिन्दी, पंजाबी, सिंधी, गुजराती, मराठी, उड़िया तथा बंगला की ध्वनियों तथा उनके संज्ञा, सर्वनाम, संख्यावाचक विशेषण तथा क्रिया रूपों का संस्कृत से तुलनात्मक विकास दिखलाया गया है। मुंशीराम मनोहर लाल, दिल्ली ने इसका पुनर्मुद्रण किया है।

सैमुएल केलॉग (1839–1899) कृत 'A Grammar of the Hindi Language' का उल्लेख पहले किया जा चुका है। हिन्दी का यह प्रथम सुव्यवस्थित तथा विस्तृत व्याकरण है तथा आज भी कई दृष्टियों से सर्वोत्तम है।

27 इनमें हिन्दी के तत्कालीन परिनिष्ठित रूपों के साथ-साथ मारवाड़ी, मेवाड़ी, मेरवाड़ी, जयपुरी, हाड़ात, कुमाऊँनी, गढ़वाली, नेपाली, कन्नौजी, बैसवाड़ी, भोजपुरी, मगही और मैथिली आदि में भी रूप यथास्थान दिये गये हैं। वाक्य-रचना के विस्तृत प्रायोगिक नियमों के अतिरिक्त रूपों की व्युत्पत्ति तथा उनका विकास भी दिया गया है।

आगरा में एक जर्मन पादरी के घर जन्मे जर्मन विद्वान् रुडोल्फ हार्नले (1841-1918) का प्रसिद्ध ग्रंथ 'A Comparative Grammar of the Gaudian Languages' कलकत्ते से सन् 1880 में प्रकाशित हुआ। इसमें भोजपुरी का विस्तृत व्याकरण देने के साथ-साथ आधुनिक आर्य भाषाओं की काफी तुलनात्मक सामग्री दी गयी है। इसमें हिन्दी क्रिया रूपों में लिंग-परिवर्तन के नियम, विभिन्न रूपों का विकास, भाषायी मानचित्र तथा लिपियों में विकास का चित्र आदि भी हैं। एशियन एजुकेशनल सर्विसेज, दिल्ली ने इसका पुनर्मुद्रण सन् 1991 में किया है।

भाषा शास्त्रीय अध्ययन

बीसवीं शताब्दी में हिन्दी एवं उसकी बोलियों पर कई विद्वानों ने भाषा शास्त्रीय अध्ययन किया। डॉ. विश्वनाथ प्रसाद ने 'Phonetic and Phonological Study of Bhojpuri' पर शोध कार्य किया (पी.एच.डी. थीसिस, लन्दन विश्वविद्यालय, 1950 अप्रकाशित)। डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया का 'ब्रजभाषा और खड़ी बोली का तुलनात्मक अध्ययन' सन् 1962 में प्रकाशित हुआ। हरवंशलाल शर्मा ने इसकी प्रस्तावना, पृ. 1 में लिखा है - 'डॉ. कैलाश भाटिया द्वारा प्रस्तुत 'ब्रज भाषा और खड़ी बोली का तुलनात्मक अध्ययन' हिन्दी भाषा-विज्ञान के क्षेत्र में एक स्तुत्य तथा नवीन प्रयास है। ब्रज भाषा और खड़ी बोली का तुलनात्मक भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन इस रूप में अभी तक प्रस्तुत नहीं हुआ था।'

हिन्दी व्याकरण का काल विभाजन

डॉ. अनन्त चौधरी ने हिन्दी व्याकरण के संपूर्ण विकास की लगभग 300 वर्षों की अवधि को निम्नलिखित पाँच काल खण्डों में विभक्त किया है:–

- आरम्भ काल - सन् 1676 - 1855 ई.
- विकास काल - सन् 1855 - 1876 ई.
- उत्थान काल - सन् 1876 - 1920 ई.

- उत्कर्ष काल – सन् 1920 – 1947 ई.
- नवचेतना काल – सन् 1947 ई. से वर्तमान काल तक।

डॉ. बीणा गर्ग ने हिन्दी व्याकरण की विकास यात्र को तीन मुख्य कालों में वर्गीकृत किया है –

1. आदिकाल

(अ) – पूर्व आदिकाल – संक्रान्ति युग (सन् 1680 से पूर्व)

(आ) – उत्तर आदिकाल – पाश्चात्य वैयाकरण युग (सन् 1680 से 1855 ई. तक)

2. मध्यकाल

(इ) – पूर्व मध्यकाल – श्रीलाल युग (सन् 1680 से 1855 ई. तक)

(ई) – उत्तर मध्यकाल – केलॉग युग (सन् 1676 से 1920 ई. तक)

3. आधुनिक काल

(उ) – पूर्व आधुनिक काल – स्वतन्त्रता–पूर्व युग (सन् 1920 से 1947 ई. तक) – गुरु युग

(ऊ) – उत्तर आधुनिक काल – स्वातन्त्र्योत्तर युग (सन् 1947 से वर्तमान काल तक)

4

हिन्दी दिवस

हिन्दी दिवस प्रत्येक वर्ष 14 सितम्बर को मनाया जाता है। 14 सितम्बर 1949 को संविधान सभा ने एक मत से यह निर्णय लिया कि हिन्दी ही भारत की राजभाषा होगी। इसी महत्त्वपूर्ण निर्णय के महत्त्व को प्रतिपादित करने तथा हिन्दी को हर क्षेत्र में प्रसारित करने के लिये राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के अनुरोध पर वर्ष 1953 से पूरे भारत में 14 सितम्बर को प्रतिवर्ष हिन्दी-दिवस के रूप में मनाया जाता है। एक तथ्य यह भी है कि 14 सितम्बर 1949 को हिन्दी के पुरोधा व्यौहार राजेन्द्र सिंहा का 50-वां जन्मदिन था, जिन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए बहुत लंबा संघर्ष किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करवाने के लिए काका कालेलकर, मैथिलीशरण गुप्त, हजारी प्रसाद द्विवेदी, सेठ गोविन्ददास आदि साहित्यकारों को साथ लेकर व्यौहार राजेन्द्र सिंह ने अथक प्रयास किए।

इतिहास

वर्ष 1918 में गांधी जी ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन में हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने को कहा था। इसे गांधी जी ने जनमानस की भाषा भी कहा था।

वर्ष 1949 में

स्वतंत्र भारत की राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर 14 सितम्बर, 1949 को काफी विचार-विमर्श के बाद यह निर्णय लिया गया, जो भारतीय

संविधान के भाग 17 के अध्याय की अनुच्छेद 343(1) में इस प्रकार वर्णित है–

संघ की राष्ट्रभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप अंतर्राष्ट्रीय रूप होगा।

यह निर्णय 14 सितम्बर को लिया गया, इसी दिन हिन्दी के मूर्धन्य साहित्यकार व्यौहार राजेन्द्र सिंहा का 50-वां जन्मदिन था, इस कारण हिन्दी दिवस के लिए इस दिन को श्रेष्ठ माना गया था। हालांकि जब राष्ट्रभाषा के रूप में इसे चुना गया और लागू किया गया तो गैर-हिन्दी भाषी राज्य के लोग इसका विरोध करने लगे और अंग्रेजी को भी राजभाषा का दर्जा देना पड़ा। इस कारण हिन्दी में भी अंग्रेजी भाषा का प्रभाव पड़ने लगा।

हिन्दी दिवस का इतिहास और इसे दिवस के मनाने का कारण बहुत पुराना है। वर्ष 1918 में महात्मा गांधी के दोस्त 'नोनो' ने इसे जनमानस की भाषा कहा था और इसे देश की राष्ट्रभाषा भी बनाने को कहा था। लेकिन आजादी के बाद ऐसा कुछ नहीं हो सका। सत्ता में आसीन लोगों और जाति-भाषा के नाम पर राजनीति करने वालों ने कभी हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनने नहीं दिया।

1918 के बाद

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा दिलाने के लिए काका कालेलकर, मैथिलीशरण गुप्त, रामचंद्र शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी, सेठ गोविन्ददास और व्यौहार राजेन्द्र सिंह आदि लोगों ने बहुत से प्रयास किए। जिसके चलते इन्होंने दक्षिण भारत की कई यात्राएँ भी की।

हिन्दी दिवस की शुरुआत (1949 से 1950)

अंग्रेजी भाषा के बढ़ते चलन और हिंदी की अनदेखी को रोकने के लिए हर साल 14 सितंबर को देशभर में हिंदी दिवस मनाया जाता है। आजादी मिलने के दो साल बाद 14 सितंबर, 1949 को संविधान सभा में एक मत से हिंदी को राजभाषा घोषित किया गया था और इसके बाद से हर साल 14 सितंबर को हिंदी दिवस के रूप में मनाया जाने लगा। दरअसल 14 सितम्बर, 1949 को हिन्दी के पुरोधा व्यौहार राजेन्द्र सिंहा का 50-वां जन्मदिन था, जिन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए बहुत लंबा संघर्ष किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करवाने के लिए काका कालेलकर,

मैथिलीशरण गुप्त, हजारी प्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा, सेठ गोविन्ददास आदि साहित्यकारों को साथ लेकर व्यौहार राजेन्द्र सिंहा ने अथक प्रयास किए। इसके चलते उन्होंने दक्षिण भारत की कई यात्राएं भी कीं और लोगों को मनाया।

भारत की राजभाषा नीति (1950 से 1965)

26 जनवरी, 1950 को भारतीय संविधान लागू होने के साथ-साथ राजभाषा नीति भी लागू हुई। संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के तहत यह स्पष्ट किया गया है कि भारत की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी है। संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतर्राष्ट्रीय रूप है। हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा का प्रयोग भी सरकारी कामकाज में किया जा सकता है। अनुच्छेद 343 (2) के अंतर्गत यह भी व्यवस्था की गई है कि संविधान के लागू होने के समय से 15 वर्ष की अवधि तक, अर्थात् वर्ष 1965 तक संघ के सभी सरकारी कार्यों के लिए पहले की भांति अंग्रेजी भाषा का प्रयोग होता रहेगा। यह व्यवस्था इसलिए की गई थी कि इस बीच हिन्दी न जानने वाले हिन्दी सीख जायेंगे और हिन्दी भाषा को प्रशासनिक कार्यों के लिए सभी प्रकार से सक्षम बनाया जा सकेगा।

अनुच्छेद 344 में यह कहा गया कि संविधान प्रारंभ होने के 5 वर्षों के बाद और फिर उसके 10 वर्ष बाद राष्ट्रपति एक आयोग बनाएँगें, जो अन्य बातों के साथ-साथ संघ के सरकारी कामकाज में हिन्दी भाषा के उत्तरोत्तर प्रयोग के बारे में और संघ के राजकीय प्रयोजनों में से सब या किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के प्रयोग पर रोक लगाए जाने के बारे में राष्ट्रपति को सिफारिश करेगा। आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के लिए इस अनुच्छेद के खंड 4 के अनुसार 30 संसद सदस्यों की एक समिति के गठन की भी व्यवस्था की गई। संविधान के अनुच्छेद 120 में कहा गया है कि संसद का कार्य हिंदी में या अंग्रेजी में किया जा सकता है।

वर्ष 1965 तक 15 वर्ष हो चुका था, लेकिन उसके बाद भी अंग्रेजी को हटाया नहीं गया और अनुच्छेद 334 (3) में संसद को यह अधिकार दिया गया कि वह 1965 के बाद भी सरकारी काम-काज में अंग्रेजी का प्रयोग जारी रखने के बारे में व्यवस्था कर सकती है। अंग्रेजी और हिन्दी दोनों भारत की राजभाषा है।

अंग्रेजी का विरोध (1965 से 1967)

26 जनवरी, 1965 को संसद में यह प्रस्ताव पारित हुआ कि 'हिन्दी का सभी सरकारी कार्यों में उपयोग किया जाएगा, लेकिन उसके साथ-साथ अंग्रेजी का भी सह राजभाषा के रूप में उपयोग किया जाएगा।' वर्ष 1967 में संसद में 'भाषा संशोधन विधेयक' लाया गया। इसके बाद अंग्रेजी को अनिवार्य कर दिया गया। इस विधेयक में धारा 3(1) में हिन्दी की चर्चा तक नहीं की गई। इसके बाद अंग्रेजी का विरोध शुरू हुआ। 5 दिसंबर, 1967 को तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने राज्यसभा में कहा कि हम इस विधेयक में विचार-विमर्श करेंगे।

वर्ष 1990 व उसके बाद

वर्ष 1990 में प्रकाशित एक पुस्तक 'राष्ट्रभाषा का सवाल' में शैलेश मटियानी जी ने यह सवाल किया था कि हम 14 सितम्बर को ही हिन्दी दिवस क्यों मनाते हैं। इस पर प्रेमनारायण शुक्ला जी ने हिन्दी दिवस के दिन इलाहाबाद में इसके कारण को बताया था कि इस दिन ही हिन्दी भाषा के लिए कई महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए गए थे। इस कारण इस दिन को राष्ट्रीय पर्व के रूप में मनाया जाता है। लेकिन वे इस जवाब से संतुष्ट नहीं थे। उन्होंने कहा कि इस दिन को हम राष्ट्रभाषा या राजभाषा दिवस के रूप में क्यों नहीं मनाते हैं। इसके साथ ही शैलेश जी ने इस दिन हिन्दी दिवस मनाने को शर्मनाक पाखंड करार दिया था।

कार्यक्रम

हिन्दी दिवस के दौरान कई कार्यक्रम होते हैं। इस दिन छात्र-छात्राओं को हिन्दी के प्रति सम्मान और दैनिक व्यवहार में हिन्दी के उपयोग करने आदि की शिक्षा दी जाती है। जिसमें हिन्दी निबंध लेखन, वाद-विवाद हिन्दी टंकण प्रतियोगिता आदि होता है। हिन्दी दिवस पर हिन्दी के प्रति लोगों को प्रेरित करने हेतु भाषा सम्मान की शुरुआत की गई है। यह सम्मान प्रतिवर्ष देश के ऐसे व्यक्तित्त्व को दिया जाएगा जिसने जन-जन में हिन्दी भाषा के प्रयोग एवं उत्थान के लिए विशेष योगदान दिया है। इसके लिए सम्मान स्वरूप एक लाख एक हजार रुपये दिये जाते हैं। हिन्दी में निबंध लेखन प्रतियोगिता के द्वारा कई जगह पर हिन्दी भाषा के विकास और विस्तार हेतु कई सुझाव भी प्राप्त किए जाते हैं। लेकिन अगले दिन सभी हिन्दी भाषा को भूल जाते हैं। हिन्दी भाषा को कुछ और

दिन याद रखें इस कारण राष्ट्रभाषा सप्ताह का भी आयोजन होता है। जिससे यह कम से कम वर्ष में एक सप्ताह के लिए तो रहती ही है।

हिन्दी निबन्ध लेखन

1. वाद–विवाद
2. विचार गोष्ठी
3. काव्य गोष्ठी
4. श्रुतलेखन प्रतियोगिता
5. हिन्दी टंकण प्रतियोगिता
6. कवि सम्मेलन
7. पुरस्कार समारोह
8. राजभाषा सप्ताह

उत्पादक

बोलने वालों की संख्या के अनुसार अंग्रेजी और चीनी भाषा के बाद पूरी दुनिया में तीसरी सबसे बड़ी भाषा है। लेकिन उसे अच्छी तरह से समझने, पढ़ने और लिखने वालों में यह संख्या बहुत ही कम है। यह और भी कम होती जा रही। इसके साथ ही हिन्दी भाषा पर अंग्रेजी के शब्दों का भी बहुत अधिक प्रभाव हुआ है और कई शब्द प्रचलन से हट गए और अंग्रेजी के शब्द ने उसकी जगह ले ली है। जिससे भविष्य में भाषा के विलुप्त होने की भी संभावना अधिक बढ़ गई है।

इस कारण ऐसे लोग जो हिन्दी का ज्ञान रखते हैं या हिन्दी भाषा जानते हैं, उन्हें हिन्दी के प्रति अपने कर्त्तव्य का बोध करवाने के लिए इस दिन को हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है, जिससे वे सभी अपने कर्त्तव्य का पालन कर हिन्दी भाषा को भविष्य में विलुप्त होने से बचा सकें। लेकिन लोग और सरकार दोनों ही इसके लिए उदासीन दिखती है। हिन्दी तो अपने घर में ही दासी के रूप में रहती है। हिन्दी को आज तक संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा नहीं बनाया जा सका है। इसे विडंबना ही कहेंगे कि योग को 177 देशों का समर्थन मिला, लेकिन हिन्दी के लिए 129 देशों का समर्थन क्या नहीं जुटाया जा सकता? इसके ऐसे हालात आ गए हैं कि हिन्दी दिवस के दिन भी कई लोगों को ट्विटर पर हिन्दी में बोलो जैसे शब्दों का उपयोग करना पड़ रहा

है। अमर उजाला ने भी लोगों से विनती की, कि कम से कम हिन्दी दिवस के दिन हिन्दी में ट्वीट करें।

उद्देश्य

इसका मुख्य उद्देश्य वर्ष में एक दिन इस बात से लोगों को रुबरु कराना है कि जब तक वे हिन्दी का उपयोग पूरी तरह से नहीं करेंगे तब तक हिन्दी भाषा का विकास नहीं हो सकता है। इस एक दिन सभी सरकारी कार्यालयों में अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी का उपयोग करने की सलाह दी जाती है। इसके अलावा जो वर्ष भर हिन्दी में अच्छे विकास कार्य करता है और अपने कार्य में हिन्दी का अच्छी तरह से उपयोग करता है, उसे पुरस्कार द्वारा सम्मानित किया जाता है।

कई लोग अपने सामान्य बोलचाल में भी अंग्रेजी भाषा के शब्दों का या अंग्रेजी का उपयोग करते हैं, जिससे धीरे-धीरे हिन्दी के अस्तित्त्व को खतरा पहुँच रहा है। यहाँ तक कि वाराणसी में स्थित दुनिया में सबसे बड़ी हिन्दी संस्था आज बहुत ही खस्ता हाल में है। इस कारण इस दिन उन सभी से निवेदन किया जाता है कि वे अपने बोलचाल की भाषा में भी हिन्दी का ही उपयोग करें। इसके अलावा लोगों को अपने विचार आदि को हिन्दी में लिखने भी कहा जाता है। चूंकि हिन्दी भाषा में लिखने हेतु बहुत कम उपकरण के बारे में ही लोगों को पता है, इस कारण इस दिन हिन्दी भाषा में लिखने, जाँच करने और शब्दकोश के बारे में जानकारी दी जाती है। हिन्दी भाषा के विकास के लिए कुछ लोगों के द्वारा कार्य करने से कोई खास लाभ नहीं होगा। इसके लिए सभी को एक जुट होकर हिन्दी के विकास को नए आयाम तक पहुँचाना होगा। हिन्दी भाषा के विकास और विलुप्त होने से बचाने के लिए यह अनिवार्य है।

राष्ट्रभाषा सप्ताह

राष्ट्रभाषा सप्ताह या हिन्दी सप्ताह 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस से एक सप्ताह के लिए मनाया जाता है। इस पूरे सप्ताह अलग-अलग प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है। यह आयोजन विद्यालय और कार्यालय दोनों में किया जाता है। इसका मूल उद्देश्य हिन्दी भाषा के लिए विकास की भावना को लोगों में केवल हिन्दी दिवस तक ही सीमित न कर उसे और अधिक बढ़ाना है। इन सात दिनों में लोगों को निबंध लेखन, आदि के द्वारा हिन्दी भाषा के विकास और

उसके उपयोग के लाभ और न उपयोग करने पर हानि के बारे में समझाया जाता है।

पुरस्कार

हिन्दी दिवस पर हिन्दी के प्रति लोगों को उत्साहित करने हेतु पुरस्कार समारोह भी आयोजित किया जाता है। जिसमें कार्य के दौरान अच्छी हिन्दी का उपयोग करने वाले को यह पुरस्कार दिया जाता है। यह पहले राजनेताओं के नाम पर था, जिसे बाद में बदल कर राष्ट्रभाषा कीर्ति पुरस्कार और राष्ट्रभाषा गौरव पुरस्कार कर दिया गया। राष्ट्रभाषा गौरव पुरस्कार लोगों को दिया जाता है, जबकि राष्ट्रभाषा कीर्ति पुरस्कार किसी विभाग, समिति आदि को दिया जाता है।

राष्ट्रभाषा गौरव पुरस्कार

यह पुरस्कार तकनीकी या विज्ञान के विषय पर लिखने वाले किसी भी भारतीय नागरिक को दिया जाता है। इसमें दस हजार से लेकर दो लाख रुपये के 13 पुरस्कार होते हैं। इसमें प्रथम पुरस्कार प्राप्त करने वाले को 2 लाख रुपए, द्वितीय पुरस्कार प्राप्त करने वाले को डेढ़ लाख रुपए और तृतीय पुरस्कार प्राप्त करने वाले को पचहत्तर हजार रुपये मिलता है। साथ ही दस लोगों को प्रोत्साहन पुरस्कार के रूप में दस–दस हजार रुपए प्रदान किए जाते हैं। पुरस्कार प्राप्त सभी लोगों को स्मृति चिह्न भी दिया जाता है। इसका मूल उद्देश्य तकनीकी और विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी भाषा को आगे बढ़ाना है। इस प्रकार के पुरस्कार वितरण होने से लोग हमारी राष्ट्रभाषा को अधिक महत्त्व देने लगे हैं।

राष्ट्रभाषा कीर्ति पुरस्कार

इस पुरस्कार योजना के तहत कुल 39 पुरस्कार दिये जाते हैं। यह पुरस्कार किसी समिति, विभाग, मण्डल आदि को उसके द्वारा हिन्दी में किए गए श्रेष्ठ कार्यों के लिए दिया जाता है। इसका मूल उद्देश्य सरकारी कार्यों में हिन्दी भाषा का उपयोग करने से है।

आलोचना

कई हिन्दी लेखकों और हिन्दी भाषा जानने वालों का कहना है कि हिन्दी दिवस केवल सरकारी कार्य की तरह है, जिसे केवल एक दिन के लिए मना

दिया जाता है। इससे हिन्दी भाषा का कोई भी विकास नहीं होता है, बल्कि इससे हिन्दी भाषा को हानि होती है। कई लोग हिन्दी दिवस समारोह में भी अंग्रेजी भाषा में लिख कर लोगों का स्वागत करते हैं। सरकार इसे केवल यह दिखाने के लिए चलाती है कि वह हिन्दी भाषा के विकास हेतु कार्य कर रही है। स्वयं सरकारी कर्मचारी भी हिन्दी के स्थान पर अंग्रेजी में कार्य करते नजर आते हैं।

लेकिन कुछ लोगों की सोच यह भी है कि विविध कारण बताकर हिन्दी दिवस मनाने का विरोध करने और मजाक उड़ाने वाले यह चाहते हैं कि हिन्दी के प्रति रही–सही अपनत्व की भावना भी समाप्त की जाये।

5

विश्व हिन्दी सम्मेलन

विश्व हिन्दी सम्मेलन हिन्दी भाषा का सबसे बड़ा अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन है, जिसमें विश्व भर से हिन्दी विद्वान, साहित्यकार, पत्रकार, भाषा विज्ञानी, विषय विशेषज्ञ तथा हिन्दी प्रेमी जुटते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी के प्रति जागरुकता पैदा करने, समय-समय पर हिन्दी की विकास यात्र का आकलन करने, लेखक व पाठक दोनों के स्तर पर हिन्दी साहित्य के प्रति सरोकारों को और दृढ़ करने, जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग को प्रोत्साहन देने तथा हिन्दी के प्रति प्रवासी भारतीयों के भावुकतापूर्ण व महत्त्वपूर्ण रिश्तों को और अधिक गहराई व मान्यता प्रदान करने के उद्देश्य से 1975 में विश्व हिन्दी सम्मेलनों की शृंखला आरम्भ की गयी। इस बारे में तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गान्धी ने पहल की थी। पहला विश्व हिन्दी सम्मेलन राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के सहयोग से नागपुर में सम्पन्न हुआ, जिसमें प्रसिद्ध समाजसेवी एवं स्वतन्त्रता सेनानी विनोबा भावे ने अपना विशेष सन्देश भेजा।

प्रारम्भ में इसका आयोजन हर चौथे वर्ष आयोजित किया जाता था लेकिन अब यह अन्तराल घटाकर 3 वर्ष कर दिया गया है। अब तक दस विश्व हिन्दी सम्मेलन हो चुके हैं- मॉरीशस, नई दिल्ली, पुनः मॉरीशस, त्रिनिडाड व टोबेगो, लन्दन, सूरीनाम न्यूयार्क और जोहांसबर्ग में। दसवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन 2015 में भोपाल में आयोजित हुआ। 2018 में इसका आयोजन मॉरीशस में प्रस्तावित है।

इतिहास

विश्व हिन्दी सम्मेलन शृंखलाएँ

क्रम	तिथि	नगर	देश
1.	10–14 जनवरी 1975	नागपुर	Flag of India-svg भारत
2.	28–30 अगस्त 1976	पोर्ट लुई	Flag of Mauritius-svg मॉरिशस
3.	28–30 अक्टूबर 1983	नई दिल्ली	Flag of India-svg भारत
4.	2–4 दिसम्बर 1993	पोर्ट लुई	Flag of Mauritius-svg मॉरिशस
5.	4–8 अप्रैल 1996	त्रिनिडाड–टोबेगो	Flag of Trinidad and Tobago-svg त्रिनिदाद एवं टोबेगो
6.	14–18 सितम्बर 1999	लंदन	Flag of the United Kingdom-svg यूनाइटेड किंगडम
7.	5–9 जून 2003	पारामरिबो	Flag of Suriname-svg सूरीनाम
8.	13–15 जुलाई 2007	न्यूयार्क	Flag of the United States-svg संयुक्त राज्य
9.	22–24 सितम्बर 2012	जोहांसबर्ग	Flag of SouthAfrica-svg दक्षिण अफ्रीका
10.	10–12 सितम्बर 2015	भोपाल	Flag of India-svg भारत
11.	18–20 अगस्त 2018	पोर्ट लुई	Flag of Mauritius-svg मॉरिशस

पहला विश्व हिन्दी सम्मेलन 10 जनवरी से 14 जनवरी 1975 तक नागपुर में आयोजित किया गया। सम्मेलन का आयोजन राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के तत्त्वावधान में हुआ। सम्मेलन से सम्बन्धित राष्ट्रीय आयोजन समिति के अध्यक्ष महामहिम उपराष्ट्रपति श्री बी. डी. जत्ती थे। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के अध्यक्ष श्री मधुकर राव चौधरी उस समय महाराष्ट्र के वित्त, नियोजन व अल्पबचत मन्त्री थे। पहले विश्व हिन्दी सम्मेलन का बोधवाक्य था – वसुधैव

कुटुम्बकम। सम्मेलन के मुख्य अतिथि थे। मॉरीशस के प्रधानमन्त्री श्री शिवसागर रामगुलाम, जिनकी अध्यक्षता में मॉरीशस से आये एक प्रतिनिधिमण्डल ने भी सम्मेलन में भाग लिया था। इस सम्मेलन में 30 देशों के कुल 122 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन में पारित किये गये मन्तव्य थे–

1. संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को आधिकारिक भाषा के रूप में स्थान दिया जाये।
2. वर्धा में विश्व हिन्दी विद्यापीठ की स्थापना हो।
3. विश्व हिन्दी सम्मेलनों को स्थायित्व प्रदान करने के लिये अत्यन्त विचारपूर्वक एक योजना बनायी जाये।

दूसरे विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन मॉरीशस की धरती पर हुआ। मॉरीसस की राजधानी पोर्ट लुई में 28 अगस्त से 30 अगस्त 1976 तक चले विश्व इस सम्मेलन के आयोजक राष्ट्रीय आयोजन समिति के अध्यक्ष, मॉरीशस के प्रधानमन्त्री डॉ. सर शिवसागर रामगुलाम थे। सम्मेलन में भारत से तत्कालीन केन्द्रीय स्वास्थ्य और परिवार नियोजन मन्त्री डॉ. कर्ण सिंह के नेतृत्व में 23 सदस्यीय प्रतिनिधिमण्डल ने भाग लिया। भारत के अतिरिक्त सम्मेलन में 17 देशों के 181 प्रतिनिधियों ने भी हिस्सा लिया।

तीसरे विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन भारत की राजधानी दिल्ली में 28 अक्टूबर से 30 अक्टूबर 1983 तक किया गया। सम्मेलन के लिये बनी राष्ट्रीय आयोजन समिति के अध्यक्ष तत्कालीन लोकसभा अध्यक्ष डॉ. बलराम जाखड़ थे। इसमें मॉरीशस से आये प्रतिनिधिमण्डल ने भी हिस्सा लिया जिसके नेता थे श्री हरीश बुधू। सम्मेलन के आयोजन में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ने प्रमुख भूमिका निभायी। सम्मेलन में कुल 6, 566 प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया जिनमें विदेशों से आये 260 प्रतिनिधि भी शामिल थे। हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवियत्री सुश्री महादेवी वर्मा समापन समारोह की मुख्य अतिथि थीं। इस अवसर पर उन्होंने दो टूक शब्दों में कहा था – 'भारत के सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के कामकाज की स्थिति उस रथ जैसी है, जिसमें घोड़े आगे की बजाय पीछे जोत दिये गये हों।'

चौथे विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन 2 दिसम्बर से 4 दिसम्बर 1993 तक मॉरीशस की राजधानी पोर्ट लुई में आयोजित किया गया। 17 साल बाद मॉरीशस में एक बार फिर विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा था। इस बार के आयोजन का उत्तरदायित्व मॉरीशस के कला, संस्कृति, अवकाश एवं

सुधार संस्थान मन्त्री श्री मुक्तेश्वर चुनी ने सम्हाला था। उन्हें राष्ट्रीय आयोजन समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था। इसमें भारत से गये प्रतिनिधिमण्डल के नेता थे श्री मधुकर राव चौधरी। भारत के तत्कालीन गृह राज्यमन्त्री श्री रामलाल राही प्रतिनिधिम्ण्डल के उपनेता थे। सम्मेलन में मॉरीशस के अतिरिक्त लगभग 200 विदेशी प्रतिनिधियों ने भी भाग लिया।

पाँचवें विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन हुआ त्रिनिदाद एवं टोबेगो की राजधानी पोर्ट ऑफ स्पेन में। तिथियाँ थीं – 4 अप्रैल से 8 अप्रैल 1996 और आयोजक संस्था थी त्रिनीदाद की हिन्दी निधि। सम्मेलन के प्रमुख संयोजक थे हिन्दी निधि के अध्यक्ष श्री चंका सीताराम। भारत की ओर से इस सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधिमण्डल के नेता अरुणाचल प्रदेश के राज्यपाल श्री माता प्रसाद थे। सम्मेलन का केन्द्रीय विषय था– प्रवासी भारतीय और हिन्दी। जिन अन्य विषयों पर इसमें ध्यान केन्द्रित किया गया, वे थे – हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास, कैरेबियाई द्वीपों में हिन्दी की स्थिति एवं कप्यूटर युग में हिन्दी की उपादेयता। सम्मेलन में भारत से 17 सदस्यीय प्रतिनिधिमण्डल ने हिस्सा लिया। अन्य देशों के 257 प्रतिनिधि इसमें शामिल हुए।

छठा विश्व हिन्दी सम्मेलन लन्दन में 14 सितम्बर से 18 सितम्बर 1999 तक आयोजित किया गया। यू.के. हिन्दी समिति, गीतांजलि बहुभाषी समुदाय और बर्मिंघम भारतीय भाषा संगम, यॉर्क ने मिलजुल कर इसके लिये राष्ट्रीय आयोजन समिति का गठन किया गया जिसके अध्यक्ष थे डॉ. कृष्ण कुमार और संयोजक डॉ. पद्मेश गुप्त। सम्मेलन का केंद्रीय विषय था – हिन्दी और भावी पीढ़ी। सम्मेलन में विदेश राज्यमन्त्री श्रीमती वसुंधरा राजे के नेतृत्व में भारतीय प्रतिनिधिमण्डल ने भाग लिया। प्रतिनिधिमण्डल के उपनेता थे प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. विद्यानिवास मिश्र। इस सम्मेलन का ऐतिहासिक महत्त्व इसलिए है क्योंकि यह हिन्दी को राजभाषा बनाये जाने के 50वें वर्ष में आयोजित किया गया। यही वर्ष सन्त कबीर की छठी जन्मशती का भी था। सम्मेलन में 21 देशों के 700 प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया। इनमें भारत से 350 और ब्रिटेन से 250 प्रतिनिधि शामिल थे।

सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन हुआ सुदूर सूरीनाम की राजधानी पारामारिबो में। तिथियाँ थी – 5 जून से 9 जून 2003। इक्कीसवीं सदी में आयोजित यह पहला विश्व हिन्दी सम्मेलन था। सम्मेलन के आयोजक थे श्री जानकीप्रसाद सिंह और इसका केन्द्रीय विषय था – विश्व हिन्दी– नई शताब्दी

की चुनौतियाँ। सम्मेलन में हिस्सा लेने वाले भारतीय प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व विदेश राज्य मन्त्री श्री दिग्विजय सिंह ने किया। सम्मेलन में भारत से 200 प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया। इसमें 12 से अधिक देशों के हिन्दी विद्वान व अन्य हिन्दी सेवी सम्मिलित हुए। सम्मेलन का उद्घाटन 5 जून को हुआ था। यह भी एक संयोग ही था कि कुछ दशक पहले इसी दिन सूरीनामी नदी के तट पर भारतवंशियों ने पहला कदम रखा था।

आठवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन 13 जुलाई से 15 जुलाई 2007 तक संयुक्त राज्य अमेरिका की राजधानी न्यू यॉर्क में हुआ। इस सम्मेलन का केन्द्रीय विषय था – विश्व मंच पर हिन्दी। इसका आयोजन भारत सरकार के विदेश मंत्रालय द्वारा किया गया। न्यूयॉर्क में सम्मेलन के आयोजन से सम्बन्धित व्यवस्था अमेरिका की हिन्दी सेवी संस्थाओं के सहयोग से भारतीय विद्या भवन ने की थी। इसके लिए एक विशेष जालस्थल (वेवसाइट) का निर्माण भी किया गया। इसे प्रभासाक्षी.कॉम के समूह सम्पादक बालेन्दु शर्मा दाधीच के नेतृत्व वाले प्रकोष्ठ ने विकसित किया है।

नौवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन इसी वर्ष 22 सितम्बर से 24 सितम्बर 2012 तक, दक्षिण अफ्रीका के शहर जोहांसबर्ग में सोमवार को खत्म हो गया। इस सम्मेलन में 22 देशों के 600 से अधिक प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया। इनमें लगभग 300 भारतीय शामिल हुए। सम्मेलन में तीन दिन चले मंथन के बाद कुल 12 प्रस्ताव पारित किए गए और विरोध के बाद एक संशोधन भी किया गया।

दसवें विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजन की घोषणा हो चुकी है। यह 10 से 12 सितंबर तक भोपाल में हुआ। दसवें सम्मेलन का मुख्य कथ्य (थीम) था – 'हिन्दी जगत–विस्तार एवं सम्भावनाएँ '।

11वाँ विश्व हिन्दी सम्मीलन मॉरिशस में आयोजित किया गया।

12वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन 2021 न्यू यॉर्क में होगा।

विश्व हिन्दी सम्मेलनों में पारित प्रस्ताव

प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन

1. संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को आधिकारिक भाषा के रूप में स्थान दिया जाए।
2. वर्धा में विश्व हिन्दी विद्यापीठ की स्थापना हो।

3. विश्व हिन्दी सम्मेलनों को स्थायित्व प्रदान करने के लिए ठोस योजना बनाई जाए।

द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन

1. मॉरीशस में एक विश्व हिन्दी केंद्र की स्थापना की जाए जो सारे विश्व में हिन्दी की गतिविधियों का समन्वय कर सके।
2. एक अंतरराष्ट्रीय हिन्दी पत्रिका का प्रकाशन किया जाए जो भाषा के माध्यम से ऐसे समुचित वातावरण का निर्माण कर सके जिसमें मानव विश्व का नागरिक बना रहे और आध्यात्म की महान शक्ति एक नए समन्वित सामंजस्य का रूप धारण कर सके।
3. हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ में एक आधिकारिक भाषा के रूप में स्थान मिले। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक समयबद्ध कार्यक्रम बनाया जाए।

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन

1. अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी के प्रचार-प्रसार की संभावनाओं का पता लगा कर इसके लिए गहन प्रयास किए जाएं।
2. हिन्दी के विश्वव्यापी स्वरूप को विकसित करने केे लिए विश्व हिन्दी विद्यापीठ स्थापित करने की योजना को मूर्त रूप दिया जाए।
3. विगत दो सम्मेलनों में पारित संकल्पों की संपुष्टि करते हुए यह निर्णय लिया गया कि अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी के विकास और उन्नयन के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर एक स्थायी समिति का गठन किया जाए। इस समिति में देश-विदेश के लगभग 25 व्यक्ति सदस्य हों।
4. चतुर्थ विश्व हिन्दी सम्मेलन
5. विश्व हिन्दी सचिवालय मॉरीशस में स्थापित किया जाएँ।
6. भारत में अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय स्थापित किया जाएँ।
7. विभिन्न विश्वविद्यालयों में हिन्दी पीठ खोले जाएँ।
8. भारत सरकार विदेशों से प्रकाशित दैनिक समाचार-पत्र, पत्रिकाएँ, पुस्तकें प्रकाशित करने में सक्रिय सहयोग करे।
9. हिन्दी को विश्व मंच पर उचित स्थान दिलाने में शासन और जन-समुदाय विशेष प्रयत्न करे।

10. विश्व के समस्त हिन्दी प्रेमी अपने निजी एवं सार्वजनिक कार्यों में हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करें और संकल्प लें कि वे कम से कम अपने हस्ताक्षरों, निमंत्रण पत्रों, निजी पत्रों और नामपट्टों में हिन्दी का प्रयोग करेंगे।
11. सम्मेलन के सभी प्रतिनिधि अपने-अपने देशों की सरकारों से संयुक्त राष्ट्र में हिन्दी को आधिकारिक भाषा बनाने के लिए समर्थन प्राप्त करने का सार्थक प्रयास करेंगे।
12. चतुर्थ विश्व हिन्दी सम्मेलन (दिसम्बर-1993) के बाद विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना मॉरीशस में हुई।

पांचवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन

विश्व व्यापी भारतवंशी समाज हिन्दी को अपनी संपर्क भाषा के रूप में स्थापित करेगा। मॉरीशस में विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना के लिए भारत में एक अंतर-सरकारी समिति बनाई जाए। सभी देशों, विशेषकर जिन देशों में अप्रवासी भारतीय बड़ी संख्या में हैं, उनकी सरकारें अपने-अपने देशों में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था करें। उन देशों की सरकारों से आग्रह किया जाए कि वे हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनाने के लिए राजनीतिक योगदान और समर्थन दें।

छठा विश्व हिन्दी सम्मेलन

1. विश्व भर में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन, शोध, प्रचार-प्रसार और हिन्दी सृजन में समन्वय के लिए महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय केंद्र सक्रिय भूमिका निभाए।
2. विदेशों में हिन्दी के शिक्षण, पाठ्यक्रमों के निर्धारण, पाठ्य-पुस्तिकों के निर्माण, अध्यापकों के प्रशिक्षण आदि की व्यवस्था भी विश्वविद्यालय करे और सुदूर शिक्षण के लिए आवश्यक कदम उठाएँ।
3. मॉरीशस सरकार अन्य हिन्दी-प्रेमी सरकारों से परामर्श कर शीघ्र विश्व हिन्दी सचिवालय स्थापित करे।
4. हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र में मान्यता दी जाए।
5. हिन्दी को सूचना तकनीक के विकास, मानकीकरण, विज्ञान एवं तकनीकी लेखन, प्रसारण एवं संचार की अद्यतन तकनीक के विकास के लिए भारत सरकार एक केंद्रीय एजेंसी स्थापित करे।

6. नई पीढ़ी में हिन्दी को लोकप्रिय बनाने के लिए आवश्यक पहल की जाए।
7. भारत सरकार विदेश स्थित अपने दूतावासों को निर्देश दे कि वे भारतवंशियों की सहायता से विद्यालयों में एक भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था करवाएँ।

सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन

1. संयुक्त राष्ट्र में हिन्दी को आधिकारिक भाषा बनाया जाए।
2. विदेशी विश्वविद्यालयों में हिन्दी पीठ की स्थापना हो।
3. भारतीय मूल के लोगों के बीच हिन्दी के प्रयोग के प्रभावी उपाय किए जाएं।
4. हिन्दी के प्रचार हेतु वेबसाइट की स्थापना और सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग हो।
5. हिन्दी विद्वानों की विश्व-निर्देशिका का प्रकाशन किया जाए।
6. विश्व हिन्दी दिवस का आयोजन हो।
7. कैरेबियन हिन्दी परिषद की स्थापना हो।
8. दक्षिण भारत के विश्व विद्यालयों में हिन्दी विभाग की स्थापना हो।
9. हिन्दी पाठ्यक्रम में विदेशी हिन्दी लेखकों की रचनाओं को शामिल किया जाए।
10. सूरीनाम में हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था की जाए।

आठवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन

विदेशों में हिन्दी शिक्षण और देवनागरी लिपि को लोकप्रिय बनाने के उद्देश्य से दूसरी भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के लिए एक मानक पाठ्यक्रम बनाया जाए तथा हिन्दी के शिक्षकों को मान्यता प्रदान करने की व्यवस्था की जाए।

विश्व हिन्दी सचिवालय के कामकाज को सक्रिय करने एवं उद्देश्य परक बनाने के लिए सचिवालय को भारत तथा मॉरीशस सरकार सभी प्रकार की प्रशासनिक एवं आर्थिक सहायता प्रदान करें और दिल्ली सहित विश्व के चार-पाँच अन्य देशों में इस सचिवालय के क्षेत्रीय कार्यालय खोलने पर विचार किया जाए। सम्मेलन सचिवालय यह आह्वान करता है कि हिन्दी भाषा को लोकप्रिय बनाने के लिए विश्व मंच पर हिन्दी वेबसाइट बनाई जाए।

हिन्दी में ज्ञान-विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी विषयों पर सरल एवं उपयोगी हिन्दी पुस्तकों के सृजन को प्रोत्साहित किया जाए। हिन्दी में सूचना प्रौद्योगिकी को लोकप्रिय बनाने के प्रभावी उपाय किए जाएं। एक सर्वमान्य व सर्वत्र उपलब्ध यूनिकोड को विकसित व सर्वसुलभ बनाया जाए।

विदेशों में जिन विश्वविद्यालयों तथा स्कूलों में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन होता है उनका एक डेटाबेस बनाया जाए और हिन्दी अध्यापकों की एक सूची भी तैयार की जाए।

यह सम्मेलन विश्व के सभी हिन्दी प्रेमियों और विशेष रूप से प्रवासी भारतीयों तथा विदेशों में कार्यरत भारतीय राष्ट्रिकों से भी अनुरोध करता है कि वे विदेशों में हिन्दी भाषा, साहित्य के प्रचार-प्रसार में योगदान करें।

वर्धा स्थित महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय में विदेशी हिन्दी विद्वानों के अनुसंधान के लिए शोधवृत्ति की व्यवस्था की जाए।

केंद्रीय हिन्दी संस्थान भी विदेशों में हिन्दी के प्रचार-प्रसार व पाठ्यक्रमों के निर्माण में अपना सक्रिय सहयोग दे।

विदेशी विश्वविद्यालयों में हिन्दी पीठ की स्थापना पर विचार-विमर्श किया जाए।

हिन्दी को साहित्यघ के साथ-साथ आधुनिक ज्ञान-विज्ञान और वाणिज्य की भाषा बनाया जाए।

भारत द्वारा राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तरों पर आयोजित की जाने वाली संगोष्ठियों व सम्मेलनों में हिन्दी को प्रोत्साहित किया जाए।

नौवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन

22 से 24 सितम्बर 2012 को दक्षिण अफ्रीका में आयोजित 9वें विश्व हिन्दी सम्मेलन ने, जिसमें विश्वभर के हिन्दी विद्वानों, साहित्यकारों और हिन्दी प्रेमियों आदि ने भाग लिया, रेखांकित किया कि हिन्दी के बढ़ते हुए वैश्वीकरण के मूल में गांधी जी की भाषा दृष्टि का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मॉरीशस में विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना की संकल्पना प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन के दौरान की गई थी। यह सम्मेलन इस सचिवालय की स्थापना के लिए भारत और मॉरीशस की सरकारों द्वारा किए गए अथक प्रयासों एवं समर्थन की सराहना करता है।

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय भी विश्व हिन्दी सम्मेलनों में पारित संकल्पों का ही परिणाम है। यह विश्वविद्यालय हिन्दी के प्रचार-प्रसार और उपयुक्त आधुनिक शिक्षण उपकरण विकसित करने में सराहनीय कार्य कर रहा है।

सम्मेलन केंद्रीय हिन्दी संस्थान की भी सराहना करता है कि वह उपयुक्त पाठ्यक्रम और कक्षाओं का संचालन करके विदेशियों और देश के गैर-हिन्दी भाषी क्षेत्र के लोगों के बीच हिंदी का प्रचार-प्रसार कर रहा है।

दसवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन

दसवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन 10 सितम्बर से 12 सितम्बर 2015 तक भोपाल में हुआ। इसका उद्घाटन भारत के प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी ने किया। सम्मेलन का मुख्य विषय 'हिन्दी जगत–विस्तार एवं संभावनाएँ' था।

11वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन 18 अगस्त से 20 अगस्त 2018 तक मॉरीशस की राजधानी पोर्ट लुई में आयोजित होगा। इस सम्मेलन का आयोजन भारत सरकार के विदेश मंत्रालय द्वारा मॉरीशस सरकार के सहयोग से होगा। इस सम्मेलन की योजना का निर्णय सितंबर 2015 में भोपाल में आयोजित 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन में लिया गया था। इस सम्मेलन के लिए केन्द्रीय या मुख्य आयोजक विदेश मंत्रालय ही है। इस श्रृंखला का पहला सम्मेलन 1975 में नागपुर में आयोजित किया गया था। तब से, विश्व के अलग-अलग भागों में, ऐसे 10 सम्मेलन आयोजित किये जा चुके हैं।

सम्मेलन

इस सम्मेलन का मुख्य विषय 'हिंदी विश्व और भारतीय संस्कृति' है और आयोजन स्थल स्वामी विवेकानंद अंतर्राष्ट्रीय सभा केंद्र, पाई, मॉरीशस है। यहां हिन्दी भाषा के विकास से संबंधित कई प्रदर्शनियाँ लगाई जाएंगी। सम्मेलन के एक दिन पहले मॉरीशस में गंगा आरती का कार्यक्रम होगा। गंगा को भारतीय संस्कृति का प्रतीक माना जाता है और संसार में भारतीय लोग गंगा को मां के समान मानते हैं। सम्मेलन के दौरान शाम को भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम और कवि सम्मेलनों का आयोजन होगा। दैनिक सम्मेलन-समाचार पत्र (सम्मेलन-समाचार), सम्मेलन-स्मारिका भी प्रकाशित किये जाएंगे। यहां हुए शैक्षिक सत्रों में हुई चर्चाओं और सुझावों के आधार पर

रिपोर्ट भी प्रकाशित होगी। इस प्रकार की सभी सम्मेलन सामग्रियों को तैयार करने और प्रकाशन में विश्व हिंदी सचिवालय की महत्त्वपूर्ण भूमिका होगी। इस अवसर पर भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद द्वारा 'गगनांचल' का एक सम्मेलन-विशेष अंक भी निकाला जाएगा, जो सम्मेलन को समर्पित होगा। पिछले सम्मेलनों के अनुसार इस बार भी सम्मेलन के दौरान भारत एवं अन्य देशों के हिंदी विद्वानों को हिंदी के क्षेत्र में उनके विशेष योगदान के लिए 'विश्व हिंदी सम्मान" से सम्मानित करने की योजना है।

प्रतीक एवं जालस्थल

इस सम्मेलन के लिए विशेष रूप से एक जालस्थल भी तैयार किया गया है– https://vishwahindisammelan-gov-in। यहां सम्मेलन से संबंधित सभी सूचनाओं की जानकारी उपलब्ध रहती है। इस जालस्थल एवं प्रतीक चिह्न का लोकार्पण सुषमा स्वराज, विदेश मंत्री और लीला देवी दुखुन लुछूमन, शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री, मॉरीशस द्वारा संयुक्त रूप से 10 अप्रैल 2018 को नई दिल्ली स्थित विदेश मंत्रालय के जवाहरलाल नेहरू भवन में किया गया था।

सम्मेलन के लिए उपयुक्त लोगो के चयन हेतु 60 हजार रुपए की राशि के पुरस्कार के साथ मंत्रालय द्वारा एक सम्मेलन प्रतीक चिह्न रूपांकन प्रतियोगिता आयोजित की गई थी। प्रतीक चिह्न चयन समिति के सहयोग से, सम्मेलन के लिए इस प्रतियोगिता द्वारा एक उपयुक्त प्रतीक चिह्न का चयन किया गया है।

सम्मेलन के लिए उपयुक्त लोगो के चयन हेतु 60 हजार रुपए की राशि के पुरस्कार के साथ मंत्रालय द्वारा एक सम्मेलन प्रतीक चिह्न रूपांकन प्रतियोगिता आयोजित की गई थी। प्रतीक चिह्न चयन समिति के सहयोग से, सम्मेलन के लिए इस प्रतियोगिता द्वारा एक उपयुक्त प्रतीक चिह्न का चयन किया गया है।

6

भारत की राजभाषा के रूप में हिन्दी

हिन्दी को भारत की राजभाषा के रूप में 14 सितम्बर सन् 1949 को स्वीकार किया गया। इसके बाद संविधान में अनुच्छेद 343 से 351 तक राजभाषा के सम्बन्ध में व्यवस्था की गयी। इसकी स्मृति को ताजा रखने के, , , लिये 14 सितम्बर का दिन प्रतिवर्ष हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है। धारा 343(1) के अनुसार भारतीय संघ की राजभाषा हिन्दी एवं लिपि देवनागरी है। संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिये प्रयुक्त अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतरराष्ट्रीय स्वरूप है। भारतीय संविधान में राष्ट्रभाषा का उल्लेख नहीं है। संसद का कार्य हिंदी में या अंग्रेजी में किया जा सकता है। परन्तु राज्यसभा के सभापति महोदय या लोकसभा के अध्यक्ष महोदय विशेष परिस्थिति में सदन के किसी सदस्य को अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुमति दे सकते हैं। 'संविधान का अनुच्छेद 120' किन प्रयोजनों के लिए केवल हिंदी का प्रयोग किया जाना है, किन के लिए हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग आवश्यक है और किन कार्यों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाना है, यह राजभाषा अधिनियम 1963, राजभाषा नियम 1976 और उनके अंतर्गत समय-समय पर राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय की ओर से जारी किए गए निदेशों द्वारा निर्धारित किया गया है।

हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकार किये जाने का औचित्य हिन्दी को राजभाषा का सम्मान कृपापूर्वक नहीं दिया गया, बल्कि यह उसका अधिकार है। यहां अधिक विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है, केवल राष्ट्रपिता महात्मा गांधी द्वारा बताये गये निम्नलिखित लक्षणों पर दृष्टि डाल लेना ही पर्याप्त रहेगा, जो उन्होंने एक 'राजभाषा' के लिए बताये थे–

(1) प्रयोग करने वालों के लिए वह भाषा सरल होनी चाहिए।
(2) उस भाषा के द्वारा भारतवर्ष का आपसी धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार हो सकना चाहिए।
(3) यह जरूरी है कि भारतवर्ष के बहुत से लोग उस भाषा को बोलते हों।
(4) राष्ट्र के लिए वह भाषा आसान होनी चाहिए।
(5) उस भाषा का विचार करते समय किसी क्षणिक या अल्प स्थायी स्थिति पर जोर नहीं देना चाहिए।

इन लक्षणों पर हिन्दी भाषा बिल्कुल खरी उतरती है।

अनुच्छेद 343 संघ की राजभाषा

(1) संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी, संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतर्राष्ट्रीय रूप होगा।
(2) खण्ड (1) में किसी बात के होते हुए भी, इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि तक संघ के उन सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा, जिनके लिए उसका ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था, परन्तु राष्ट्रपति उक्त अवधि के दौरान, आदेश द्वारा, संघ के शासकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिंदी भाषा का और भारतीय अंकों के अंतर्राष्ट्रीय रूप के अतिरिक्त देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा।
(3) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी, संसद उक्त पन्द्रह वर्ष की अवधि के पश्चात्, विधि द्वारा
    (क) अंग्रेजी भाषा का, या
    (ख) अंकों के देवनागरी रूप का,

ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग उपबंधित कर सकेगी जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएं।

अनुच्छेद 351 हिंदी भाषा के विकास के लिए निर्देश

संघ का यह कर्त्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे, जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्थानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात् करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द-भंडार के लिए मुख्यत: संस्कृत से और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।

राजभाषा संकल्प, 1968

भारतीय संसद के दोनों सदनों (राज्यसभा और लोकसभा) ने 1968 में 'राजभाषा संकल्प' के नाम से निम्नलिखित संकल्प लिया–

1. जबकि संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार संघ की राजभाषा हिंदी रहेगी और उसके अनुच्छेद 351 के अनुसार हिंदी भाषा का प्रसार, वृद्धि करना और उसका विकास करना ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, संघ का कर्त्तव्य है–

यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी के प्रसार एंव विकास की गति बढ़ाने के हेतु तथा संघ के विभिन्न राजकीय प्रयोजनों के लिए उत्तरोत्तर इसके प्रयोग हेतु भारत सरकार द्वारा एक अधिक गहन एवं व्यापक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा और किए जाने वाले उपायों एवं की जाने वाली प्रगति की विस्तृत वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट संसद की दोनों सभाओं के पटल पर रखी जाएगी और सब राज्य सरकारों को भेजी जाएगी।

2. जबकि संविधान की आठवीं अनुसूची में हिंदी के अतिरिक्त भारत की 22 मुख्य भाषाओं का उल्लेख किया गया है और देश की शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि इन भाषाओं के पूर्ण विकास हेतु सामूहिक उपाए किए जाने चाहिए–

यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी के साथ-साथ इन सब भाषाओं के समन्वित विकास हेतु भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के सहयोग से एक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा ताकि वे शीघ्र समृद्ध हो और आधुनिक ज्ञान के संचार का प्रभावी माध्यम बनें।

3. जबकि एकता की भावना के संवर्द्धन तथा देश के विभिन्न भागों में जनता में संचार की सुविधा हेतु यह आवश्यक है कि भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के परामर्श से तैयार किए गए त्रि-भाषा सूत्र को सभी राज्यों में पूर्णत कार्यान्वित करने के लिए प्रभावी किया जाना चाहिए।

यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी तथा अंग्रेजी के अतिरिक्त एक आधुनिक भारतीय भाषा के, दक्षिण भारत की भाषाओं में से किसी एक को तरजीह देते हुए, और अहिंदी भाषी क्षेत्रों में प्रादेशिक भाषाओं एवं अंग्रेजी के साथ-साथ हिंदी के अध्ययन के लिए उस सूत्र के अनुसार प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

4. और जबकि यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि संघ की लोक सेवाओं के विषय में देश के विभिन्न भागों के लोगों के न्यायोचित दावों और हितों का पूर्ण परित्रण किया जाए।

यह सभा संकल्प करती है कि-

(क) कि उन विशेष सेवाओं अथवा पदों को छोड़कर जिनके लिए ऐसी किसी सेवा अथवा पद के कर्त्तव्यों के संतोषजनक निष्पादन हेतु केवल अंग्रेजी अथवा केवल हिंदी अथवा दोनों जैसी कि स्थिति हो, का उच्च स्तर का ज्ञान आवश्यक समझा जाए, संघ सेवाओं अथवा पदों के लिए भर्ती करने हेतु उम्मीदवारों के चयन के समय हिंदी अथवा अंग्रेजी में से किसी एक का ज्ञान अनिवार्यत हो गया।

(ख) कि परीक्षाओं की भावी योजना, प्रक्रिया संबंधी पहलुओं एवं समय के विषय में संघ लोक सेवा आयोग के विचार जानने के पश्चात् अखिल भारतीय एवं उच्चतर केन्द्रीय सेवाओं संबंधी परीक्षाओं के लिए संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित सभी भाषाओं तथा अंग्रेजी को वैकल्पिक माध्यम के रूप में रखने की अनुमति होगी।

राजभाषा समितियाँ

संसदीय राजभाषा समिति

केन्द्रीय राजभाषा कार्यान्यवन समिति

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

संसदीय राजभाषा समिति

केन्द्रीय राजभाषा कार्यान्यवन समिति

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

भारत सरकार के गृह मंत्रालय के अंतर्गत राजभाषा विभाग द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वय समितियों (नराकास) की व्यवस्था पूरे देश के विभिन्न स्थानों पर की गई है।

1. गठन—जहां 10 इस कार्यालय हों, नगर राजभाषा कार्यान्वयन यों का गठन किया जा सकता है। समिति का गठन राजभाषा विभाग के क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालयों से प्राप्त प्रस्तावों के पर भारत सरकार के सचिव(राजभाषा) की से किया जाता है।

2. अध्यक्षता—इन यों की अध्यक्षता के कार्यालयोंध्उपक्रमोंध्बैं के वरिष्ठतम अधिकारियों में किसी के की जाती है। अध्यक्ष को द्वारा नामित किया जाता है। नामित किए जाने से प्रस्तावित अध्यक्ष से समिति की अध्यक्षता प्राप्त की जाती है।

3. सदस्यता—के कार्यालयध्उपक्रमध्बैंक इस के सदस्य होते हैं। उनके वरिष्ठतम अधिकारियों(प्रशासनिक प्रधानों) से यह की जाती है कि वे समिति की बैठकों में नियमित रूप से लें।

4. सदस्य-सचिव—के सचिवालय के समिति के अध्यक्ष अपने कार्यालय के किसी सदस्य कार्यालय से हिंदी उसकी से समिति का सदस्य-सचिव किया जाता है। अध्यक्ष की से समिति के कार्यकलाप सदस्य-सचिव द्वारा किए जाते हैं।

5. बैठकें—इन यों की वर्ष दो बैठकें आयोजित की जाती हैं। प्रत्येक समिति की बैठकें आयोजित करने रखा जाता है, जिसमें प्रत्येक समिति की बैठक एक किया जाता है। इन बैठं के आयोजन संबंधी समिति के के समय दी जाती है निर्धारित महीनों में समिति को अपनी बैठकें करनी होती हैं।

6. प्रतिनिधित्व—इन समितियों की बैठकों में नगर विशेष में स्थित केंद्रीय सरकार के कार्यालयों/उपक्रमों/बैंकों आदि के प्रशासनिक प्रधान भाग लेते हैं। राजभाषा विभाग (मुख्यालय) एवं इसके क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय के अधिकारी भी इन बैठकों में राजभाषा विभाग का प्रतिनिधित्व करते हैं। नगर स्थित केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद की शाखाओं में से किसी एक प्रतिनिधि एवं हिन्दी शिक्षण योजना के किसी एक अधिकारी को भी बैठक में आमन्त्रित किया जाता है।

7. उद्देश्य—के देश भर फैले हुए कार्यालयों/उपक्रमों में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ावा देने राजभाषा के कार्यान्वयन के आ रही कठिनाइयों को ने संयुक्त की आवश्यकता महसूस की गई वे मिल बैठकर सभी कार्यालय/उपक्रम/बैंक आदि कर सकें। फलतः राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के का लिया गया। इन समितियों के गठन का उद्देश्य केंद्रीय सरकार के कार्यालयों/उपक्रमों/बैंकों आदि में राजभाषा नीति के कार्यान्वयन की समीक्षा, इसे बढ़ावा और इसके मार्ग में आई कठिनाइयों को है।

राजभाषा हिन्दी की विकास-यात्रा

स्वतंत्रता पूर्व

1833-86—गुजराती के महान कवि श्री नर्मद (1833-86) ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का विचार रखा।

1872—आर्य समाज के संस्थापक महार्षि दयानंद सरस्वती जी कलकत्ता में केशवचन्द्र सेन से मिले तो उन्होने स्वामी जी को यह सलाह दे डाली कि आप संस्कृत छोड़कर हिन्दी बोलना आरम्भ कर दें तो भारत का असीम कल्याण हो। तभी से स्वामी जी के व्याख्यानों की भाषा हिन्दी हो गयी और शायद इसी कारण स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश की भाषा भी हिन्दी ही रखी।

1873— महेन्द्र भट्टाचार्य द्वारा हिन्दी में पदार्थ विज्ञान (material science) की रचना

1875—सत्यार्थ प्रकाश की रचना यह आर्यसमाज का आधार ग्रन्थ है और इसकी भाषा हिन्दी है।

1877—श्रद्धाराम फिल्लौरी ने भाग्यवती नामक हिन्दी उपन्यास की रचना की।

1893—काशी नागरीप्रचारिणी सभा की स्थापना

1918—मराठी भाषी लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने कांग्रेस अध्यक्ष की हैसियत से घोषित किया कि हिन्दी भारत की राजभाषा होगी।

1918—इंदौर में सम्पन्न आठवें हिन्दी सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए महात्मा गांधी ने कहा था - मेरा यह मत है कि हिन्दी को ही हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा बनने का गौरव प्रदान करें। हिन्दी सब समझते हैं। इसे राष्ट्रभाषा बनाकर हमें अपना कर्त्तव्यपालन करना चाहिए।

1918–महात्मा गांधी द्वारा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना

1930 का दशक–हिन्दी टाइपराइटर का विकास (शैलेन्द्र मेहता)

1935–मद्रास राज्य के मुख्यमंत्री रूप में सी. राजगोपालाचारी ने हिन्दी शिक्षा को अनिवार्य कर दिया।

स्वतंत्रता के बाद

14.9.1949

संविधान सभा ने हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया। इस दिन को अब हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है।

1950

संविधान लागू हुआ। तदनुसार उसमें किए गए भाषाई प्रावधान (अनुच्छेद 120, 210 तथा 343 से 351) लागू हुए।

1952

शिक्षा मंत्रालय द्वारा हिन्दी भाषा का प्रशिक्षण ऐच्छिक तौर पर प्रारम्भ किया गया।

1952

राज्यपालों/उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों तथा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्तियों में अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी भाषा व भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप के अतिरिक्त अंकों के देवनागरी स्वरूप का प्रयोग प्राधिकृत किया गया।

जुलाई, 1955

हिन्दी शिक्षण योजना की स्थापना। केन्द्र सरकार के मंत्रालयों, विभागों, संबद्ध व अधीनस्थ कर्मचारियों को सेवाकालीन प्रशिक्षण।

1955

बी.जी. खेर आयोग का गठन (संविधान के अनुच्छेद 344 (1) के अन्तर्गत)

अक्टूबर, 1955

गृह मंत्रालय के अन्तर्गत हिन्दी शिक्षण योजना प्रारम्भ की गई।

1955

संविधान के अनुच्छेद 343 (2) के परन्तुक द्वारा दी गई शक्तियों का प्रयोग करते हुए संघ के कुछ कार्यों के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिंदी भाषा का प्रयोग किए जाने के आदेश जारी किए गए।

1956

खेर आयोग की रिपोर्ट राष्ट्रपति जी को प्रस्तुत की गई।

1957

खेर आयोग की रिपोर्ट पर विचार हेतु तत्कालीन गृह मंत्री श्री गोविन्द वल्लभ पंत की अध्यक्षता में संसदीय समिति का गठन।

1959

संविधान के अनुच्छेद 344 (4) के अन्तर्गत संसदीय समिति की रिपोर्ट राष्ट्रपति जी को प्रस्तुत की गई।

सितम्बर, 1959

संसदीय समिति की रिपोर्ट पर संसद में बहस। तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू द्वारा आश्वावासन दिया गया कि अंग्रेजी को सह-भाषा के रूप में प्रयोग में लाए जाने हेतु कोई व्यावधान उत्पन्न नहीं किया जाएगा और न ही इसके लिए कोई समय-सीमा ही निर्धारित की जाएगी। भारत की सभी भाषाएँ समान रूप से आदरणीय हैं और ये हमारी राष्ट्रभाषाएँ हैं।

1960

हिन्दी टंकण, हिन्दी आशुलिपि का अनिवार्य प्रशिक्षण आरम्भ किया गया।

1960

संसदीय समिति की रिपोर्ट पर राष्ट्रपति के आदेश जारी किए गए जिनमें हिन्दी शब्दावलियों का निर्माण, संहिताओं व कार्यविधिक साहित्य का हिंदी

अनुवाद, कर्मचारियों को हिंदी का प्रशिक्षण, हिंदी प्रचार, विधेयकों की भाषा, उच्चतम न्यायालय व उच्च न्यायालयों की भाषा आदि मुद्दे हैं।

1963

अनुच्छेद 343(3) के प्रावधान व श्री जवाहर लाल नेहरू के आश्वासन को ध्यान में रखते हुए राजभाषा अधिनियम बनाया गया। इसके अनुसार हिन्दी संघ की राजभाषा व अंग्रेजी सह-राजभाषा के रूप में प्रयोग में लाई गई।

1967

प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में केन्द्रीय हिन्दी समिति का गठन किया गया। यह समिति सरकार की राजभाषा नीति के संबंध में महत्त्वपूर्ण दिशा-निदेश देने वाली सर्वोच्च समिति है। इस समिति में प्रधानमंत्री जी के अलावा नामित केन्द्रीय मंत्री, कुछ राज्यों के मुख्यमंत्री, सांसद तथा हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के विद्वान सदस्य के रूप में शामिल किए जाते हैं।

1967

संसद के दोनों सदनों द्वारा राजभाषा संकल्प पारित किया गया जिसमें हिन्दी के राजकीय प्रयोजनों हेतु उत्तरोत्तर प्रयोग के लिए अधिक गहन और व्यापक कार्यक्रम तैयार करने, प्रगति की समीक्षा के लिए वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट तैयार करने, हिन्दी के साथ-साथ 8वीं अनुसूची की अन्य भाषाओं के समन्वित विकास के लिए कार्यक्रम तैयार करने, त्रिभाषा सूत्र का अपनाये जाने, संघ सेवाओं के लिए भर्ती के समय हिन्दी व अंग्रेजी में से किसी एक के ज्ञान की आवश्यकता अपेक्षित होने तथा संघ लोक सेवा आयोग द्वारा उचित समय पर परीक्षा के लिए संविधान की 8वीं अनुसूची में सम्मिलित सभी भाषाओं तथा अंग्रेजी को वैकल्पिक माध्यम के रूप में रखने की बात कही गई है। (संकल्प 18.8, 1968 को प्रकाशित हुआ)

1967

सिंधी भाषा संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित की गई।

1968

राजभाषा अधिनियम, 1963 में संशोधन किए गए। तदनुसार धारा 3 (4) में यह प्रावधान किया गया कि हिंदी में या अंग्रेजी भाषा में प्रवीण संघ सरकार के कर्मचारी प्रभावी रूप से अपना काम कर सकें तथा केवल इस आधार पर कि वे दोनों ही भाषाओं में प्रवीण नहीं हैं, उनका कोई अहित न हो। धारा 3 (5) के अनुसार संघ के राजकीय प्रयोजनों में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त कर देने के लिए आवश्यक है कि सभी राज्यों के विधान मण्डलों द्वारा (जिनकी राजभाषा हिंदी नहीं है) ऐसे संकल्प पारित किए जाएं तथा उन संकल्पों पर विचार करने के पश्चात् अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त करने के लिए संसद के हरेक सदन द्वारा संकल्प पारित किया जाए।

1968

राजभाषा संकल्प 1968 में किए गए प्रावधान के अनुसार वर्ष 1968-69 से राजभाषा हिन्दी में कार्य करने के लिए विभिन्न मदों के लक्ष्य निर्धारित किए गए तथा इसके लिए वार्षिक कार्यक्रम तैयार किया गया।

1971

केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो का गठन।

1973

केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो के दिल्ली स्थिति मुख्यालय में एक प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना।

1974

तीसरी श्रेणी के नीचे के कर्मचारियों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों के कर्मचारियों तथा कार्य प्रभारित कर्मचारियों को छोड़कर केन्द्र सरकार के कर्मचारियों के साथ-साथ केन्द्र सरकार के स्वामित्व एवं नियंत्रणाधीन निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि के कर्मचारियों व अधिकारियों के लिए हिन्दी भाषा, टंकण एवं आशुलिपि का अनिवार्य प्रशिक्षण।

जून, 1975

राजभाषा से संबंधित संवैधानिक, विधिक उपबंधों के कार्यान्वयन हेतु राजभाषा विभाग का गठन किया गया।

1976

राजभाषा नियम बनाए गए।

1976

संसदीय राजभाषा समिति का गठन। तब से अब तक समिति ने अपनी रिपोर्ट के 8 भाग प्रस्तुत किए हैं, जिनमें से प्रथम 7 पर राष्ट्रपति के आदेश जारी हो गए हैं। आठवें खण्ड में की गई संस्तुतियों पर मंत्रालयों व राज्य सरकारों की टिप्पणी प्राप्त की जा रही है।

1977

श्री अटल बिहारी वाजपेयी, तत्कालीन विदेश मंत्री ने पहली बार संयुक्त राष्ट्र की आम सभा को हिंदी में संबोधित किया।

1981

केन्द्रीय सचिवालय राजभाषा सेवा संवर्ग का गठन किया गया।

1983

केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों, विभागों, सरकारी उपक्रमों, राष्ट्रीयकृत बैंकों में यांत्रिक और इलेक्ट्रानिक उपकरणों द्वारा हिन्दी में कार्य को बढ़ावा देने तथा उपलब्ध द्विभाषी उपकरणों के प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से राजभाषा विभाग में तकनीकी कक्ष की स्थापना की गई।

1985

केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान का गठन कर्मचारियों/अधिकारियों को हिन्दी भाषा, हिन्दी टंकण और हिन्दी आशुलिपि के पूर्णकालिक गहन प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध कराने के लिए किया गया।

1986

कोठारी शिक्षा आयोग की रिपोर्ट। 1968 में पहले ही यह सिफारिश की जा चुकी थी कि भारत में शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाएँ होनी चाहिए। उच्च शिक्षा के माध्यम के संबंध में नई शिक्षा नीति (1986) के कार्यान्वयन - कार्यक्रम में कहा गया -

स्कूल स्तर पर आधुनिक भारतीय भाषाएँ पहले ही शिक्षण माध्यम के रूप में प्रयुक्त हो रही हैं। आवश्यकता इस बात की है कि विश्वविद्यालय के स्तर पर भी इन्हें उत्तरोत्तर माध्यम के रूप में अपना लिया जाए। इसके लिए अपेक्षा यह है कि राज्य सरकारें, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से परामर्श करके, सभी विषयों में और सभी स्तरों पर शिक्षण माध्यम के रूप में उत्तरोत्तर आधुनिक भारतीय भाषाओं को अपनाएं।

1986-87

इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार प्रारम्भ किए गए।

1987

राजभाषा नियम, 1976 में संशोधन किए गए।

1988

विदेश मंत्री के रूप में संयुक्त राष्ट्र की जनरल असेम्बली में तत्कालीन विदेश मंत्री श्री नरसिंह राव जी हिंदी में बोले।

1992

कोंकणी, मणिपुरी व नेपाली भाषाएं संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित की गई।

1999

संघ की राजभाषा हिंदी की स्वर्ण जयंती मनाई गई।

2000

राष्ट्रीय ज्ञान विज्ञान मौलिक पुस्तक लेखन पुरस्कार वर्ष 2001-02 से आरंभ करने की घोषणा की गई जिसमें निम्न पुरस्कार राशियाँ हैं –

(1) प्रथम प्ररस्कार – 100000 रुपये
(2) द्वितीय प्ररस्कार – 75000 रुपये
(3) तृतीय पुरस्कार – 50000 रुपये
(4) 10 सांत्वना पुरस्कार – 100000 रुपये

2003

डॉ. सीता कान्त महापात्र की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया जो संविधान की आठवीं अनुसूची में अन्य भाषाओं को सम्मिलित किए जाने तथा आठवीं अनुसूची में सभी भाषाओं को संघ की राजभाषा घोषित किए जाने की साध्यता परखने पर विचार करेगी। समिति ने 14.6.2004 को अपनी रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत की।

2003

मंत्रिमंडल ने एन.डी.ए. तथा सी.डी.एस. की परीक्षाओं में प्रश्न पत्रों को हिंदी में भी तैयार करने का निर्णय लिया।

2003

कंप्यूटर की सहायता से प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ स्तर की हिंदी स्वयं सीखने के लिए राजभाषा विभाग ने कंप्यूटर प्रोग्राम (लीला हिंदी प्रबोध, लीला हिंदी प्रवीण, लीला हिंदी प्राज्ञ) तैयार करवा कर सर्व साधारण द्वारा उसका निशुल्क प्रयोग के लिए उसे राजभाषा विभाग की वेबसाइट पर उपलब्ध करा दिया है।

2004

बोडो, डोगरी, मैथिली तथा संथाली भाषाओं को संविधान की आठवीं अनुसूची में रखा गया।

2004

केन्द्रीय सरकार की राजभाषा नीति के अनुपालनध्कार्यान्वयन के लिए न्यूनतम हिन्दी पदों के मानक पुनः निर्धारित।

2004

मातृभाषा विकास परिषद् द्वारा दायर एक जनहित याचिका पर उच्चतम न्यायालय ने यह पाया कि वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के गठन का उद्देश्य हिंदी एवं अन्य आधुनिक भाषाओं के लिए तकनीकी शब्दावली में एकरूपता अपनाया जाना है। यह एकरूपता तकनीकी शब्दावली के प्रयोग के लिए आवश्यक है। उच्चतम न्यायालय ने निदेश दिया कि आयोग द्वारा बनाई गई तकनीकी शब्दावली भारत सरकार के अंतर्गत एन.सी.ई.आर.टी तथा इसी प्रकार की अन्य संस्थाओं द्वारा तैयार की जा रही पाठय पुस्तकों में प्रयोग में लाई जाए।

2004

कंप्यूटर की सहायता से तमिल, तेलुगु, मलयालम तथा कन्नड़ भाषाओं के माध्यम से प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ स्तर की हिंदी स्वयं सीखने के लिए कंप्यूटर प्रोग्राम तैयार करवा कर उसके निशुल्क प्रयोग के लिए उसे राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया।

2005

525 हिंदी फोंट, फोंट कोड कनवर्टर, अंग्रेजी-हिंदी शब्दकोश, हिंदी स्पेल चेकर को निशुल्क प्रयोग के लिए वेब साइट पर उपलब्ध करा दिया गया।

2005

'राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान मौलिक पुस्तकलेखन पुरस्कार' का नाम बदल कर 'राजीव गांधी राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान मौलिक पुस्तक लेखन पुरस्कार' कर दिया गया तथा पुरस्कार राशि बढ़ा कर निम्न प्रकार कर दी गई –

प्रथम पुरस्कार - रु0 2 लाख
द्वितीय पुरस्कार - रु0 1.25 लाख
तृतीय पुरस्कार - रु0 0.75 लाख
सांत्वना पुरस्कार (10) - प्रत्येक को 10 हजार रुपए

2005

कंप्यूटर की सहायता से बांगला भाषा के माध्यम से प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ स्तर की हिंदी स्वयं सीखने के लिए प्रोग्राम तैयार करवा कर राजभाषा

विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया गया। मंत्र-राजभाषा अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद सॉफ्टवेयर प्रशासनिक एवं वित्तिय क्षेत्रों के लिए प्रयोग एवं डाउनलोड हेतु राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया।

2006

कंप्यूटर की सहायता से उड़िया, असमी, मणिपुरी तथा मराठी भाषा के माध्यम से प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ स्तर की हिंदी स्वयं सीखने के लिए प्रोग्राम तैयार करवा कर राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया।

मंत्र-राजभाषा अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद सॉफ्टवेयर लघु उद्योग एवं कृषि क्षेत्रों के लिए प्रयोग एवं डाउनलोड हेतु राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया।

2007

कंप्यूटर की सहायता से नेपाली, पंजाबी, कश्मीरी तथा गुजराती भाषा के माध्यम से प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ स्तर की हिंदी स्वयं सीखने के लिए प्रोग्राम तैयार करवा कर राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया।

मंत्र-राजभाषा अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद सॉफ्टवेयर सूचना-प्रौद्योगिकी एवं स्वास्थ्य सुरक्षा क्षेत्रों के लिए प्रयोग एवं डाउनलोड हेतु राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया।

श्रुतलेखन-राजभाषा (हिंदी स्पीच से हिंदी टेक्सट) अंतिम वर्जन जन-प्रयोग के लिए मार्किट में बिक्री के लिए उपलब्ध है।

अप्रैल, 2017

राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने 'संसदीय राजभाषा समिति' की इस सिफारिश को 'स्वीकार' कर लिया कि राष्ट्रपति और ऐसे सभी मंत्रियों और अधिकारियों को हिंदी में ही भाषण देना चाहिए और बयान जारी करने चाहिए, जो हिंदी पढ़ और बोल सकते हों। इस समिति ने हिंदी को और लोकप्रिय बनाने के तरीकों पर 6 साल पहले 117 सिफारिशें दी थीं।

मई, 2018

अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (एआईसीटीई) ने हिन्दी माध्यम से इंजीनियरिंग की शिक्षा की अनुमति दी।

17 जुलाई, 2019

सर्वोच्च न्यायालय ने अपने सभी निर्णयों का हिन्दी या अन्य पाँच भारतीय भाषाओं (असमिया, कन्नड, मराठी, ओडिया एवं तेलुगु) में अनुवाद प्रदान करना आरम्भ किया।

7

हिन्दी की विभिन्न बोलियाँ और उनका साहित्य

हिन्दी की अनेक बोलियाँ (उप-भाषाएँ) हैं, भारत में कुल 18 बोलियाँ हैं, जिनमें अवधी, ब्रजभाषा, कन्नौजी, बुंदेली, बघेली, हड़ौती, भोजपुरी, हरयाणवी, राजस्थानी, छत्तीसगढ़ी, मालवी, नागपुरी, खोरठा, पंचपरगनिया, कुमाउँनी, मगही आदि प्रमुख हैं। इनमें से कुछ में अत्यंत उच्च श्रेणी के साहित्य की रचना हुई है। ऐसी बोलियों में ब्रजभाषा और अवधी प्रमुख हैं। यह बोलियाँ हिन्दी की विविधता हैं और उसकी शक्ति भी। वे हिन्दी की जड़ों को गहरा बनाती हैं। हिन्दी की बोलियाँ और उन बोलियों की उपबोलियाँ हैं, जो न केवल अपने में एक बड़ी परंपरा, इतिहास, सभ्यता को समेटे हुए हैं वरन स्वतंत्रता संग्राम, जनसंघर्ष, वर्तमान के बाजारवाद के खिलाफ भी उसका रचना संसार सचेत है।

मोटे तौर पर हिंद (भारत) की किसी भाषा को 'हिंदी' कहा जा सकता है। अंग्रेजी शासन के पूर्व इसका प्रयोग इसी अर्थ में किया जाता था। पर वर्तमानकाल में सामान्यत: इसका व्यवहार उस विस्तृत भूखंड की भाषा के लिए होता है, जो पश्चिम में जैसलमेर, उत्तर पश्चिम में अंबाला, उत्तर में शिमला से लेकर नेपाल की तराई, पूर्व में भागलपुर, दक्षिण पूर्व में रायपुर तथा दक्षिण-पश्चिम में खंडवा तक फैली हुई है। हिंदी के मुख्य दो भेद हैं - पश्चिमी हिंदी तथा पूर्वी हिंदी।

पश्चिमी और पूर्वी हिन्दी

जैसा ऊपर कहा गया है, अपने सीमित भाषाशास्त्रीय अर्थ में हिंदी के दो उपरूप माने जाते हैं - पश्चिमी हिंदी और पूर्वी हिंदी।

पश्चिमी हिन्दी

पश्चिमी हिंदी का विकास शौरसैनी अपभ्रंश से हुआ है। इसके अंतर्गत पाँच बोलियाँ हैं - खड़ी बोली, हरियाणी, ब्रज, कन्नौजी और बुंदेली। खड़ी बोली अपने मूल रूप में मेरठ, रामपुर, मुरादाबाद, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, बिजनौर, के आसपास बोली जाती है। इसी के आधार पर आधुनिक हिंदी और उर्दू का रूप खड़ा हुआ। बांगरू को जाटू या हरियाणवी भी कहते हैं। यह पंजाब के दक्षिण पूर्व में बोली जाती है। कुछ विद्वानों के अनुसार बांगरू खड़ी बोली का ही एक रूप है, जिसमें पंजाबी और राजस्थानी का मिश्रण है। ब्रजभाषा मथुरा के आस-पास ब्रजमंडल में बोली जाती है। हिंदी साहित्य के मध्ययुग में ब्रजभाषा में उच्च कोटि का काव्य निर्मित हुआ। इसलिए इसे बोली न कहकर आदरपूर्वक भाषा कहा गया। मध्यकाल में यह बोली संपूर्ण हिंदी प्रदेश की साहित्यिक भाषा के रूप में मान्य हो गई थी। पर साहित्यिक ब्रजभाषा में ब्रज के ठेठ शब्दों के साथ अन्य प्रांतों के शब्दों और प्रयोगों का भी ग्रहण है। कन्नौजी गंगा के मध्य दोआब की बोली है। इसके एक ओर ब्रजमंडल है और दूसरी ओर अवधी का क्षेत्र। यह ब्रजभाषा से इतनी मिलती जुलती है कि इसमें रचा गया जो थोड़ा बहुत साहित्य है वह ब्रजभाषा का ही माना जाता है। बुंदेली बुंदेलखंड की उप-भाषा है। बुंदेलखंड में ब्रजभाषा के अच्छे कवि हुए हैं, जिनकी काव्यभाषा पर बुंदेली का प्रभाव है।

पूर्वी हिन्दी

पूर्वी हिंदी की तीन शाखाएँ हैं - अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी। अवधी अर्धमागधी प्राकृत की परंपरा में है। यह अवध में बोली जाती है। इसके दो भेद हैं - पूर्वी अवधी और पश्चिमी अवधी। अवधी को बैसवाड़ी भी कहते हैं। तुलसी के रामचरितमानस में अधिकांशतः पश्चिमी अवधी मिलती हैं और जायसी के पदमावत में पूर्वी अवधी। बघेली बघेलखंड में प्रचलित है। यह अवधी का ही एक दक्षिणी रूप है। छत्तीसगढ़ी पलामू (बिहार) की सीमा से लेकर

दक्षिण में बस्तर तक और पश्चिम में बघेलखंड की सीमा से उड़ीसा की सीमा तक फैले हुए भूभाग की बोली है। इसमें प्राचीन साहित्य नहीं मिलता। वर्तमान काल में कुछ लोक साहित्य रचा गया है।

बिहारी, राजस्थानी बिहारी हिंदी के अंतर्गत मगही, भोजपुरी, आदि बोलियां आती हैं

और पहाड़ी

हिंदी प्रदेश की तीन उप-भाषाएँ हैं - बिहारी, राजस्थानी और पहाड़ी हिंदी।

बिहारी की तीन शाखाएँ हैं - भोजपुरी, मगही और मैथिली। बिहार के एक कस्बे भोजपुर के नाम पर भोजपुरी बोली का नामकरण हुआ। पर भोजपुरी का प्रसार बिहार से अधिक उत्तर प्रदेश में है। बिहार के शाहाबाद, चंपारन और सारन जिले से लेकर गोरखपुर तथा बारस कमिश्नरी तक का क्षेत्र भोजपुरी का है। भोजपुरी पूर्वी हिंदी के अधिक निकट है। हिंदी प्रदेश की बोलियों में भोजपुरी बोलनेवालों की संख्या सबसे अधिक है। इसमें प्राचीन साहित्य तो नहीं मिलता पर ग्रामगीतों के अतिरिक्त वर्तमान काल में कुछ साहित्य रचने का प्रयत्न भी हो रहा है। मगही के केंद्र पटना और गया हैं। इसके लिए कैथी लिपि का व्यवहार होता है। पर आधुनिक मगही साहित्य मुख्यत: देवनागरी लिपि में लिखी जा रही है। मगही का आधुनिक साहित्य बहुत समृद्ध है और इसमें प्राय: सभी विधाओं में रचनाओं का प्रकाशन हुआ है।

मैथिली एक स्वतंत्र भाषा है, जो संस्कृत के करीब होने के कारण हिंदी से मिलती जुलती लगती है। परन्तु, मैथिली हिंदी से अधिक बांग्ला के निकट है।

मैथिली गंगा के उत्तर में दरभंगा के आसपास प्रचलित है। इसकी साहित्यिक परंपरा पुरानी है। विद्यापति के पद प्रसिद्ध ही हैं। मध्ययुग में लिखे मैथिली नाटक भी मिलते हैं। आधुनिक काल में भी मैथिली का साहित्य निर्मित हो रहा है।

मैथिली भाषा भारत और नेपाल के संविधान में राजभाषा के रूप में भी दर्ज है। नेपाल में दूसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा मैथिली है।

राजस्थानी का प्रसार पंजाब के दक्षिण में है। यह पूरे राजपूताने और मध्य प्रदेश के मालवा में बोली जाती है। राजस्थानी का संबंध एक ओर ब्रजभाषा से है और दूसरी ओर गुजराती से। पुरानी राजस्थानी को डिंगल कहते हैं। जिसमें

चारणों का लिखा हिंदी का आरंभिक साहित्य उपलब्ध है। राजस्थानी में गद्य साहित्य की भी पुरानी परंपरा है। राजस्थानी की चार मुख्य बोलियाँ या विभाषाएँ हैं- मेवाती, मालवी, जयपुरी और मारवाड़ी। मारवाड़ी का प्रचलन सबसे अधिक है। राजस्थानी के अंतर्गत कुछ विद्वान् भीली को भी लेते हैं।

पहाड़ी उप–भाषा राजस्थानी से मिलती जुलती हैं। इसका प्रसार हिंदी प्रदेश के उत्तर हिमालय के दक्षिणी भाग में नेपाल से शिमला तक है। इसकी तीन शाखाएँ हैं – पूर्वी, मध्यवर्ती और पश्चिमी। पूर्वी पहाड़ी नेपाल की प्रधान भाषा है, जिसे नेपाली और परबतिया भी कहा जाता है। मध्यवर्ती पहाड़ी कुमायूँ और गढ़वाल में प्रचलित है। इसके दो भेद हैं – कुमाउँनी और गढ़वाली। ये पहाड़ी उप–भाषाएँ नागरी लिपि में लिखी जाती हैं। इनमें पुराना साहित्य नहीं मिलता। आधुनिक काल में कुछ साहित्य लिखा जा रहा है। कुछ विद्वान् पहाड़ी को राजस्थानी के अंतर्गत ही मानते हैं। पश्चिमी पहाड़ी हिमाचल प्रदेश में बोली जाती है। इसकी मुख्य उपबोलियों में मंडियाली, कुल्लवी, चाम्बियाली, क्योँथली, कांगड़ी, सिरमौरी, बघाटी और बिलासपुरी प्रमुख हैं।

प्रयोग-क्षेत्र के अनुसार वर्गीकरण

हिन्दी भाषा का भौगोलिक विस्तार काफी दूर–दूर तक है, जिसे तीन क्षेत्रों में विभक्त किया जा सकता है––

(क) हिन्दी क्षेत्र – हिन्दी क्षेत्र में हिन्दी की मुख्यतः सत्रह बोलियाँ बोली जाती हैं, जिन्हें पाँच बोली वर्गों में इस प्रकार विभक्त कर के रखा जा सकता है- पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, राजस्थानी हिन्दी, पहाडी हिन्दी और बिहारी हिन्दी।

(ख) अन्य भाषा क्षेत्र–इनमें प्रमुख बोलियाँ इस प्रकार हैं- दक्खिनी हिन्दी (गुलबर्गी, बीदरी, बीजापुरी तथा हैदराबादी आदि), बम्बइया हिन्दी, कलकतिया हिन्दी तथा शिलंगी हिन्दी (बाजार–हिन्दी) आदि।

(ग) भारतेतर क्षेत्र – भारत के बाहर भी कई देशों में हिन्दी भाषी लोग काफी बड़ी संख्या में बसे हैं। सीमावर्ती देशों के अलावा यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका, रुस, जापान, चीन तथा समस्त दक्षिण पूर्व व मध्य एशिया में हिन्दी बोलने वालों की बहुत बडी संख्या है। लगभग सभी देशों की राजधानियों के विश्वविद्यालयों में हिन्दी एक विषय के रूप में पढी–पढाई जाती

है। भारत के बाहर हिन्दी की प्रमुख बोलियाँ – ताजुज्बेकी हिन्दी, मारिशसी हिन्दी, फीजी हिन्दी, सूरीनामी हिन्दी आदि हैं।

हिन्दी प्रदेशों की हिन्दी बोलियाँ

पश्चिमी हिंदी

खड़ी बोली–देहरादून, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठप, बिजनौर, रामपुर और मुरादाबाद।

बृजभाषा–आगरा, मथुरा, अलीगढ़, मैनपुरी, एटा, हाथरस, बदायूं, बरेली, धौलपुर।

हरियाणवी–हरियाणा और दिल्ली का देहाती प्रदेश।

बुंदेली–झांसी, जालौन, हमीरपुर, ओरछा, सागर, नृसिंहपुर, सिवनी, होशंगाबादल

कन्नौजी–उत्तर प्रदेश के इटावा, फर्रूखाबाद, शाहजहांपुर, कानपुर, हरदोई और पीलीभीत, जिलों के ग्रामीणांचल में बहुतायत से बोली जाती है।

पूर्वी हिंदी

अवधी–कानपुर, लखनऊ, बाराबंकी, उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, फतेहपुर, अयोध्या, गोंडा, प्रतापगढ़, सुल्तानपुर जिले।

बघेली–रीवा, शहदोल, सतना, मैहर, नागौद।

छत्तीसगढ़ी–बिलासपुर, दुर्ग, रायपुर, रायगढ़, नंदगांव, काकेर, सरगुजा, कोरिया।

राजस्थानी

मारवाड़ी भाषा

जयपुरी

मेवाती

मालवी

पहाड़ी

पूर्वी पहाड़ी, जिसमें नेपाली आती है

मध्यवर्ती पहाड़ी, जिसमें कुमाऊंनी और गढ़वाली आती है।

पश्चिमी पहाड़ी, जिसमें हिमाचल प्रदेश की अनेक बोलियां आती हैं।

बिहारी भाषा

मैथिली
भोजपुरी
मगही
नागपुरी
अंगिका
बज्जिका
खोरठा
पंचपरगनिया
हिंदीतर प्रदेशों की हिंदी बोलियाँ
बंबइया हिंदी
कलकतिया हिंदी
दक्खिनी
विदेशों में बोली जाने वाली हिंदी बोलियाँ
उजबेकिस्तान
मारिशस
फिजी
सूरीनाम
मध्यपूर्व
ट्रिनिदाद और टोबैगो
दक्षिण अफ्रीका

8

हिन्दी-प्रसार आन्दोलन

उन्नीसवीं शताब्दी में भारत में भावनात्मक संदर्भ की क्रांति शुरू हुई। उस समय देश की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति अत्यन्त दयनीय हो चुकी थी। देश में होने वाले आन्दोलनों से जन-जीवन प्रभावित हो रहा था। भारत की राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए एक भाषा की आवश्यकता सामने आई। इस आवश्यकता के संदर्भ में डॉ. अम्बा शंकर नागर का मन्तव्य उद्धरणीय है-

"सन् 1857 का आन्दोलन दासता के विरूद्ध स्वतंत्रता का पहला आन्दोलन था। यह आन्दोलन यद्यपि संगठन और एकता के अभाव के कारण असफल रहा, पर इसने भारतवासियों के हृदय में स्वतंत्रता की उत्कट अभिलाषा उत्पन्न कर दी। आगे चलकर जब भारत के विभिन्न प्रांतों में स्वतंत्रता के लिए संगठित प्रयत्न आरंभ हुए तो यह स्पष्ट हो गया कि बिना एक समान्य भाषा के देश में संगठन होना असंभव है।"

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में समाजिक, धार्मिक ही नहीं, राजनीतिक आंदोलनों में हिंदी मुख्य भाषा सिद्ध हुई इस प्रकार हिन्दी को व्यापक जनाधार मिला। राष्ट्रीय भावना जगाने हेतु हिन्दी को संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग किया गया। विभिन्न व्यक्तियों और संस्थानों द्वारा हिंदी-प्रयोग हेतु आन्दोलन के रूप में कार्य किया गया। बिहार ने सबसे पहले अपनाई थी। हिंदी को, बनाई थी राज्य की अधिकारिक भाषा बिहार देश का पहला ऐसा राज्य है, जिसने सबसे पहले हिंदी

को अपनी अधिकारिक भाषा माना है। जिसके प्रमुख क्षेत्र है। दक्षिण बिहार हिंदी प्रदेश से होने के बावजूद बिहारी एक टोन बन गया है। बोलने के क्रम में किसी भी बिहारी से र और ड़ का उच्चारण करवा लीजिए, स और श का उच्चारण करवा लीजिए। बोलने के क्रम में एक बार भी बिहारी टोन में नहीं बोले तो क्या बोले।

प्रमुख व्यक्तियों के योगदान

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक

लोकमान्य तिलक प्रारंभ में परम विनम्र नेता थे। परिस्थितियों ने उन्हें ओजस्वी नेता बना दिया। "स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है" का नारा देने वाले तिलक 'स्वदेशी' के प्रबल समर्थक थे। उनकी मान्यता थी कि हिन्दी ही एकमात्र ऐसी भाषा है, जो राष्ट्रभाषा की पदाधिकारी है। उन्होंने हिंदी विषय में कहा था–968व8

"हिन्दी राष्ट्रभाषा बन सकती है मेरी समझ में हिन्दी भारत की सामान्य भाषा होनी चाहिए, यानी समस्त हिन्दुस्तान में बोली जाने वाली भाषा होनी चाहिए।"

लोकमान्य तिलक देवनागरी को 'राष्ट्रलिपि' और हिंदी को 'राष्ट्रभाषा' मानते थे। उन्होंने नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के दिसम्बर, 1905 के अधिवेशन में कहा था–

"भारतवर्ष के लिए एक राष्ट्रभाषा की स्थापना करना है, क्योंकि सबके लिए समान भाषा राष्ट्रीयता का महत्त्वपूर्ण अंग है। समान भाषा के द्वारा हम अपने विचार दूसरों पर प्रकट करते हैं। अतएव यदि आप किसी राष्ट्र के लोगों को एक–दूसरे के निकट लाना चाहें तो सबके लिए समान भाषा से बढ़कर सशक्त अन्य कोई बल नहीं है।"

उन्होंने जनसामान्य तक अपने विचार पहुँचाने के लिए 'हिन्दी केसरी' साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन किया। हिन्दी का यह पत्र पर्याप्त लोकप्रिय हुआ। लोकमान्य तिलक जीवन भर हिंन्दी के प्रचार–प्रसार में लगे हुए थे। उन्होंने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में अपनाने के लिए बार–बार आग्रह किया था।

निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि उन्होंने अंग्रेजी में भाषण देना छोड़कर हिन्दी सीखी और हिन्दी के प्रबल समर्थक बन गए थे, यह उनका हिन्दी और देश–प्रेम ही था।

लाला लाजपतराय

पंजाब केसरी लाला लाजपतराय प्रबल आर्य समाजी देशभक्त थे। वे महान-प्रेमी और ओजस्वी वक्ता थे। स्वदेशी वस्तुओं के समर्थक और विदेशी वस्तुओं के विरोधी थे। उन्होंने अंग्रेजी और पंजाबी पत्र के साथ 'वन्देमातरम्' दैनिक उर्दू पत्र का प्रकाशन किया। उन दिनों पंजाब में हिन्दी-उर्दू का विवाद चल रहा था। पंजाब में हिन्दी प्रचार-प्रसार में लाला लाजपतराय की बलवती भूमिका थी। उन्होंने सन् 1911 में पंजाब शिक्षा संघ की स्थापना की। शिक्षा में हिन्दी को समुचित स्थान दिलाने का सराहनीय प्रयास किया। सन् 1886 में लाहौर में दयानन्द ऐंग्लो-वैदिक कॉलेज की स्थापना की गई। इससे हिन्दी प्रसार का सुदृढ़ आधार मिला। इस कॉलेज में सभी विद्यार्थियों को हिन्दी पढ़ने की अनिवार्यता थी। लाला लाजपतराय के प्रयास से पंजाब विश्वविद्यालय में हिन्दी को सम्मानीय स्थान मिला। उन्हीं का प्रयास था कि पंजाब विश्वविद्यालय में रत्न और प्रभाकर के माध्यम से हिन्दी को पाठ्यक्रम में स्थान मिला। हरियाणा के विभिन्न विश्वविद्यालयों में इन परिक्षाओं का सूघ्त्रपात भी वहीं से हुआ।

लाला लाजपतराय विशेष उग्र और क्रान्तिकारी नेता थे। उनके द्वारा हिन्दी में भाषण देने से जनसामान्य विशेष रूप से आन्दोलित होते थे। वे हिन्दी भाषा के माध्यम से भारत को एक सूघ्त्र में बाँधना चाहते थे। निश्चय ही लाला लातपतराय महान हिन्दी-प्रेमी और हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रबल समर्थक थे।

पं. मदन मोहन मालवीय

मालवीय जी महान् राष्ट्रीय नेता थे। उन्हें तीन बार हिन्दु महासभा के अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित किया गया था। वे सन् 1884 से राष्ट्रीय कार्यों में समर्पित होकर लग गए थे। वे अपने क्रियाकलापों में हिन्दी का प्रयोग करते हुए औरों में भी हिन्दी-प्रेम जगाते रहे हैं। सन् 1886 के अधिवेशन में मालवीय जी के व्याख्यान से प्रभावित होकर काला कांकर के राजा ने इन्हें 'हिन्दुस्तान' दैनिक पत्र का संपादक बनाया था। यहीं से उनकी हिन्दी-सेवा का अनुप्रेरक रूप सामने आया है। उन्होंने 1907 ई. में साप्ताहिक हिन्दी 'अभ्युदय' का प्रारम्भ किया। यह पत्र सन् 1915 में दैनिक समाचार-पत्र बना। मालवीय जी ने हिन्दी प्रचार-प्रसार को गति देने के लिए सन् 1910 में प्रयोग (इलाहाबाद) से 'मर्यादा' हिंदी मासिक पत्रिका और 20 जुलाई, 1933 'सनातन धर्म' हिंदी पत्र का प्रकाशन

शुरू किया है। मालवीय जी हिन्दी के महान् प्रेमी थे। इनकी प्रेरणा से 'भारत', 'हिन्दुस्तान' और 'विश्वबन्धु' जैसे चर्चित पत्रों का प्रकाशन शुरू हुआ है।

मालवीय जी के मन में हिन्दी के लिए विशेष आदर भाव था, इसलिए उन्होंने शिक्षा में हिन्दी की अनिवार्यता पर बल दिया। सन् 1917 में बनारस हिंदु विश्वविद्यालय की स्थापना की दृष्टि से हुई है। यहाँ के सभी विद्यार्थियों के लिए हिन्दी शिक्षा अनिवार्य थी। उन्होंने हिन्दी भाषा के विषय में स्पष्ट रूप से कहा था–

"राष्ट्रीय शिक्षा अपनी उत्तमता के उच्च शिखर पर तब तक नहीं पहुंच सकती, जब तक जनता की मातृभाषा अपने उचित स्थान पर शिक्षा के माध्यम तथा सर्वसाधारण के व्यवहार के रूप में स्थापित न की जाए।" उन्होंने उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में हिन्दी के लिए प्रबल संघर्ष किया। राजा शिवप्रसाद सितारे-हिंद के साथ न्यायालय में हिन्दी और देवनागरी के लिए जोरदार संघर्ष किया। उन्होंने कहा था कि जनता को न्याय दिलाने के लिए न्यायालय की भाषा हिन्दी ही होनी चाहिए। न्यायालयों में हिन्दी को स्थान दिलाने का श्रेय मालवीय जी को है।

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की स्थापना सन् 1893 में हुई। इसकी स्थापना में मालवीय जी की विशेष भूमिका रही है। हिन्दी प्रचार के अग्रणी नेता मालवीय जी 10 अक्तूबर, 1910 को सम्पन्न हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन के अध्यक्ष थे। उनकी प्रेरणा से देश में हिन्दी के प्रति प्रबल अनुराग और राष्ट्रीयता का भाव जगा है।

महात्मा गांधी

स्वतंत्रता आन्दोलन में महात्मा गांधी सजग, साहसी और आदर्श नेता के रूप में सामने आये। भारतीय आदर्शों को समाज में पल्लवित कराने में गांधी जी ने अपने जीवन का हर पल लगाया। दक्षिण अफ्रीका से लौटने के बाद हिन्दी और हिन्दुस्तान को जगाने में लग गये। सन् 1917 में गुजरात प्रदेश के भड़ौच गुजरात शिक्षा परिषद् के अधिवेशन में उन्होंने अंग्रेजी को राष्ट्रभाषा बनाने के विरोध किया और हिन्दी के महत्त्व पर मुक्तकंठ से चर्चा की थी–

"राष्ट्र की भाषा अंग्रेजी को राष्ट्रभाषा बनाना देश में 'ऐसपेरेण्टों' को दाखिल करना है। अंग्रेजी को राष्ट्रीय भाषा बनाने की कल्पना हमारी निर्बलता की निशानी है।"

महात्मा गांधी ने सन् 1918 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर के अधिवेशन में हिन्दी-प्रेम प्रकट करते हुए आह्वान किया था–

"आप हिन्दी को भारत का राष्ट्रभाषा बनाने का गौरव प्रदान करें। हिन्दी सब समझते हैं। इसे राष्ट्रभाषा बनाकर हमें अपना कर्त्तव्य-पालन करना चाहिए।"

भारत वर्ष में शिक्षा के माध्यम पर दो-टूक चर्चा करते हए गांधी जी ने 2 सितम्बर, 1921 को कहा था-

"अगर मेरे हाथों में तानाशाही सत्ता हो, तो मैं आज से ही विदेशी माध्यम के जरिए हमारे लड़के-लड़कियों की शिक्षा बन्द कर दूँ और सारे शिक्षकों और प्रोफेसरों से यह माध्यम तुरन्त बदलवा दूँ।"

गांधी जी की दृष्टि में हिन्दी ही भारत की संपर्क भाषा के रूप में आदर्श भूमिका निभा सकती है। उन्होंने विभिन्न व्यक्तियों, पत्र-पत्रिकाओं और संस्थाओं को हिन्दी-प्रयोग की अनूठी प्रेरणा दी है। वे हिन्दी को राष्ट्रीय एकता, स्वाधीनता की प्राप्ति और सांस्कृतिक उत्कर्ष मानते थे। उन्होंने हिन्दी को साधन और साध्य दोनों रूपों में अपनाया था। महात्मा गांधी के हिन्दी-प्रेम और प्रचार-प्रसार के विषय में डॉ. **रामविलास शर्मा** का कथन विशेष रूप में उल्लेखनीय है-

"दक्षिण भारत में गांधी जी और उनके अनुयायियों-सहयोगियों ने जितना हिन्दी प्रचार किया, उतना और किसी नेता, राजनीतिक पार्टी या सांस्कृतिक संस्था ने नहीं किया।"

गांधी जी हिन्दी और भारतीय भाषाओं के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने हिन्दी प्रचार-प्रसार को गति देने के लिए विभिन्न संस्थाओं का विशेष सहयोग लिया था। गांधी सेवा संघ, चर्खा संघ, हरिजन सेवक संघर्ष आदि का सारा कामकाज हिन्दी में होता रहा है। निश्चय ही हिन्दी-प्रसार के प्रयत्न में गांधी जी की भूमिका अग्रगण्य रही है।

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन

राष्ट्रभाषा हिन्दी को संघ की राजभाषा बनाने का जो प्रयास राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन ने किया है, वह सदा याद किया जाता रहेगा। पं. मदनमोहन मालवीय के दर्शाये गए मार्ग पर चल कर इन्होंने हिन्दी की अनुपमेय सेवा की है। इनके द्वारा हिन्दी साहित्य सम्मेलन के माध्यम से की गई हिन्दी की सेवा अनपमेय रही है। टण्डन जी हिन्दी साहित्य सम्मेलन के संस्थापकों में से थे। इन्हीं की प्रेरणा से महात्मा गांधी जी भी हिन्दी साहित्य सम्मेलन से जुड़े हैं। ये लाला

लाजपतराय के साथ मिलकर भी हिन्दी के प्रसार में लगे रहे। लाला जी की मृत्यु के पश्चात् टण्डन जी 'लोकसेवा मण्डल' के सभापति बन कर हिन्दी प्रसार में लगे रहे। इसका कार्यालय लाहौर में था। इसलिए टण्डन जी ने वहाँ की संस्थाओं के माध्यम से हिन्दी का अनुप्रेरम प्रसार किया। ये हिन्दी के प्रबल समर्थक थे, गांधी जी हिन्दुस्तानी के समर्थक थे।

टण्डन जी की प्रेरणा से हिन्दी साहित्य सम्मेलन आज भी हिन्दी के प्रचार–प्रसार में लगा है। यह टण्डन जी की ही देन है।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद महात्मा गांधी और हिन्दी के परम् भक्त डॉ. राजेन्द्र प्रसाद अखिल भारतीय काँग्रेस के सम्माननीय सदस्य थे। विभिन्न हिन्दी सम्मेलनों की अध्यक्षता और सहभागिता करते हुए इनका सहज और निकट संबंध महात्मा गांधी, मदनमोहन मालवीय और राजर्षि पुरूषोत्तमदास टण्डन से हुआ। देश की सभी हिन्दी संस्थाओं से इनका गहरा सम्बन्ध था और ये पूरी रूचि और पूरे उत्साह से भाग लेते रहे हैं। वे हिन्दी के प्रयोग हेतु सबको प्रेरित करते रहे हैं। उनका हिन्दी के संदर्भ का विचार अनुकरणीय है–

"मैं हिन्दी के प्रचार, राष्ट्रभाषा के प्रचार को राष्ट्रीयता का मुख्य अंग मानता हूँ। मैं चाहता हूँ कि यह भाषा ऐसी हो, जिसमें हमारे विचार आसानी से साफ–साफ स्पष्टतापूर्वक व्यक्त हो सकें। राष्ट्रभाषा ऐसी होनी चाहिए, जिस केवल एक जगह के ही लोग न समझें, बल्कि उसे देश के सभी प्रान्तों में सुगमता से पहुंचा सकें।"

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद पर महात्मा गांधी का विशेष प्रभाव पड़ा है। हिन्दी के प्रचार–प्रसार में इनकी भूमिका विशेष उल्लेखनीय रही है। उन्होंने भारतीय भाषाओं को महत्त्व देते हुए कहा है–

"मेरा दृढ़ मत है कि कोई भी शख्स अपनी मातृभाषा के द्वारा ही तरक्की कर सकता है। देश भर को बाँधने के लिए, भारत के भिन्न–भिन्न हिस्से एक–दूसरे से संबंधित रहें, इसके लिए हिन्दी की जरूरत है।"

निश्चय ही डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की हिन्दी–सेवा सदा ही याद की जाएगी। भारतीय संविधान सभा के अध्यक्ष के रूप में हिन्दी को सम्मानीय स्थान दिलाने का श्रेय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद को है। राष्ट्रपति के रूप में हिन्दी और भारतीय भाषाओं को सम्मानजनक स्थान दिलाने का सराहनीय प्रयास किया।

काका कालेलकर

हिन्दी के प्रचार–प्रसार में अहिंदी भाषियों का नाम गौरव से लिया जाता है। ऐसे हिन्दी–प्रेमियों में काका कालेलकर का नाम विशेष श्रद्धा से लिया जाता है। इन्होंने हिन्दी के प्रसार में समर्पित होकर कार्य किया हैं उन्होंने राष्ट्रभाषा प्रचार समिति से जुड़कर और गुजरात में रहकर हिन्दी–प्रसार को नई दिशा प्रदान की है। उन्होंने कभी अंग्रेजी का विरोध नहीं किया, किन्तु प्रादेशिक भाषाओं और हिन्दुस्तानी के प्रबल हिमायती थे। यह निर्विवाद सत्य है कि काका कालेलकर 'हिन्दुस्तानी' के समर्थक थे। उस समय हिन्दुस्तानी का अर्थ था – हिंदी और उर्दू का मिश्रित रूप। अंग्रेजों के शासन और अंग्रेजी के शासन और अंग्रेजी के प्रभाव में 'हिन्दुस्तान' के प्रसार से हिंदी को ही लाभ हुआ है। इससे जन सामान्य में हिंदी के प्रति अनुराग विकसित हुआ है। गांधी जी के अनुयायी काका कालेलकर का नाम हिंदी–आंदोलन के संदर्भ में सदा याद किया जाएगा।

सेठ गोविन्ददास

हिंदी के प्रसार के साथ इसे राजभाषा के प्रतिष्ठित पद पर सुशोभित करवाने में सेठ गोविन्ददास की अविस्मरणीय भूमिका रही है। ये उच्चकोटि के साहित्यकार हैं। आपकी नाट्यकृतियों से हिंदी साहित्य मोहक रूप में समृद्ध हुआ है। उन्होंने जबलपुर से शारदा, लोकमत तथा जयहिन्द पत्रों की शुरूआत कर जन–मन में हिंदी के प्रति प्रेम जगाने और साहित्यिक परिवेश बनाने का अनुप्रेरक प्रयास किया है।

उन्होंने सवतंत्रता आन्दोलन में बढ़–चढ़कर भाग लिया और हिंदी के लिए सतत प्रयास किया। भारतीय संविधान सभा में हिंदी और हिन्दुस्तानी को लेकर उठे विवाद को शांत करने में सेठ गोविन्ददास का विशेष महत्त्व रहा है। देश के मान्य सांसद और हिंदी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष रूप में हिंदी के लिए जो प्रेरक कार्य आपने किया है, वह विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

हिंदी प्रसार के आन्दोलनों में हिंदी–प्रेमियों की लम्बी नामावली है। जिनके सतत प्रयास से देश में राष्ट्रीयता का भाव विकसित हुआ, देश स्वतंत्र हुआ और हिंदी को सम्मानजनक स्थान मिला। इनमें स्वामी दयानन्द, श्रद्धानन्द, विनोबा भावे आदि के नाम श्रद्धा से लेने योग्य हैं।

प्रमुख संस्थाओं का योगदान

भारतवर्ष में स्वाधीनता संग्राम के साथ हिंदी का आन्दोलन भी चलाया जा रहा था। वास्तव में हिंदी का यह आन्दोलन अंग्रेजी के विरोध में किया गया था। स्वतंत्रता आन्दोलन के समय हिंदी या हिन्दुस्तानी ही देश की संपर्क भाषा थी। प्रत्येक आन्दोलनकारी 'वन्देमातरम्' या 'जिन्दाबाद' के नारे लगाता था। इस प्रकार भारत देश की राष्ट्रभाषा तो हिंदी ही थी। हिंदी को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करने का आन्दोलन चलाया गया है। इस आन्दोलन की सफलता पर ही 14 सितम्बर, 1949 को हिंदी राजभाषा पद पर प्रतिष्ठित किया गया है। इस आन्दोलन से हिंदी का सुन्दर परिवेश बना है, इसलिए इस आन्दोलन को 'राष्ट्रभाषा हिंदी' या 'राजभाषा हिंदी' से जोड़ सकते हैं।

हिंदी–प्रसार आंदोलन में धर्मगुरुओं, महात्माओं, राजनेताओं और हिंदी–प्रेमियों के साथ अनेक संस्थाओं की भी सराहनीय भूमिका रही हैं भारत धर्मप्रधान देश है। इसलिए हिंदी–प्रसार आन्दोलन में साहित्यिक संस्थाओं के साथ धार्मिक–सामाजिक संस्थाओं का विशेष योगदान रहा है।

धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाएँ

उन्नीसवीं शताब्दी में अंग्रेजी शासन की आँच में भारतवासी तप रहे थे। ईसाई पादरियों को ईसाई धर्म–प्रचार के लिए छूट मिल चुकी थी। उनके द्वारा हिन्दु धर्म को हेय दृष्टि से देखा जाता और निन्दा की जाती थी। भारतीयों को लालच देकर धर्म–परिवर्तन कराया जाता रहा है। यह सच है कि उस समय तक भारत में जाति–पाँति, छूआ–छूत, पर्दा–प्रथा, वाल–विवाह और अनमेल विवाह आदि विकृतियाँ फैल चुकी थीं। विवश और निरीह हिन्दु विजातीय धर्म स्वीकार कर रहे थे। इस विषम क्रियाकलाप की प्रतिक्रिया पर विविध सामाजिक और धार्मिक आन्दोलनों का सूघ्त्रपात हुआ है। एक ओर सामाजिक और धार्मिक विकृतियों को रोकने का प्रयास शुरू हुआ, तो नैतिक मूल्यों को अनुकूलन आधार मिला। इस दिशा में ब्रह्म समाज, आर्य समाज, सनातन धर्म सभा, प्रार्थना सभा, थियोसोफिकल सोसाइटी आदि संस्थाओं की भूमिका से समाज में आशा की किरण जगमगाई है। इन संस्थाओं के द्वारा राष्ट्रीय भाव जगाने के लिए हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में अपनाया गया।

ब्रह्म समाज

भारतीय आदर्श और संस्कृति के पुजारी राजा राममोहन राय ने सन् 1828 में कलकत्ते में 'ब्रह्म समाज' की स्थापना की। उन्होंने जब ईसाई धर्म-प्रचार से भारतीयों की मानसिकता पर पड़ने वाले प्रभाव को देखा और वे धर्म-परिवर्तन की प्रक्रिया से आन्दोलित हुए तब उन्होंने पुनर्जागरण के लिए 'ब्रह्म समाज' को चिन्तन का केन्द्र बनाया।

देश में राष्ट्रीय, सामाजिक और धार्मिक चेतना जगाने में ब्रह्म समाज की अनूठी भूमिका रही है। ब्रह्म समाज के संस्थापक राजा राममोहन राय ने युगीन संदर्भ में आधुनिक विचार-चिन्तन को स्वीकार किया। उनके व्यक्तित्त्व में पूर्व और पश्चिम का अनुपम समन्वय था। वे अंग्रेजी को एक महत्त्वपूर्ण भाषा के रूप में सम्मान देते थे, किन्तु राष्ट्रीय संदर्भ में हिंदी के सबल समर्थक थे। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा था कि भारतवर्ष में राष्ट्रीयता के भाव से सम्पन्न अखिल भारतीय भाषा बनने की क्षमता मात्रा हिंदी में है। उनकी विद्वता और राष्ट्रीयता का स्पष्ट बोध इससे होता है कि उन्होंने 'बंगदूत' नामक पत्र कलकत्ता से प्रकाशित किया। इसके पत्र में हिंदी, बंगला, अंग्रेजी और फारसी के पृष्ठ हुआ करते थे। वे स्वयं हिंदी में लिखते तथा हिंदी में लिखने के लिए दूसरों को भी प्रोत्साहित करते रहते थे। अहिंदी भाषा क्षेत्र बंगाल में 'ब्रह्म समाज' की भूमिका विशेष सराहनीय रही है। समाज-सुधार और हिंदी-प्रचार में अनेक विद्वान नेता-तन-मन से लग गए थे। इस संदर्भ में महर्षि देवेन्द्र नाथ, केशव चन्द्र सेन, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर और नवीन चन्द्र राय के नाम श्रद्धा से लेते हैं। इस समाज द्वारा अधिकांश पुस्तक हिंदी में प्रकाशित की गई। इस संस्था के सभी सदस्यों सेहिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में अपनाने का आह्वान किया गया। नवीन चन्द्र राय ने पंजाब पहुँचकर 1867 में 'ज्ञानप्रदायिनी' पत्रिका निकाल कर हिंदी-आन्दोलन को गति दी। भूदेव मुखर्जी ने बिहार की शिक्षा में हिंदी को प्रतिष्ठित किया और वहाँ के न्यायालयों में हिंदी और नागरी लिपि के प्रयोग का मार्ग खोला। उन्होंने अपनी पुस्तक 'आचार-प्रबन्ध' में हिंदी को सर्व उपयोगी गुण सम्पन्न देश की संपर्क भाषा के रूप में अपनाने का आह्वान किया।

केशव चन्द्र सेन की प्रेरणा से स्वामी दयानन्द ने हिंदी में व्याख्यान देना शुरू किया। उन्होंने 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना हिंदी में की। सेन ने सन् 1875 में 'सुलभ समाचार' निकालकर उस आन्दोलन को अधिक मुखर रूप प्रदान

किया। उनकी मान्यता थी कि हिंदी देश की सर्वाधिक प्रचलित भाषा है, इसलिए यह भाषा ही राष्ट्रीय एकता का आधार बन सकती है। हिंदी-प्रसार में 'ब्रह्म समाज' की भूमिका सर्वोपरि है।

आर्य समाज

भारतवर्ष के सामाजिक और धार्मिक आन्दोलनों में आर्य समाज का स्थान सर्वोपरि है। आर्य समाज की स्थापना 1875 ई. में, बम्बई में स्वामी दयानन्द द्वारा समाजोत्थान के लिए की गई थी। आर्य समाज द्वारा पूरे देश में स्वराज, धर्म और हिंदी भाषा के लिए आन्दोलन किया गया। आर्य समाज के आन्दोलनकारी हिंदी को 'आर्यभाषा' नाम से संबोधित कर अपना सारा कार्य इसमें ही करते थे। आर्य समाज के 28 नियमों में पाँचवां नियम हिंदी पढ़ना था। आर्य समाज के बढ़ते कदम लाहौर पहुँचे और 24 जनवरी, 1877 को लाहौर में आर्य समाज की स्थापना हुई। आर्य समाज का सत्संग और सम्मेलन हिंदी में ही होता था। इसलिए हिंदी-प्रसार को सुन्दर आधार मिला। आर्य समाज द्वारा गुरूकुलों, कन्या-पाठशालाओं और महिला-विद्यालयों की स्थापना की, जिनमें हिंदी की अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था थी। गुरूकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय में सर्वप्रथम विज्ञान की शिक्षा हिंदी में देने की सफल व्यवस्था की गई। इस विषय में श्री इन्द्रविद्यावाचस्पति का कथन उद्धरणीय है, "भारत में पहला शिक्षणालय, जिसमें राष्ट्रभाषा के माध्यम द्वारा समपूर्ण ज्ञान की शिक्षा का सफल परीक्षण किया गया, गुरूकुल काँगड़ी था।"

आर्य समाज के द्वारा सामाजिक और सांस्कृतिक उत्कर्ष के लिए हिंदी में अनेक साप्ताहिक और मासिक पत्रिकाएँ प्रकाशित की गई। भारत की जनता स्वामी दयानन्द के विचार पढ़ना चाहती थी। इन पत्र-पत्रिकाओं में ऐसे विचार प्रकाशन से हिंदी पर्याप्त लोकप्रिय बनी। स्वामी जी पहले संस्कृत में व्याख्यान देते थे, किन्तु कलकत्ता के ब्रह्म समाज के नेता केशव सेन के आग्रह पर उन्होंने हिंदी को अपनाया है। इस प्रकार हिंदी-प्रसार को लोकप्रिय आधार मिला है। स्वामी जी के परम सहयोगी इन्द्रविद्यावाचस्पति ने स्वामी जी के हिंदी-प्रेम के महत्त्व के विषय में लिखा है-

"महर्षि ने लोक-भाषा को उपदेश का साधन बनाकर न केवल अपने मिशन को लोकप्रिय और व्यापक बना दिया। भविष्य में राष्ट्रभाषा बनाने वाली आर्य को पुष्टि देकर राष्ट्र के स्वाधीनता-भवन की दृढ़ बुनियाद भी रख दी।"

गुजराती भाषा-भाषा स्वामी जी के हिंदी-प्रेम से उनके अनुयायियों में अनुकरणीय हिंदी प्रेम जगा। श्री राम गोपाल के शब्दों में, ''उनके अनुयायियों के धर्म-प्रचार से जो अधिक उत्तम चीज राष्ट्रीय जीवन को प्राप्त हुई, वह थी राष्ट्रभाषा का प्रचार।'' आर्य समाज के माध्यम से हिंदी का प्रचार भारत से बाहर मॉरिशस, फिजी, गयाना, सूरीनाम, ट्रिनीडाड-टुबैगो, युगांडा और लंदन में हुआ।

आर्य समाज ने जैसा प्रेरक कार्य सामाजिक, धार्मिक क्षेत्रों में किया, इसी प्रकार हिंदी-प्रसार में सर्वोतम कार्य किया।

सनातन धर्म सभा

ब्रह्म समाज और आर्य समाज के द्वारा मूर्तिपूजा और बहुदेवतावाद के प्रबल विरोध की प्रतिक्रिया में सन् 1973 में 'सनातन धर्म-रक्षिणी सभा' की स्थापना हरिद्वार और दिल्ली में की। सन् 1900 में पं. मदन मोहन मालवीय आदि ने सभा को व्यवस्थित रूप प्रदान किया। सभा का मुख्य उद्देश्य था - हिन्दु धर्म की स्मृतियों और पुराण आदि का शास्त्रों के आधार पर सुधार कार्य। सनातन धर्म की हजारों शाखाएँ भारत वर्ष के विभिन्न प्रान्तों में खुली। इस सभा का अधिकांश कार्य संस्कृत और हिंदी-प्रसार को बल मिला।

सनातन धर्म सभा के माध्यम से देश के विभिन्न प्रदेशों में शिक्षण संस्थाएँ शुरू हो गई। इनमें हिन्दी को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया। उत्तर भारत क्षेत्र में इस को आशातीत सफलता मिली। पं. मदन मोहन मालवीय के प्रिय शिष्य गास्वामी गणेश दत्त इस सभा के कर्णधार थे। इनका जन्म पंजाब के लायलपुर (पाकिस्तान) में हुआ था। उन्होंने सर्वप्रथम लायलपुर में एक गुरूकुल की स्थापना की। इसमें संस्कृत-हिंदी अध्ययन-अध्यापन व्यवस्था थी। इसके पश्चात् सैंकड़ों संस्थाएँ खुली। इससे पंजाब में हिंदी का व्यापक प्रचार हुआ। गोस्वामी जी ने सन् 1940 में 'विश्वबन्धु' दैनिक समाचार-पत्र का श्रीगणेश किया। भारत-विभाजन के बाद इन्होंने अपना कार्यक्षेत्र हरिद्वार बनाया। सन् 1947 में दिल्ली में 'अमर भारत' हिंदी दैनिक का प्रकाशन किया।

गोस्वामी गणेश दत्त के साथ हिंदी-प्रसार में योगदान देने वालों में श्रद्धाराम फिल्लौरी का नाम विशेष आदर से लिया जाता है। सनातन धर्म सभा के सतत प्रयास से भारत में मुख्यत: उत्तर भारत में हिंदी जन-मानस की भाषा बनी।

प्रार्थना समाज

भारत वर्ष में सामाजिक, धार्मिक और शिक्षा में सुधार के लिए महाराष्ट्र में 'परमहंस सभा' की स्थापना सन् 1849 में हुई। ब्रह्म समाज के नेता श्री केशव चन्द्र सेन के बम्बई आगमन पर सन् 1867 में इस सभा को नया रूप देकर 'प्रार्थना समाज' के आधार पर प्रभावी कार्य शुरू किया गया। इस संस्था द्वारा समाज में व्याप्त जाति-पाँति, अछूत और नारी-समस्याओं को दूर करने का सतत् प्रयास किया गया। इस समाज का अधिकांश कार्य हिंदी में किया जाता था। साप्ताहिक प्रवचनों हिंदी-प्रयोग से महाराष्ट्र में हिंदी का प्रेरक परिवेश बना है।

इस समाज के सक्रिय नेताओं में न्यायाधीश महादेव गोविंद रानाडे और आर. जी. भण्डारकर के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। गोविंद रानाडे ने हिंदी और नागरी लिपि के प्रयोग और प्रसार का सतत् प्रयास किया है। निश्चय ही हिंदी-प्रसार आन्दोलन में प्रार्थना समाज की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

थियोसोफिकल सोसाइटी

इस सोसाइटी की स्थापना भारतीय दर्शन और संस्कृति के प्रभाव से 'विश्व-बन्धुत्व' भाव जगाने हेतु सन् 1875 में अमेरिका में हुई। इसके संस्थापक मदाम ब्लावत्स्की और कर्नल आलकोट थे। सन् 1897 में इसका मुख्य कार्यालय मुम्बई में स्थापित किया गया। इस संस्था पर आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द का विशेष प्रभाव पड़ा। इस संस्था ने स्वामी जी को अध्यात्म गुरु भी माना है। इसके उद्देश्य ब्रह्म समाज और आर्य समाज से बहुत कुछ मेल खाते हैं। सन् 1893 में श्रीमति एनी बेसेंट ने इस संस्था का नेतृत्व अपने हाथों में लिया। उन्होंने सन् 1898 में काशी में सेंट्रल हिंदू कॉलेज और हिंदू कन्या विद्यालय की स्थापना की। इसके साथ ही देश के विभिन्न प्रांतों में शिक्षण संस्थाएँ खोलीं। इन विद्यालयों और महाविद्यालयों में भारतीय संस्कृति की शिक्षा हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में दी जाती थी। इस सोसाइटी पर अंग्रेजी का भी प्रभाव दिखाई देता है, किन्तु इनकी जो भी प्रचारादि सामग्री छपती, वह अंग्रेजी के साथ हिन्दी में भी होती थी। इस प्रकार हिन्दी-प्रसार को सुअवसर मिला। स्वाधीनता संग्राम के प्रति विशेष लगाव होने के कारण सन् 1918 से सन् 1921 तक इन्होंने दक्षिणी भारत में घूम-घूमकर हिन्दी का प्रचार किया था। उन्होंने हिन्दी का महत्त्व अपनी पुस्तक 'नेशन बिल्डिंग' में लिखा है-

"हिन्दी जानने वाले आदमी संपूर्ण भारत में यात्र कर सकता है और उसे हर जगह हिन्दी बोलने वाले मनुष्य मिल सकते हैं। हिन्दी सीखने का कार्य ऐसा त्याग है, जिसे दक्षिणी भारत के निवासियों को राष्ट्र की एकता के हित में करना चाहिए।

श्रीमति एनी बेसेंट ने सन् 1928 में मद्रास (चेन्नई) में हुए हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन में हिन्दी-संदर्भ में प्रेरक वक्तव्य दिया था-

"मेरा विश्वास है कि हिन्दी भारतवर्ष की मुख्य (संपर्क) भाषा होगी। मेरा विचार है कि भारतवर्ष की शिक्षा में हिन्दी अनिवार्य होनी चाहिए।"

इस प्रकार के विचारों और गतिविधियों से हिन्दी-प्रसार को अनुकूल दिशा मिली है।

साहित्यिक संस्थाएँ

भारतवर्ष एक लम्बे समय तक दासता की बेड़ी में जकड़ा रहा। हिन्दी के प्रचार-प्रसार हेतु समय-समय पर अनेक साहित्यिक संस्थाओं की स्थापना होती रहती है। राष्ट्रीय भाव जगाने और हिंदी के प्रचार-प्रसार में इन संस्थाओं का विशेष योगदान रहा है। इनमें कुछ संस्थाओं का उल्लेख किया जा रहा है।

भारतेन्दु मण्डल

आधुनिक हिन्दी साहित्य के जन्मदाता भारतेन्दु हरिशचन्ट्ठद्र ने साहित्यकारों का एक मण्डल बनाया था। यह मण्डल हिन्दी साहित्य के माध्यम से सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन का अभिलाषी था। मण्डल के सदस्यों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं पर महत्त्वपूर्ण कृतियों की रचना की, पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया। भारतेन्दु हरीशचन्द्र ने हिन्दी पर व्याख्यान देते हुए कहा था-

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।

भारतेन्दु मण्डल की गतिविधियों से सामाजिक क्षेत्र में जागरण का परिवेश बना, तो स्वदेशी आंदोलन को प्रभावी आधार मिला है। हिन्दी-प्रेम के कारण जन-सामान्य में हिन्दी लोकप्रिय हुई। भारतेन्दु हरीशचन्द्र के साथ इस मंडल के सक्रिय सदस्य थे- पं. प्रताप नारायण मिश्र, पं. बालकृष्ण भट्ट, बदरी नारायण चौधरी, श्रीनिवास दास, बालमुकुंद गुप्त, रमाशंकर व्यास और तोताराम आदि।

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

इस सभा की स्थापना 10 मार्च, 1893 में हुई। इस संस्था को संरक्षक के रूप में बाबू श्यामसुन्दर दास, श्री गोपाल प्रसाद खत्री और पं. राम नारायण मिश्र आदि का आशीर्वाद मिला। इस संस्था से अन्य जुड़ने वाले गणमान्य विद्वानों में महामना मदन मोहन मालवीय, श्रीधर पाठक, श्री अम्बिका दत्त व्यास, श्री राधाचरण गोस्वामी और बदरी नारायण चौधरी आदि प्रमुख हैं। कोश-रचना, हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन, हस्तलिखित ग्रंथों की खोज और संगोष्ठी आयोजन में यह संस्था देश में शीर्ष स्थान पर है।

कामता प्रसाद गुरु रचित 'हिन्दी व्याकरण' पं. किशोरी वाजपेयी कृत 'हिन्दी शब्दानुशासन' के अतिरिक्त 'हिन्दी शब्दसागर', 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास' आदि के दुर्लभ और महत्त्वपूर्ण प्रकाशन से इस संस्था को हिन्दी-विकास में विशेष महत्त्व मिला है। 'नागरी प्रचारिणी' शोध-पत्रिका का लगभग सौ वर्षों का गरिमामय इतिहास इस संस्था की गौरव गाथा का स्वरूप है।

इस संस्था ने नागरी लिपि के सुधार, आशुलिपि (शार्टहैंड) और टंकण (टाइप) संदर्भ में अनुकरणीय पहल की है। नागरी प्रचारणी सभा का लगभग सौ वर्षों का इतिहास हिन्दी प्रचार-प्रसार के श्रेष्ठ और प्रेरक संदर्भ को प्रस्तुत करता है। यह सभा आज भी हिन्दी के प्रचार-प्रसार के साथ हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने में लगी है।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

सम्मेलन हिन्दी प्रचार-प्रसार की सर्वप्रमुख साहित्यिक संस्था है। सन् 1910 में सम्मेलन का प्रथम अधिवेशन महामना मदनमोहन मालवीय की अध्यक्षता में हुआ। राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन ने इसी समय न्यायालय में हिन्दी और देवनागरी प्रयोग पर बल दिया।

सम्मेलन द्वारा हिन्दी प्रचार-प्रसार और हिन्दी-विकास के लिए नियम बनाए गए। इनमें प्रमुख थे- राष्ट्रभाषा हिन्दी और राष्ट्रलिपि देवनागरी का प्रचार, हिन्दी भाषी प्रदेशों की शिक्षण संस्थाओं के साथ न्यायालयों में हिन्दी का प्रयोग, देवनागरी में छपाई की समुचित व्यवस्था, हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं का विकास, हिन्दी विद्वानों और साहित्यकारों का सम्मान और हिन्दी प्रचार-प्रसार हेतु हिन्दी की उच्च परीक्षाओं का आयोजन।

सम्मेलन द्वारा उक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सतत् प्रयत्न किया जाता रहा है। सम्मेलन के चतुर्थ अधिवेशन अर्थात् सन् 1913 से हिन्दी के व्यापक प्रचार हेतु प्रथमा, मध्यमा और उत्तमा आदि परीक्षाओं का आयोजन शुरू हुआ।

सम्मेलन की त्रैमासिक 'सम्मेलन पत्रिका' शोधपरक और गन्वेषणात्मक आलेखों के आधार पर सतत् प्रकाशित होती रही है। 'राष्ट्रभाषा संदेश' पत्र भी हिन्दी प्रचार-प्रसार की आकर्षक भूमिका में है। हिन्दी का चर्चित शब्दकोश 'मानक हिन्दीकरण' पाँच खण्डों में प्रकाशित करना गरिमा का विषय है। सन् 1963 में भारत सरकार के द्वारा लोक सभा में एक विशेष स्वीकृति कर 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' को राष्ट्रीय महत्त्व की संस्था के रूप में मान्यता दी गई है।

इस प्रकार हिन्दी प्रचार-प्रसार में सम्मेलन का सर्वोपरि महत्त्व है।

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

महात्मा गांधी ने हिन्दी सम्मेलन के सन् 1918 के इन्दौर के अधिवेशन में दक्षिण में हिन्दी प्रचार की योजना बनाई। उनके पुत्री श्री देवदास गांधी दक्षिण भारत में प्रथम हिन्दी प्रचारक के रूप में गए। दक्षिण भारत में प्रचारार्थ श्री सत्यदेव परिव्राजक आदि वहाँ पहुँचे। वहाँ प्रारंभ में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के माध्यम से प्रचार हुआ। सन् 1927 में इसे दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास नाम दिया गया। इसके संस्थापकों में चक्रवर्ती राजगोपालचारी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

सभा के द्वारा दक्षिण के प्रांतों में हिन्दी का प्रेरक प्रचार किया गया। हिन्दी भाषा के प्रचारार्थ प्रवेशिका विशारद्, पूर्वार्द्ध, विशारद् उत्तरार्द्ध, प्रवीण तथा हिन्दी प्रचारक आदि परीक्षाओं का संचालन किया जाता है। सभा की प्रवेशिका, विशारद् और प्रवणी परीक्षाओं को केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय द्वारा मान्यता मिली है। यहाँ से मासिक 'हिन्दी प्रचार समाचार' और 'दक्षिणी भारत' द्विमासिक पत्रिका का प्रकाशन होता है। केन्द्र सरकार ने सभा को श्रेष्ठ हिन्दी प्रचारक मानकर राष्ट्रीय महत्त्व प्रदान किया है।

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का 25वाँ अधिवेशन सन् 1936 में नागपुर में हुआ। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सम्मेलन के अध्यक्ष थे। श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन के प्रस्तावानुसार दक्षिण में हिन्दी प्रचारार्थ 'हिन्दी प्रचार समिति' का गठन किया

गया। इसका प्रथम अधिवेशन सन् 1936 में वर्धा में हुआ। काका कालेलकर के सुझाव पर इसका नाम बदल कर 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' रखा गया। इस समिति का मुख्य उद्देश्य हिन्दी-प्रचार था और इसी आधार पर समिति मानती थी 'एक हृदय हो भारत जननी' समिति ने हिन्दी प्रचार-प्रसार के लिए सन् 1938 से अपनी परीक्षाओं का संचालन शुरू किया समिति ने जुलाई 1943 से 'राष्ट्रभाषा' मासिक पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया। इसके पश्चात् 'राष्ट्रभारती' पत्रिका का प्रकाशन किया गया। इस समिति के देश से बाहर लंका, स्याम, सुमात्र, मॉरिशस, इंग्लैंड आदि देशों में केन्द्र हैं।

समिति सम्मान और पुरस्कार से भी हिन्दी प्रचार-प्रसार को दिशा प्रदान करती है। इस समिति की गतिविधियों से हिन्दी को विशेष बल मिला है।

इनके अतिरिक्त हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, वर्धाय गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबादय हिन्दी विद्यापीठ, मुम्बई, मातृभाषा उन्नयन संस्थान, इंदौर, महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, पूना और बिहार राष्ट्रभाषा, पटना आदि की हिन्दी प्रचार-प्रसार भूमिका उल्लेखनीय है।

9

अमेरिका में हिंदी प्रचार

अमेरिका में भारत के राजदूत डॉ सुब्रमण्यम जयशंकर ने वीडियो संदेश के माध्यम से सम्मलेन का उद्‌घाटन किया। न्यूयॉर्क में भारत के प्रधान कौंसुल ज्ञानेश्वर मुळे ने अपने संबोधन में हिंदी को भारत की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बताते हुए हिंदी प्रचार को अभियान का स्वरूप देने पर जोर दिया। सम्मलेन के शैक्षिक सत्रों का प्रारंभ यूनिवर्सिटी ऑफ पेनसिलवेनिया के पूर्व हिंदी अध्यापक डॉ सुरेन्द्र गंभीर के वक्तव्य से हुआ, जिसमें उन्होंने अमेरिका में हिंदी के वर्तमान स्वरूप की चर्चा की। उन्होंने व्हाइट हाउस द्वारा सन 2006 में जारी उस अध्यादेश की चर्चा की जिसके अंतर्गत हिंदी उन सात प्रमुख विदेशी भाषाओं की श्रेणी में शामिल हो गई जिनके अध्यापन के लिए सरकारी अनुदान दिया जाता है।

अमेरिकी सरकार की एजेंसियों ने अपने शोध के विषयों में हिंदी को शामिल किया और स्टार टॉक नामक कार्यक्रम का जन्म हुआ, जिसके तहत प्रति वर्ष अमेरिका में लगभग एक दर्जन स्थानों पर हिंदी शिक्षण शिविर आयोजित किए जाते हैं। लेकिन गंभीर ने भारतीय समाज में हिंदी की उपेक्षा पर गहरा क्षोभ व्यक्त करते हुए चीनी और अरबी भाषाओं के लिए किए जा रहे प्रयासों पर नजर डालते हुए कहा कि इन दोनों भाषाओं को अमेरिकी शिक्षा प्रणाली में शामिल करने के लिए चीन और कातार की सरकारी एजेंसियाँ और स्वयंसेवी संस्थाएँ महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

आँकड़े बताते हैं कि भारतीय मूल के माता-पिता अपने बच्चों को हिंदी सिखाने के प्रति उदासीन हैं। दुर्भाग्यपूर्ण बात यह है कि अमेरिका में हिंदी शिक्षार्थियों की संख्या दिन-ब-दिन कम होती जा रही है। गंभीर ने अमेरिका में बसे भारतीय समाज को चेतावनी देते हुए कहा कि हालांकि अमेरिकी सरकार द्वारा हिंदी को बढ़ावा देने के सार्थक प्रयासों के कारण आज हिंदी प्रसार के स्वर्णिम अवसर मौजूद हैं, लेकिन यदि हिंदी के प्रति हमारी उदासीनता बरकरार रही तो वह दिन दूर नहीं जब हिंदी इस देश में वैसे ही मुरझा जाएगी जैसे कैरिबियन देशों में मुरझा गई।

दरअसल, अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मलेन भारतीय समाज के उन सभी तबकों को एक साथ लाने का प्रयास था, जो किसी न किसी प्रकार से हिंदी से जुड़े हैं। एक तरफ तो भाषाविद और लेखक-कवि हैं तो दूसरी तरफ भारतीय मूल के व्यसायी हैं, जिन्हें यह समझाने की कोशिश की गई कि हिंदी सिर्फ वार्तालाप का माध्यम ही नहीं, यह भारतीयता की पहचान है। भारत से बाहर जहाँ कहीं भी भारतीय मूल के लोग जीवन यापन कर रहे हैं उन सबको एक सूत्र में पिरोने का सामर्थ्य हिंदी में है, जिसका उचित प्रयोग होना चाहिए। जैसा कि कौन्सुलाधीश मुळे ने समस्त श्रोताओं से कहा कि आप उन व्यवसायों का समर्थन करें, जो हिंदी में कारोबार करने के लिए राजी हैं। उन रेस्तरां या होटलों में जाएं जहां हिंदी में मेनू कार्ड छपा हो, या जिनके नामपट्ट हिंदी में हों।

शिक्षा के क्षेत्र में हिंदी सामग्री के आभाव से जुड़ी समस्याओं पर भी चर्चा हुई। इस दिशा में भारत की अनेक हिंदी संस्थाओं, जैसे, आगरा का केंद्रीय हिंदी निदेशालय और नई दिल्ली स्थित भारतीय सांस्कृतिक संसाधन और प्रशिक्षण केंद्र के साथ अमेरिका के हिंदी शिक्षक एवं शैक्षिक संस्थान मिलकर कार्य करें तो उसके सार्थक नतीजे निकल सकते हैं। इस किस्म के प्रयासों का संयोजन करने के उद्देश्य से न्यूयॉर्क में एक हिंदी केंद्र स्थापित करने का प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किया गया। सम्मलेन में मॉरिशस स्थित विश्व हिंदी सचिवालय के उपमहासचिव गंगाधर सुखलाल की उपस्थिति कई अर्थों में महत्त्वपूर्ण रही।

सुखलाल ने हिंदी भाषी जन समूह के लिए नया मंत्र प्रदान करते हुए आग्रह किया कि 'हिंदी को विश्व भाषा बनाना है तो उसे सिर्फ भारत की भाषा न समझ जाए। इसके समुचित विकास के लिए आवश्यक है कि दुनिया के सभी महाद्वीपों में हिंदी केंद्र स्थापित हों, जिनका कार्य हिंदी सेवी संस्थाओं के बीच

समन्यवय स्थापित करना हो। सुखलाल और गंभीर के प्रयासों से ही न्यूयॉर्क में हिंदी केंद्र स्थापित करने का प्रस्ताव सम्मलेन के समक्ष प्रस्तुत हुआ और सर्वसम्मति से अपनाया गया जिसमें भारत सरकार से आग्रह किया गया कि हिंदी केंद्र के विचार को मूर्त रूप देने के लिए शीघ्रातिशीघ्र ठोस कदम उठाए जाएं। यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्सास में हिंदी उर्दू फ्लैगशिप नामक कार्यक्रम के निदेशक डॉ. रूपर्ट स्नेल ने अमेरिका में शिक्षकों को एक जुट होकर कार्य करने के लिए आव्हान किया। भाषा शिक्षण में साहित्यिक पुट देते हुए रूपर्ट ने अज्ञेय की आवाज में उनकी कविताओं की रिकॉर्डिंग सुनाई। भाषा के विविध स्वरूपों को सार्थक रूप से शिक्षण सामग्री के रूप में उपयोग में लाया जा सकता है। ऐसी आशा है कि अमेरिका में प्रद्योगिकी की मदद से हिंदी शिक्षण का विस्तार करने में रूपर्ट के प्रयासों से मदद मिलेगी। सम्मलेन में साथियों और नए मित्रों से मिलकर फिर बिछड़ जाने का दुख रूपर्ट जी ने इस दोहे के साथ व्यक्त किया।

संगी सगरे चलि गए, साथी रहत न कोय।
एक जुदाई मीत जो जुदा न कबहू होय।

हिंदी को विरासत भाषा के रूप में सशक्त बनाने के लिए सेंटर फॉर एप्लाइड लिंग्विस्टिक्स से सम्बद्ध डॉ. जॉय पैटन ने भारतीय मूल के लोगों को सलाह दी कि वे अपनी पहचान अपने भाषा स जोड़ें और 'अप्रवासी' जैसे विशेषणों का प्रयोग बंद करें। 'स्वयं को विरासत भाषा भाषी या 'अल्पसंखयक भाषी' कहकर अपनी भाषा के प्रति निष्ठा जाताना उसे सशक्त बनाने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम होगा।'

दिल्ली विश्वविद्यालय में मीडिया की शिक्षक वर्तिका नन्दा ने हिन्दी और मास मीडिया पर अपने विचार रखे। उन्होंने अपनी ताजा किताब 'तिनका तिनका तिहाड़' की मिसाल के साथ भारत में निजी मीडिया के जरिए हिन्दी के बदलते स्वरूप पर चर्चा की।

यूनिवर्सिटी ऑफ पेनसिलवेनिया में 36 वर्षों तक हिंदी प्राध्यापिका रहीं डॉ. विजय गंभीर का कहना था कि विरासत भाषा की व्यापकता उसे सशक्त बना सकती है। विजय जी, अमेरिका में हिंदी का मानक तैयार करने के क्षेत्र में वर्षों से कार्य कर रही हैं, उनकी राय थी कि अमेरिकी व्यापारिक समुदाय में हिंदी का समावेश एक आवश्यक कार्य है, क्योंकि हिंदी भाषी समाज वाणिज्य संबंधी आवश्यकताओं के लिए मुख्य धारा से जुड़ा हुआ है, इसलिए, वाल मार्ट, होम डिपो, बैंक जैसे राष्ट्रव्यापी व्यापारिक संस्थानों में जहां कर्मचारियों और

ग्राहकों की बड़ी संख्या भारतीय मूल के लोगों की है, हिंदी भाषा का प्रयोग सहज रूप से होना चाहिए।

यूनिवर्सिटी ऑफ आयोवा के डॉ फिलिप लुटजेन्डोर्फ ने, जो इन दिनों तुलसी रामचरित मानस का अंग्रेजी अनुवाद करने में व्यस्त हैं, भाषा की लचक और सामान्य जीवन में इसकी लोकप्रियता पर प्रकाश डाला और कहा कि अनुवाद साहित्य की पहुंच विस्तारित करने में भरी योगदान कर सकता है। लुटजेन्डोर्फ वर्षों तक हनुमान के विषय में शोध करते रहे हैं और इन दिनों अमेरिकन इंस्टिट्यूट ऑफ इंडियन स्टडीज के निदेशक के रूप में अमेरिकी विद्यार्थियों को भारत में रहकर हिंदी की मौलिक अनुभूति प्रदान करने के कार्यक्रम को आगे बढ़ा रहे हैं।

सम्मलेन में ऑस्टिन, टेक्सास से पधारे डॉ. हरमन वैन ओल्फेन ने अपने रोचक संस्मरण में वाराणसी और मसूरी के जीवन की झलक पेश की तो दूसरी तरफ केंद्रीय हिंदी निदेशालय के उपसभापति डॉ. लक्ष्मी प्रसाद यरलागड्डा ने हिंदी प्रसार को व्यापक बनाने के लिए गैर हिंदी भाषी विद्वानों को साहित्य और शिक्षण क्षेत्र में उचित स्थान प्रदान करने पर जोर दिया।

दिल्ली के लेडी श्रीराम कॉलेज में पत्रकारिता की प्राध्यापिका वर्तिका नंदा तो सम्मलेन के आयोजन से इतनी प्रभावित हुई कि इसे 'लघु भारत' ही कह डाला। भाषा के बदलते परिदृश्य पर टिप्पणी करते हुए उनका कहना था कि हिंदी के प्रयोग में बदलाव स्वाभाविक है, भारतीय संचार माध्यमों में हिंदी के साथ अंग्रेजी के व्यापक प्रयोग विचलित होने की आवश्यकता नहीं है। हिंदी के पठन-पाठन और उसे प्रचार-प्रसार से संबंधित इस महत्त्वपूर्ण सम्मलेन की परिकल्पना और उसके कार्यक्रम का निर्माण अनेक संस्थाओं और विशेषज्ञों के सहयोग और उनकी लगन से संभव हुआ।

WD|न्यूयॉर्क का वाशिंगटन स्क्वायर पार्क वसंत ऋतु में खूबसूरत फूलों से लदे वृक्ष और खिलखिलाती गिलहरियों के कारण स्थानीय लोगों, विशेष तौर पर न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी के विद्यार्थियों के लिए, आकर्षण का केंद्र बन जाता है। प्रतिवर्ष विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह भी इसी पार्क में होते हैं। ऊंची इमारतों से घिरा यह मनभावन स्थल गत 26 और 27 अप्रैल को एक नए किस्म के समारोह का साक्षी बना। पार्क से सटे कॉलेज ऑफ आर्ट्स और साइंस भवन के सिल्वर हॉल में अमेरिका, कनाडा, कैरेबियाई देश त्रिनिदाद और टोबैगो, मॉरिशस और भारत से पधारे सैकड़ों हिंदी सेवी अध्यापक, भाषाविद, लेखक और कवि

अमेरिकी महाद्वीप में हिंदी शिक्षा और प्रचार के अवसरों और चुनौतियों पर चर्चा करने के लिए आयोजित अंतरराष्ट्रीय क्षेत्रीय हिंदी सम्मलेन में शामिल हुए।

भारतीय समाज में हिंदी शिक्षा से सम्बद्ध न्यूजर्सी–न्यूयॉर्क की प्रमुख संस्थाएँ, युवा हिंदी संस्थान, एजुकेटर सोसाइटी, अखिल विश्व हिंदी समिति, का सम्मिलित प्रयास और न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय द्वारा परिसर उपलब्ध कराया जाना ही पर्याप्त नहीं था। हिंदी और संस्कृत की विद्वान प्राध्यापिका गैब्रिएला निक इलिएवा ने विविध विषयों के पारंगत विद्वानों को एक मंच पर लाने के लिए महीनों प्रयत्न किए। भारतीय प्रदूतावास के अधिकारियों के सक्रिय समर्थन और सहयोग से नई ऊर्जा पैदा हुए जिसकी परिणति सम्मलेन के रूप में हुई। सबका एक ही लक्ष्य था। इक्कीसवीं सदी में हिंदी को आधुनिक भाषा के रूप में कैसे सशक्त बनाया जाए। न्यूयॉर्क में आयोजित यह अनूठा सम्मलेन एक वार्षिक अधिवेशन के रूप में पनपता रहे, यही सबका उद्देश्य है।

10

हिंदी भाषा की उत्पत्ति / पूर्ववर्ती काल

हिंदी भाषा की उत्पत्ति का पता लगाने और उसका थोड़ा भी इतिहास लिखने में बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ हैं, क्योंकि इसके लिए पतेवार सामग्री कहीं नहीं मिलती। अधिकतर अनुमान ही के आधार पर इमारत खड़ी करनी पड़ती है। और यह सब का काम नहीं। इस विषय के विवेचन में पाश्चात्य पंडितों ने बड़ा परिश्रम किया है। उनकी खोज की बदौलत अब इतनी सामग्री इकट्ठी हो गई है कि उसकी सहायता से हिंदी की उत्पत्ति और विकास आदि का थोड़ा-बहुत पता लग सकता है। हिंदी की माता कौन है? मातामही कौन है? प्रमातामही कौन है? कौन कब पैदा हुई? कौन कितने दिन तक रही? हिंदी का कुटुंब कितना बड़ा है? उसकी इस समय हालत क्या है? इन सब बातों का पता लगाना – और फिर ऐतिहासिक पता, ऐसा वैसा नहीं – बहुत कठिन काम है। मैक्समूलर, काल्डवेल, बीम्स और हार्नली आदि विद्वानों ने इन विषयों पर बहुत कुछ लिखा है और बहुत-सी अज्ञात बातें जानी हैं। पर खोज, विचार और अध्ययन से भाषाशास्त्र – विषयक नित नई बातें मालूम होती जाती हैं। इससे पुराने सिद्धांतों में परिवर्तन दरकार होता है। कोई-कोई सिद्धांत तो बिल्कुल ही असत्य साबित हो जाते हैं। अतएव भाषाशास्त्र की इमारत हमेशा ही गिरती रहती है और हमेशा ही उसकी मरम्मत हुआ करती है।

आजकल हिंदी की तरफ लोगों का ध्यान पहले की अपेक्षा कुछ अधिक गया है। सारे हिंदुस्तान में उसका प्रचार करने की चर्चा हो रही है। बंगाली, मदरासी, महाराष्ट्र, गुजराती सब लोग उसकी उपयुक्तता की तारीफ कर रहे हैं। ऐसे समय में इस बात के जानने की, हमारी समझ में, बड़ी जरूरत है कि हिंदी किस कहते हैं? हिंदुस्तानी किसे कहते हैं? उर्दू किसे कहते हैं? इनकी उत्पत्ति कैसे और कहाँ से हुई और इनकी पूर्ववर्ती भाषाओं ने कितने रूपांतरों के बाद इन्हें पैदा किया?

इन विषयों पर आज तक कितने ही लेख और छोटी-मोटी पुस्तकें निकल चुकी हैं। पर उनमें कही गई बहुत-सी बातों के संशोधन की अब जरूरत है। इस देश की गवर्नमेंट जो यहाँ की भिन्न-भिन्न भाषाओं और बोलियों की परीक्षा करा कर उनका इतिहास आदि लिखा रही है उससे कितनी ही नई-नई बातें मालूम हुई हैं। यह काम प्रसिद्ध विद्वान डाक्टर ग्रियर्सन कर रहे हैं। 1901 ईसवी में जो मुर्दमुशमारी हुई थी उसकी रिपोर्ट में एक अध्याय इस देश की भाषाओं के विषय में भी है। यह अध्याय इन्हीं डाक्टर ग्रियर्सन साहब का लिखा हुआ है। इसके लिखे और प्रकाशित किए जाने के बाद, भाषाओं की जाँच से संबंध रखने वाली डाक्टर साहब ही की लिखी हुई कई किताबें निकली हैं। उनमें जो बातें हिंदी के विषय में लिखी हैं वे डाक्टर साहब के लिखे हुए मुर्दमशुमारी वाले भाषा-विषयक प्रकरण से मिलती हैं। इससे मालूम होता है कि भाषाओं की जाँच से हिंदी के विषय में जो बातें मालूम हुई हैं वे सब इस प्रकरण में आ गई हैं। इस निबंध के लिखने में डाक्टर ग्रियर्सन की इस पुस्तक से हमें बहुत सहायता मिली है।

भाषाओं की जाँच से संबंध रखने वाली सब किताबें जब निकल चुकेंगी, तब डाक्टर साहब की भूमिका अलग पुस्तकाकार निकलेगी। संभव है उसमें कोई नई बातें देखने को मिलें। पर तब तक ठहरने की हम विशेष जरूरत नहीं समझते। क्योंकि इस विषय के सिद्धांत बड़े ही अनस्थिर हैं - बड़े ही परिवर्तनशील हैं। जो सिद्धांत आज दृढ़ समझा जाता है, कल किसी नई बात के मालूम होने पर, भ्रामक सिद्ध हो जाता है। इससे यदि वर्ष दो वर्ष ठहरने से कोई नई बातें मालूम भी हो जायँ, तो कौन कह सकता हैं, आगे चल कर किसी दिन वे भी न भ्रामक सिद्ध हो जायँगी। अतएव आगे की बातें आगे होती जायँगी। इस समय जो कुछ सामने है उसी के आधार पर हम इस विषय को थोड़े में लिखते हैं।

आदिम आर्यों का स्थान

हिंदुस्तान में सब मिला कर 147 भाषाएँ या बोलियाँ बोली जाती हैं। उनमें से हिंदी वह भाषा है, जिसका संबंध एक ऐसी प्राचीन भाषा से है, जिसे हमारे और यूरोप वालों के पूर्वज किसी समय बोलते थे। अर्थात् एक समय ऐसा था जब दोनों के पूर्वज एक ही साथ, या पास-पास रहते थे और एक ही भाषा बोलते थे। पर किस देश या किस प्रांत में वे पास-पास रहते थे, यह बतलाना सहज नहीं है। इस विषय पर कितने ही विद्वानों ने कितने ही तर्क किए हैं। किसी ने हिंदूकुश के आस-पास बताया, किसी ने काकेशस के आस-पास। किसी की राय हुई कि उत्तरी-पश्चिमी यूरप में ये लोग पास-पास रहते थे। किसी ने कहा नहीं, ये आरमीनियाँ में, या आक्सस नदी के किनारे, कहीं रहते थे। अब सब से पिछला अंदाज विद्वानों का यह है कि हमारे और यूरप वालों के आदि पुरखे दक्षिणी रूस के पहाड़ी प्रदेश में, जहाँ यूरप और एशिया की हद एक दूसरी से मिलती है वहाँ, रहते थे। वहाँ ये लोग पशु-पालन करते थे और चारे का जहाँ सुभीता होता था वहीं जा कर रहते थे। अपनी भेड़ें, बकरियाँ और गायें लिए ये घूमा करते थे। धीरे-धीरे कुछ लोग खेती भी करने लगे। और जब पास-पास रहने से गुजारा न हुआ तब उनमें से कुछ पश्चिम की ओर चल दिए, कुछ पूर्व की ओर। जो लोग पश्चिम की ओर गए उनसे ग्रीक, लैटिन, केल्टिक और टयूटानिक भाषा बोलने वाली जातियों की उत्पत्ति हुई। जो पूर्व को गए उनसे भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोलने वाली जातियाँ उत्पन्न हुई। उनमें से एक का नाम आर्य हुआ।

आर्य लोगों ने अपना स्थान कब छोड़ा, पता नहीं चलता। लेकिन छोड़ा जरूर, यह निःसंदेह है। बहुत करके उन्होंने कास्पियन सागर के उत्तर से प्रयाण किया और पूर्व की ओर बढ़ते गए। जब वे आक्सन और जक्जारटिस नदियों के किनारे आए, तब वहाँ ठहर गए। वह देश उनको बहुत पसंद आया। संभव है वे खीवा से उस प्रांत में ठहरे हों, जो औरों की अपेक्षा अधिक सरसब्ज है। एशिया में खीवा को ही आर्यो का सब से पुराना निवास-स्थान मानना चाहिए। वहाँ कुछ समय तक रह कर आर्य लोग पूर्वोक्त नदियों के किनारे-किनारे खोकंद और बदख्शाँ तक आए। वहाँ इनके दो भाग हो गए। एक पश्चिम की तरफ मर्व और पूर्वी फारिस को गया, दूसरा हिंदूकुश को लाँघ कर काबुल की तराई में होता हुआ हिंदुस्तान पहुँचा। जब तक इनके दो भाग नहीं हुए थे, ये लोग एक ही भाषा बोलते थे। पर दो भाग होने, अर्थात् एक के फारिस और दूसरे के हिंदुस्तान आने,

से भाषा में भेद हो गया। फारिस वाली की भाषा ईरानी हो गई और हिंदुस्तान वालों की विशुद्ध 'आर्य'। 1901 की मुर्दमशुमारी के अनुसार ईरानी और आर्य-भाषा बोलने वालों की संख्या इस प्रकार थी –

ईरानी 1, 397, 786

आर्य 219, 780, 650

कुल 221, 178, 436

इस लेख में उन ईरानियों की गिनती है, जो हिंदुस्तानी की हद में रहते हैं। फारिस के ईरानियों से मतलब नहीं है। हिंदुस्तान की कुल आबादी 294, 361, 056 है। उसमें से ईरानी और आर्यों की भाषा बोलने वालों की संख्या मालूम हो गई। बाकी जो लोग बचे ये यूरप और अफ्रीका आदि की तथा कितनी ही अनार्य, भाषाएँ बोलते हैं। ईरानी और आर्य भाषाओं से यह मतलब नहीं कि इस नाम की कोई पृथक भाषाएँ हैं। नहीं, इनसे सिर्फ इतना ही मतलब है, कि जो भाषाएँ 22 करोड़ आदमी इस समय हिंदुस्तान में बोलते हैं वे पुरानी आर्य और ईरानी भाषाओं से उत्पन्न हुई हैं। ये दो शाखाएँ हैं। इन्हीं से और कितनी ही भाषाओं की उत्पत्ति हुई है। ईरानी शाखा खोकंद और बदख्शाँ तक सब आर्य साथ-साथ रहे। वहाँ से कुछ आर्य हिंदुस्तान की तरफ आए और कुछ फारिस की तरफ गए। इन फारिस की तरफ जाने वाले में से कुछ लोग काश्मीर के उत्तर, पामीर पहुँचे। ये लोग अब तक ईरानी भाषाएँ बोलते हैं। जो लोग फारिस की तरफ गए थे वे धीरे-धीरे मर्व, फारिस, अफगानिस्तान और बिलोचिस्तान में फैल गए। वहाँ इनकी भाषा के दो भेद हो गए। परजिक और मीडिक। परजिक भाषा परजिक भाषा का दूसरा नाम पुरानी फारसी है। ईसा के पाँच छः सौ वर्ष पहले ही से इसका प्रचार फारिस में हो गया था। डारियस 'प्रथम' के समय के शिलालेख सब इसी भाषा में हैं। बहुत काल तक इसका प्रचार फारिस में रहा। यह फारिस के सब सूबों में बोली और लिखी जाती थी। ईसा के कोई 300 वर्ष बाद इसका रूपांतर पहलवी भाषा में हुआ। यह भाषा ईसा के 700 वर्ष बाद तक रही। आज कल फारिस में जो फारसी बोली जाती है, पहलवी से उसका वही संबंध है, जो संबंध भारत की प्राकृत भाषाओं का यहाँ की हिंदी, बँगला, मराठी आदि वर्तमान भाषाओं से है। पहलवी के बाद फारिस की भाषा को वह रूप मिला जो कोई हजार ग्यारह सौ वर्ष से वहाँ अब तक प्रचलित है। यह वहाँ की वर्तमान फारसी है। मुसलमानी राज्य में इस भाषा का प्रचार हिंदुस्तान में भी बहुत समय तक रहा। हिंदू और मुसलमान दोनों इसे सीखते थे और बहुधा बोलते भी

थे। कुछ लोगों की जन्म भाषा फारसी ही थी। हिंदुस्तान में अनेक ग्रंथ भी इस भाषा में लिखे गए। विद्वान मुसलमानों में अब भी फारसी का बड़ा आदर है। पर रंगून, देहली, लखनऊ आदि में पुराने शाही खानदान के, जो मुसलमान बाकी हैं वही कभी-कभी फारसी बोलते हैं। या अफगानिस्तान और फारिस से आ कर जो लोग यहाँ बस गए हैं, अथवा जो लोग इन देशों से व्यापार के लिए यहाँ आते हैं – विशेष करके घोड़ों के व्यापारी – वे फारसी बोलते हैं। फारसी बोली और लोगों के मुँह से अब बहुत कम सुनने में आती है यों तो फारसी जानने वाले उसे बोल लेते हैं, पर फारसी उनकी बोली नहीं। इससे वे विशुद्ध फारसी नहीं बोल सकते।

मुसलमानी राज्य में जो लोग फारिस और अफगानिस्तान आदि देशों से आ कर इस देश में बस गए थे और जिनकी संतति अब तक यहाँ वर्तमान है – वर्तमान है क्यों, बढ़ती जाती है – उनके पूर्वज ईरानियों के वंशज थे। अर्थात् वे लोग जो भाषा बोलते थे वह पुरानी ईरानी भाषा से उत्पन्न हुई थी। आर्यों ने अपनी जिस शाखा का साथ बदख्शाँ के आस-पास कहीं छोड़ा था, उसी शाखा के वंशधर, सैकड़ों वर्ष बाद, हिंदुस्तान में आ कर फिर आर्यों के वंशजों के साथ रहने लगे। इस तरह का संयोग एक बार और भी बहुत पहले हो चुका था। डाक्टर ग्रियर्सन लिखते हैं कि सिकंदर के समय में और उसके बाद भी, सूर्योपासक पुराने ईरानियों के वंशज, धर्मोपदेश करने के लिए, इस देश में आए थे। इन में बहुत से शक (सीथियन–Scythians) लोग भी थे। इस बात को हुए कोई दो हजार वर्ष हुए। ये लोग इस देश में आ कर धीरे-धीरे यहाँ के ब्राह्मणों में मिल गए और अब तक शाकद्वीपीय ब्राह्मण कहलाते हैं।

जब मुसलमानों की प्रभुता फारिस में बढ़ी और वहाँ के अग्निपूजक ईरानियों पर अत्याचार होने लगे, तब जरथुस्त्र के उपासक कुछ लोग इस देश में भाग आए और हिंदुस्तान के पश्चिम, गुजरात में रहने लगे। आज कल के पारसी उन्हीं की संतति हैं। यद्यपि भारत के शाकद्वीपीय ब्राह्मण और पारसी ईरानियों के वंशज हैं तथापि न तो वे ईरान ही की कोई भाषा बोलते हैं और न उसकी कोई शाखा ही। इनको इस देश में रहते बहुत दिन हो गए हैं। इसलिए इनकी बोली यहीं की बोली हो गई है।

मीडिक भाषा

मीडिक भाषा-समूह में बहुत-सी भाषाएँ और बोलियाँ शामिल हैं, ईरान के कितने ही हिस्सों में यह भाषा बोली जाती थी। ये सब हिस्से, सूबे, या प्रांत पास ही पास न थे। कोई-कोई एक-दूसरे से बहुत दूर थे। मीडिया पुराने जमाने में फारिस का वह हिस्सा कहलाता था जिसे इस समय पश्चिमी फारिस कहते हैं। मीडिया ही की भाषा का नाम मीडिक है। पारसी लोगों का प्रसिद्ध धर्मग्रंथ अवस्ता इसी पुरानी मीडिक भाषा में है। बहुत लोग अब तक यह समझते थे कि अवस्ता ग्रंथ जेंद भाषा में है। उसका नाम जेंद-अवस्ता सुन कर यही भ्रम होता है। परंतु यह भूल है। इस भूल के कारण एक यूरोपीय पंडित महोदय हैं। उन्होंने भ्रम से अवस्ता की रचना जेंद भाषा में बतला दी। और लोगों ने बिना निश्चय किए ही इस मत को मान लिया। पर अब यह बात अच्छी तरह साबित कर दी गई है कि अवस्ता की भाषा जेंद नहीं। भाषा उसकी पुरानी मीडिक है। अवस्ता का अनुवाद और उस पर भाष्य ईरान की पुरानी भाषा पहलवी में है। इस अनुवाद और भाष्य का नाम जेंद है, भाषा का नहीं। वेदों के तरह अवस्ता के भी सब अंश एक ही साथ निर्माण नहीं हुए। कोई पहले हुआ है, कोई पीछे। उसका सब से पुराना भाग ईसा के कोई 600 वर्ष पहले का मालूम होता है। जैसे परजिक भाषा रूपांतर होते-होते पहलवी भाषा हो गई, वैसे मीडिक भाषा को कालांतर में कौन-सा रूप प्राप्त हुआ, इसका पता नहीं चलता। परंतु वर्तमान काल की नई भाषाओं में उसके चिह्न विद्यमान हैं। अर्थात् इस समय भी कितनी ही भाषाएँ और बोलियाँ विद्यमान हैं, जो पुरानी मीडिक या उसके रूपांतर, से उत्पन्न हुई हैं। इनमें से गालचह, पश्तो, आरमुरी और बलोच मुख्य हैं। इनके सिवा कुर्दिश, मकरानी, मुंजानी आदि कितनी ही बोलियाँ भी इसी पुरानी मीडिक भाषा से संबंध रखती हैं। औरों की अपेक्षा पश्तो भाषा का साहित्य कुछ विशेष अच्छी दशा में है। उसमें बहुत-सी उपयोगी और उत्तम पुस्तकें हैं। पर पश्तो बड़ी कर्णकटु भाषा है। कहावत मशहूर है कि अरबी विज्ञान है, तुर्की सुघरता है, फारसी शक्कर है, हिंदुस्तानी नमक है, और पश्तो गधे का रेंकना है। पुरानी संस्कृत

आदिम आर्यों की जो शाखा ईरान की तरफ गई उसका और उसकी भाषाओं का संक्षिप्त वर्णन हो चुका। अब उन आर्यों का हाल सुनिए जो खोकंद और बदख्शाँ का पहाड़ी देश छोड़ कर दक्षिण की तरफ हिंदुस्तान में आए। आदिम आर्यों की क्यों दो शाखाएँ हो गईं? क्यों एक शाखा एक तरफ गई, दूसरी

दूसरी तरफ – इसका ठीक उत्तर नहीं दिया जा सकता। संभव है धार्मिक मतभेद के कारण यह बात हुई हो या ईरानी आर्यों की राज्य प्रणाली हमारे पुराने आर्यों को पसंद न आई हो, क्योंकि ईरानी लोग बहुत पुराने जमाने से ही अपने में से एक आदमी को राजा बना कर उसके अधीन रहने लगे थे। पर हिंदुस्तान की तरफ आने वाले आर्यों को यह बात पसंद न थी। अथवा आर्यों के विभक्त होने का इन दो में से एक ही कारण न हो। संभव है वे यों ही दक्षिण की तरफ आने को बढ़ते गए हों। क्योंकि जो जातियाँ अपने पशु–समूह को साथ लिए घूमा करती हैं वे स्थिर तो रहती नहीं। हमेशा ही स्थान परिवर्तन किया करती हैं। अतएव संभव है आर्य लोग अपनी तत्कालीन स्थिति के अनुसार हिंदुस्तान की तरफ यों ही चले आए हों। चाहे जिस कारण से हो, आए वे लोग इस तरफ जरूर और आ कर कंधार के आस–पास रहने लगे। वहाँ से वे काबुल की तराई में होते हुए पंजाब पहुँचे। पंजाब में आ कर उनकी एक जाति बनी। बदख्शाँ के पास वे लोग जो भाषा बोलते थे उसमें और उनकी तब की भाषा में अंतर हो गया। पंजाब में आ कर बसने तक सैकड़ों वर्ष लगे होंगे। फिर भला क्यों न अंतर हो जाए? धीरे–धीरे उनकी भाषा को वह रूप प्राप्त हुआ जिसे हम पुरानी संस्कृत कह सकते हैं। यह भाषा उस समय पंजाब और पूर्वी अफगानिस्तान में बोली जाती थी। आर्यों के पंजाब आने तक उनकी, और ईरानी शाखा के आर्यों की, भाषा परस्पर बहुत कुछ मिलती थी। पुरानी संस्कृत और मीडिक भाषा में परस्पर इतना सादृश्य है, जिसे देख कर आश्चर्य होता है। जो लोग मीडिक भाषा बोलते थे उन्हीं का नाम असुर (अहुर) है। जब वे असुर हुए तब उनकी भाषा जरूर ही आसुरी हुई। वेदों और उन के बाद के संस्कृत–साहित्य को देखने से मालूम होता है कि देवोपासक आर्य सुरापान करते थे और असुरोपासक सुरापान के विरोधी थे। प्रमाण में वाल्मीकीय रामायण के बालकांड का 45वाँ सर्ग देखिए। जान पड़ता है सुरापान न करने ही से ईरान की तरफ जाने वाले आर्यों से हमारे पूर्वज आर्य घृणा करने लगे थे। उन से जुदा होने का भी शायद यही मुख्य कारण हो। पारसियों की अवस्ता में असुर उपास्य माने गए और सुर अर्थात् देवता घृणास्पद।

ऋग्वेद के बहुत पुराने अंशों में असुर और सुर (देव) दोनों पूज्य माने गए हैं। पर बाद के अंशों में कहीं–कहीं असुरों से घृणा की गई है। वेदों के उत्तर काल के साहित्य में तो असुर सर्वत्र ही हेय और निंद्य माने गए हैं।

'असु' शब्द का अर्थ है 'प्राण'। जो सप्राण या बलवान हो वही असुर है। बाबू महेशचंद्र घोष 'प्रवासी' में लिखते हैं कि 'असुर' शब्द ऋग्वेद में कोई 100

दफे आया है। उस में से केवल 11 स्थल ऐसे हैं, जहाँ इस शब्द का अर्थ वेदशत्रु है। अन्यत्र सब कहीं सविता, पूषा, मित्र, वरुण, अग्नि, सोम और कहीं-कहीं श्रेष्ठ मनुष्यों के लिए भी असुर शब्द प्रयोग किया गया है। उदाहरण के लिए ऋग्वेद के पहले मंडल का 35 वाँ, दूसरे का 27 वाँ, सातवें का दूसरा, और दसवें का 24 वाँ सूक्त देखिए। इस से स्पष्ट है कि बहुत पुराने जमाने में असुर शबद का अर्थ बुरा नहीं था। और चूँकि अवस्ता में असुर (अहुर) की उपासना है, और वह पारसियों का पूज्य ग्रंथ है, अतएव हमारे पारसी-बंधु असुरोपासक हुए। याद रहे ये लोग भी उन्हीं आर्यों के वंशज हैं, जिन के वंशज पंजाब में आ कर बसे थे और जिन को हम लोग अपने पूज्य पूर्वज समझते हैं।

वैदिक देवताओं और याज्ञिक शब्दों की तुलना अवस्ता से करने पर यह निर्विवाद सिद्ध होता है कि वेद और अवस्ता की भाषा बोलने वालों के पूर्वज किसी समय एक ही भाषा बोलते थे।

चित्रल और गिलगिट आदि में कुछ ऐसी भाषाएँ बोली जाती हैं, जो आर्यों ही की भाषाओं से उत्पन्न हुई हैं। पर वे संस्कृत से संबंध नहीं रखतीं। संस्कृत से उनका कोई संपर्क नहीं मालूम होता। जो लोग इन भाषाओं को बोलते हैं वे पंजाब में आ कर बसे हुए आर्यों की संतति नहीं मालूम होते। आर्य लोग, दक्षिण की तरफ, पंजाब में आ कर, फिर उत्तर की ओर काफिरिस्तान, गिलगिट, चित्रल और काश्मीर की उत्तरी तराइयों में नहीं गए। बहुत संभव है कि आर्यो का जो समूह अपने आदिम स्थान से चल कर दक्षिण की तरफ आया था, उसका कुछ अंश अलग हो कर, आक्सस नदी के किनारे-किनारे पामीर पहुँचा हो और वहाँ से गिलगिट और चित्रल आदि में बस गया हो। खोवार, वशगली, कलाशा, पशाई, लगमानी आदि भाषाएँ या बोलियाँ जो काश्मीर के उत्तरी प्रदेशों में बोली जाती हैं, उनका संस्कृत से कुछ भी लगाव नहीं है। इनमें कुछ साहित्य भी नहीं है। और न इनके लिखने की कोई लिपि ही अलग है। जहाँ तक खोज की गई है उस से यही मालूम होता है कि ये भाषाएँ संस्कृत से उत्पन्न नहीं हुईं। यहाँ संस्कृत से मतलब उस पुरानी संस्कृत से है, जिसे पंजाब में रहने वाले आर्य बोलते थे। लगमानी आदि असंस्कृत आर्य-भाषा बोलने वालों की संख्या इस देश में बहुत ही कम है। 1901 ईसवीं में वह सिर्फ 54, 425 थी।

इस तरह आर्य-भाषाओं के दो भेद हुए। एक असंस्कृत आर्य-भाषाएँ, दूसरी संस्कृतोत्पन्न आर्य-भाषाएँ। ऊपर एक जगह आर्य-भाषाएँ बोलने वालों की संख्या जो दी गई है उसमें असंस्कृत आर्य-भाषाएँ बोलने वालों की संख्या शामिल है।

उसे निकाल डालने से संस्कृतोत्पन्न आर्य-भाषाएँ बोलने वालों की संख्या 219, 726, 225 रह जाती है।

कुछ दिन हुए लंदन की रायल एशियाटिक सोसायटी ने एक पुस्तक प्रकाशित की है। उसमें उत्तर-पश्चिमी भारत की पिशाच-भाषाओं का वर्णन है। उसमें लिखा है कि असंस्कृत आर्य-भाषाएँ पुरानी पैशाची प्राकृत से निकली हैं। यहाँ उन्हीं पैशाची प्राकृतों से मतलब है, जिनका वर्णन वररुचि ने किया है।

❑❑❑